सत्य ही ईश्वर है

(ईश्वर, ईश्वर-साक्षात्कार अथवा अनुभव और ईश्वर-परायण
जीवन सम्बन्धी गांधीजी के लेखों और भाषणों से चुने हुए वचन)

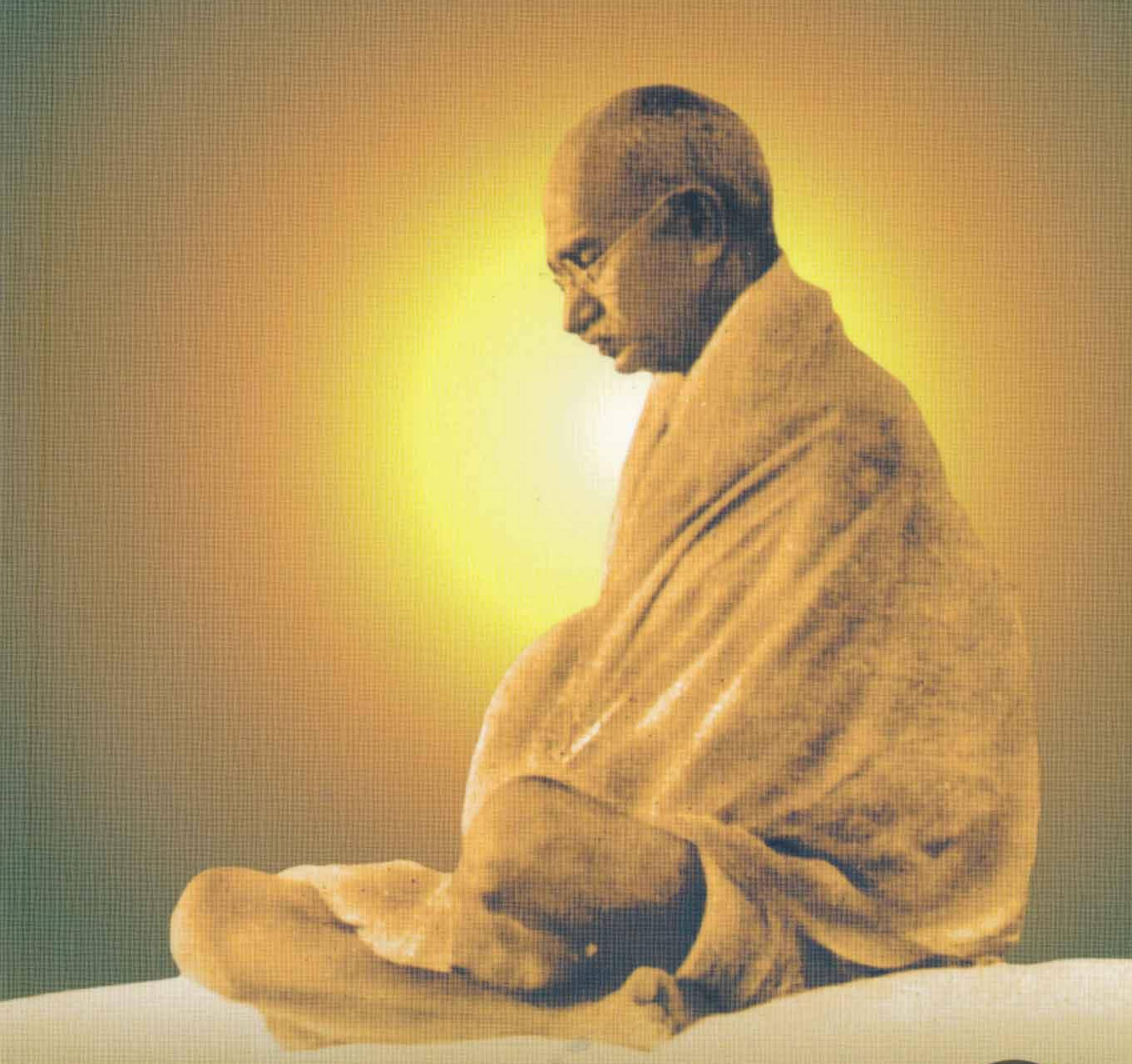

गांधीजी

नवजीवन

सत्य ही ईश्वर है

[ईश्वर, ईश्वर-साक्षात्कार अथवा अनुभव और
ईश्वर-परायण जीवन सम्बन्धी गांधीजी के लेखों और भाषणों से चुने हुए वचन]

गांधीजी

संपादक
आर. के. प्रभु

प्रथम आवृत्ति, प्रति ५,०००, १९५७

ISBN 978-81-7229-236-2

मुद्रक और प्रकाशक
विवेक जितेन्द्र देसाई
नवजीवन मुद्रणालय
अहमदाबाद – ३८० ०१४
फोन : ०७९-२७५४०६३५, २७५४२६३४
E-mail :sales@navajivantrust.org | Website :www.navajivantrust.org

प्रकाशक का निवेदन

गांधीजी द्वारा जीवन के विविध क्षेत्रों में प्राप्त की हुई सिद्धियों से संसार आश्चर्यचकित हो गया है, लेकिन उन्होंने इन सिद्धियों को प्राप्त करने की शक्ति कैसे पाई और उसका विकास कैसे किया, यह जानने की अभिलाषा संसारभर के लोग रखते हैं |

गांधीजी के जीवन और उनकी साधना के विषय में विचार करने से मालूम होता है कि यह शक्ति उन्हें सत्य की आराधना और ईश्वर-विषयक दृढ़ श्रद्धा से प्राप्त हुई थी | उनके साधना-काल में सत्य तथा ईश्वर-तत्त्व सम्बन्धी उनकी भावना और विचारों का धीरे-धीरे विकास होता गया | पहले वे मानते थे और कहते थे कि ईश्वर सत्य है | बाद में वे कहने लगे कि 'सत्य ही ईश्वर है |' गांधीजी की इस भावना का तथा विचारों का विकास कैसे हुआ, यह जानने से प्रत्येक जिज्ञासु को और साधारण मनुष्य को यह बात समझ में आती है कि जीवन के कानून अर्थात ईश्वर-तत्त्व क्या है |

श्री आर. के. प्रभु ने गांधीजी के इन विषयों से सम्बन्ध रखनेवाले वचनों का संग्रह अंग्रेज़ी में किया है, जो नवजीवन ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित हो चुका है | श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने उस संग्रह की जो प्रस्तावना लिखी है, उससे लोकशिक्षण की दृष्टि से इस पुस्तक का महत्त्व समझ में आता है | उनकी प्रस्तावना इस प्रकार है :

नवजीवन के व्यवस्थापक-ट्रस्टी प्रचलित फैशन और भ्रम के शिकार हो गये हैं | वे चाहते हैं कि गांधीजी की धर्म और ईश्वर-सम्बन्धी रचनाओं में से चुने गये अंशों के संग्रह के लिए मैं दो शब्द लिखूँ | यह विषय और मूल लेखक दोनों ही ऐसे हैं कि श्री जीवणजी को यह 'भूमिका की भूख' नहीं होना चाहिए थी ! परन्तु फैशन इतना प्रबल है कि इन सब बातों के बावजूद वे भी दूसरों जैसा ही कर रहे हैं और मुझसे यह सर्वथा अनावश्यक काम करा रहे हैं |

व्यक्ति और राष्ट्र दोनों के लिए ईश्वर और इसीलिए धर्म साधारण स्वस्थ जीवन की मौलिक आवश्यकताएं हैं | इस पुस्तक में पाठक इन विषयों पर गांधीजी को अपने जीवन के अत्यंत परिपक्व काल के तीस वर्षों में विभिन्न अवसरों पर अपने हृदय से बोलते हुए देखेंगे | एक आधुनिक महापुरुष, जिसने अपने जीवन में बहुत बड़े-बड़े काम किये, ईश्वर और धर्म के विषय पर क्या सोचता था, यह बात इस कठिन काल में शिक्षित स्त्री-पुरुषों के लिए बोधप्रद सिद्ध हुए बिना नहीं रह सकती |

अन्य प्रचलित धर्मों की पृष्ठभूमि पर मंदिर या मूर्तिपूजा का समर्थन करते हुए गांधीजी लिखते हैं : "हम मानव-परिवार के सब मनुष्य दार्शनिक नहीं हैं | किसी न किसी तरह हमें कोई ऐसी वस्तु चाहिए जिसे हम छू सकें, जिसे हम देख सकें, जिसके सामने हम घुटने टेक सकें | इसका कोई महत्त्व नहीं कि

वह चीज़ कोई पुस्तक है या पत्थर की खाली ईमारत है या पत्थर की ऐसी इमारत है जिसमें अनेक मूर्तियाँ निवास करती हों |"

एक दूसरी जगह वे कहते हैं: ''हिन्दू धर्म ऐसे असीम महासागर की तरह है, जिसमें असंख्य अमूल्य रत्न भरे हैं | उसमें जितनी गहरी डुबकी लगाइये उतने ही अधिक रत्न मिलेंगे |"

जो कोई यह समझना चाहता है कि हमारे राष्ट्रपिता कैसे पुरुष थे, उसे यह पुस्तक ज़रूर पढ़नी चाहिए | संभव है कोई धर्म के बारे में ऐसी बात न भी सीखना चाहे जो हमारे धर्मशास्त्रों अथवा अन्य धर्मग्रंथों में नहीं है | परन्तु यहाँ तो हमें एक महापुरुष के मन का एक पहलू मिलता है – एक ऐसे महापुरुष का जिससे हमें प्रेम है और जिसका हमारा राष्ट्र उपकार मानता है | इस पुस्तक का धार्मिक शिक्षा की किसी पुस्तक से कहीं अधिक मूल्य है |

चेन्नई (मद्रास), ११-४-१९५५

यह संग्रह हिन्दी पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, इसी खयाल से उसका यह हिन्दी संस्करण पाठकों के समक्ष रखते हुए हमें हर्ष होता है | हमें पूरा विश्वास है कि जीवन के उद्देश्य और उसकी सार्थकता के सम्बन्ध में प्रकट किये जानेवाले विचारों के भँवर में पड़े हुए लोगों को, खास करके नौजवानों को यह संग्रह मददगार साबित होगा |

इसका हिन्दी अनुवाद श्री रामनारायण चौधरी ने किया है |

अहमदाबाद, २५-३-१९५७

अनुक्रमणिका

प्रकाशक का निवेदन

१ मेरी खोज़

२ ईश्वर है

३ एक ईश्वर ही है

४ सत्य ही ईश्वर है

५ ईश्वर प्रेम है

६ ईश्वर सत्-चित् आनन्द है

७ ईश्वर और प्रकृति

८ ईश्वर दरिद्रनारायण के रूप में

९ ईश्वर की आवाज़

१० ईश्वर का साक्षात्कार

११ अहिंसा का मार्ग

१२ प्रार्थना – धर्म का सार

१३ प्रार्थना क्यों ?

१४ प्रार्थना कैसे, किसकी और कब करें ?

१५ उपवास

१६ शाश्वत द्वंद्व-युद्ध

१७ आत्मशुद्धि

१८ मौन का महत्त्व

१९ धर्मों की समानता

२० सहिष्णुता

२१ धर्म-परिवर्तन

२२ मैं हिंदू क्यों हूँ ?

२३ बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम

२४ ईश्वर और देवता

२५ मंदिर और मूर्तियाँ

२६ वृक्षपूजा

२७ बुद्धि और श्रद्धा

२८ धर्मग्रंथ

२९ गीता का संदेश

३० सत्य में सौन्दर्य

३१ रामनाम

३२ प्राकृतिक चिकित्सा

३३ प्राणीमात्र की एकता

३४ ब्रह्मचर्य क्या है ?

३५ ब्रह्मचर्य के उपाय

३६ विवाह एक धार्मिक संस्कार है

३७ अपरिग्रह का धर्म

३८ काम ही पूजा है

३९ सर्वोदय

४० अणु-बम और अहिंसा

४१ संसार में शांति

४२ स्फुट विचार

संग्रह में दिये गये उद्धरणों के मूल स्रोत

१

मेरी खोज़

मैं केवल सत्य का शोधक हूँ | मेरा दावा है कि मुझे सत्य का रास्ता मिल गया है | मेरा दावा है कि मैं सत्य को पाने का सतत प्रयत्न कर रहा हूँ | परंतु मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे अभी तक वह मिला नहीं है | सत्य को पूरी तरह प्राप्त कर लेना अपने को और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेना है, अर्थात संपूर्ण हो जाना है | मुझे अपनी अपूर्णताओं का दुखद भान है | और इसी में मेरा सारा बल समाया हुआ है, क्योंकि अपनी मर्यादाओं को जान लेना मनुष्य के लिए दुर्लभ वस्तु है |

यंग इंडिया, १७-११-१९२१

अगर मैं पूर्णता प्राप्त कर चुका होता, तो मैं मानता हूँ कि मुझे अपने पड़ोसियों के – आसपास के लोगों के दुखदर्द का वैसा अनुभव नहीं होता, जैसा कि अभी मुझे होता है | पूर्णता की स्थिति में मैं उनके दुखों को देखता, देखकर उन्हें अपने ध्यान में रखता, उपाय का निर्देश कर देता और अपने असंदिग्ध सत्य के बल से लोगों द्वारा उस पर अमल कराता | परंतु अभी तक मुझे उतना ही धुंधला दिखाई देता है जितना काँच में से दिखाई देता है; और इसीलिए मुझे धीरे-धीरे और परिश्रमपूर्ण क्रियाओं द्वारा अपनी बात मनवानी पड़ती है और फिर भी हमेशा उसमें सफलता नहीं मिलती | ऐसी हालत में यह जानते हुए कि देश में ऐसा दुख फैला हुआ है जो दूर किया जा सकता है और यह देखते हुए कि विश्व-नियन्ता की आँख के नीचे ही नर-कंकाल मौजूद हैं, अगर मैं भारत के इन करोड़ों पीड़ित किन्तु मूक मानव-प्राणियों के साथ हमदर्दी न रखूँ और उनके दुख से दुखी न होऊँ, तो मैं अपनी मनुष्यता से गिर जाऊँगा |

यंग इंडिया, १७-११-१९२१

मैं तो अपने पथ पर कठिनाई से बढ़ रहा एक ऐसा दुर्बल प्राणी हूँ, जो पूरी तरह शुद्ध और सात्त्विक बनने के लिए तड़प रहा है, जो पूरी तरह मन-कर्म-वचन से सत्यपरायण और अहिंसक बनना चाहता है, परंतु जिस आदर्श को वह सच्चा मानता है उस तक पहुँचने में सदा असफल रहता है | यह एक कष्टपूर्ण चढ़ाई है, परंतु मेरे लिए इसका कष्ट एक सच्चा आनन्द है | ऊपर की ओर एक-एक कदम बढ़ाने पर मुझे पहले से ज्यादा शक्ति महसूस होती है और अगला कदम उठाने की योग्यता प्राप्त होती है |

यंग इंडिया, ९-४-१९२५

मुझे रास्ता मालूम है | वह कठिन और तंग है | वह खांडे की धार की तरह दुर्गम है | मुझे उस पर चलने में मजा आता है | जब फिसल जाता हूँ तो रोता हूँ | परन्तु ईश्वर का अभय-वचन है कि 'जो प्रयत्न

करता है उसका कभी नाश नहीं होता |' मुझे इस वचन में अटूट श्रद्धा है | इसीलिए यद्यपि मुझे अपनी कमजोरी के कारण हजार बार असफलता मिलती है, फिर भी मैं श्रद्धा नहीं छोडूँगा और आशा रखूँगा कि किसी न किसी दिन जब इंद्रियाँ पूरी तरह मेरे काबू में आ जायेंगी तब मुझे उस प्रकाश का दर्शन अवश्य होगा |

यंग इंडिया, १७-६-१९२६

मैंने उस अंतर्यामी को देखा नहीं है और न उसे जाना है | मैंने ईश्वर में दुनिया का जो विश्वास है उसी को अपना लिया है, और चूँकि मेरी श्रद्धा अमिट है इसलिए उस श्रद्धा को मैं अनुभव के समान समझता हूँ | परंतु चूँकि इसके खिलाफ यह आक्षेप किया जा सकता है कि श्रद्धा को अनुभव बताना सत्य का अपलाप है, इसीलिए शायद यह कहना अधिक सही होगा कि ईश्वर में अपने विश्वास का ठीक वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ३४१

मेरा दावा है कि मैं बचपन से ही सत्य का पुजारी हूँ | मेरे लिए यह सबसे सहज और स्वाभाविक वस्तु थी | मेरी भक्तिपूर्ण खोज़ ने मुझे 'ईश्वर सत्य है' के प्रचलित मंत्र के बजाय 'सत्य ही ईश्वर है' का अधिक गहरा मंत्र दिया | यह मंत्र मुझे ईश्वर को मानो अपनी आँखों के सामने प्रत्यक्ष देखने की क्षमता प्रदान करता है | मैं अनुभव करता हूँ कि वह मेरी रग-रग में समाया हुआ है |

हरिजन, ९-८-१९४२

अहिंसा मेरा ईश्वर है और सत्य मेरा ईश्वर है | जब मैं अहिंसा को ढूँढ़ता हूँ तो सत्य कहता है : 'मेरे द्वारा उसे खोजो |' जब मैं सत्य की तलाश करता हूँ तो अहिंसा कहती है : 'मेरे जरिये उसे खोजो |'

यंग इंडिया, ४-६-१९२५

ऐसे सर्वव्यापी सत्यनारायण का साक्षात्कार करने के लिए मनुष्य के मन में छोटे से छोटे प्राणी के प्रति अपने ही जैसा प्रेम होना चाहिए | और जो मनुष्य इसकी आकांक्षा रखता है वह जीवन के किसी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता | इसी कारण से मेरे सत्यप्रेम ने मुझे राजनीति के क्षेत्र में घसीट लिया है; और मैं बिना किसी संकोच के किन्तु पूरी नम्रता के साथ कह सकता हूँ कि जो लोग यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है वे नहीं जानते कि धर्म का क्या अर्थ है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६१५

मैं मानव-जाति की सेवा के द्वारा ईश्वर-दर्शन का प्रयत्न कर रहा हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि ईश्वर न तो ऊपर स्वर्ग में है, न नीचे किसी पाताल में; वह तो हर एक के हृदय में बिराजमान है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६१५

मुझे पृथ्वी के नश्वर राज्य की कोई आकांक्षा नहीं है | मैं तो स्वर्ग के राज्य अर्थात मोक्ष के लिए प्रयत्न कर रहा हूँ | अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए मुझे किसी गिरिगुफा की शरण लेने की आवश्यकता नहीं है | अगर मैं समझ सकूँ तो वह गुफा मेरे भीतर ही मौजूद है | गुफावासी गुफा में रहते हुए भी मन के महल बना सकता है, जब कि जनक जैसा महल में रहनेवाला ऐसा नहीं करता | गुफा में रहनेवाला विचार के पंखों पर बैठकर संसार का चक्कर लगाता रहे तो उसे शान्ति नहीं मिलती | लेकिन जनक जैसे लोग 'शान-शौकत' से रहते हुए भी अकल्पनीय शान्ति प्राप्त कर सकते हैं | मेरे लिए मोक्ष का मार्ग यही है कि मैं अपने देश की और देश के द्वारा मानव-जाति की सेवा के लिए अविश्रान्त परिश्रम करता रहूँ | मैं सब प्राणियों के साथ एकता स्थापित करना चाहता हूँ |

यंग इंडिया, ३-४-१९२४

मैं न केवल मानव कहलानेवाले प्राणियों के साथ ही भाईचारा या एकता महसूस करना चाहता हूँ, बल्कि सब प्राणियों के साथ, यहाँ तक कि पृथ्वी पर रेंगनेवाले जीवों के साथ भी एकता साधना चाहता हूँ | आपको आघात न पहुँचे तो मैं यह कहूँगा कि मैं पृथ्वी पर रेंगनेवाले प्राणियों के साथ एकता इसीलिए चाहता हूँ कि हम एक ही ईश्वर की सन्तान होने का दावा करते हैं, और अगर ऐसा है तो नाम-रूप कुछ भी हों, समस्त प्राणी वास्तव में एक ही हैं |

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

'गांधीवाद' जैसी कोई वस्तु नहीं है; और मैं अपने पीछे कोई संप्रदाय छोड़कर नहीं जाना चाहता | मेरा यह दावा नहीं है कि मैंने कोई नया सिद्धान्त या धर्म निकाला है | मैंने अपने ढंग से केवल सनातन सत्यों को दैनिक जीवन और उसकी समस्याओं पर लागू करने की कोशिश की है | सत्य और अहिंसा अनादि काल से चले आये हैं | मैंने केवल भरसक विशाल पैमाने पर इन दोनों के प्रयोग करने की कोशिश की है | ऐसा करते हुए मैंने कभी कभी भूलें की हैं, और अपनी भूलों से शिक्षा प्राप्त की है | इस प्रकार जीवन और उसकी समस्यायें मेरे लिए सत्य और अहिंसा के अभ्यास के अनेक प्रयोग बन गयी हैं |

हरिजन, २८-३-१९३६

सत्य और अहिंसा में मेरी श्रद्धा दिन-दिन बढ़ रही है | और ज्यों ज्यों मैं उन्हें अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न कर रहा हूँ, त्यों-त्यों प्रत्येक क्षण मेरा भी विकास हो रहा है | मुझे उनके नये-नये गूढ़ार्थ सूझ रहे हैं | मुझे उनमें रोज़ नई रोशनी नजर आती है और नये-नये अर्थ मालूम होते हैं |

हरिजन, २-३-१९४०

२

ईश्वर है

एक अनिर्वचनीय रहस्यमयी शक्ति है जो सर्वत्र व्याप्त है | मैं उसे अनुभव करता हूँ, यद्यपि देखता नहीं हूँ | यह अदृश्य शक्ति अपना अनुभव तो कराती है, परंतु उसका कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता; क्योंकि जिन वस्तुओं का मुझे अपनी इंद्रियों द्वारा ज्ञान होता है उन सबसे वह बहुत भिन्न है | वह इंद्रियों की पहुँच के बाहर है |

परंतु एक खास हद तक ईश्वर के अस्तित्व को बुद्धि के द्वारा भी साबित किया जा सकता है | साधारण मामलों में भी हम जानते हैं कि लोगों को यह पता नहीं होता कि कौन उन पर शासन करता है या क्यों करता है और कैसे करता है | फिर भी वे जानते हैं कि कोई ऐसी शक्ति अवश्य है जो उन पर शासन करती है | अपने पिछले साल के मैसूर के दौरे में मैं कई ग़रीब देहातियों से मिला और पूछने पर मुझे पता चला कि उन्हें यह मालूम नहीं है कि मैसूर में किसका राज्य है | उन्होंने केवल इतना कहा कि किसी देवता का राज्य है | अगर उन ग़रीब लोगों का ज्ञान अपने राजा के बारे में इतना सीमित है, तो मुझे – मैं ये ग़रीब लोग अपने राजा से जितने छोटे हैं उसकी अपेक्षा ईश्वर से अनेक गुना छोटा हूँ – आश्चर्य न होना चाहिए, अगर मैं राजाओं के राजा ईश्वर की हस्ती को अनुभव न करूँ | फिर भी जैसा उन ग़रीब देहातियों को मैसूर के बारे में अनुभव होता था, वैसा ही मुझे भी अवश्य अनुभव होता है कि विश्व में व्यवस्था है, हरएक प्राणी और प्रत्येक वस्तु पर शासन करनेवाला एक अटल नियम है | और यह कोई अन्धा नियम नहीं है | क्योंकि सजीव प्राणियों के आचरण को नियमित करनेवाला कोई नियम अन्धा नहीं हो सकता; और सर जगदीशचंद्र बसु की अद्‌भुत खोजों से अब तो यह भी साबित किया जा सकता है कि जड़ पदार्थों में भी जीवन है | सब प्राणियों का शासन करनेवाला यह नियम ही ईश्वर है | नियम और नियामक एक ही हैं | मुझे नियम या नियामक के बारे में बहुत थोड़ा ज्ञान है, केवल इसीलिए मैं उनके अस्तित्व से इनकार नहीं कर सकता | जैसे किसी पार्थिव शक्ति के अस्तित्व का इनकार करने से या उसके अज्ञान से मेरा कोई लाभ नहीं होगा, इसी तरह ईश्वर और उसके नियम को न मानने से मैं उसके अमल से मुक्त नहीं हो जाऊँगा; जब कि जिस तरह किसी सांसारिक राज्य को स्वीकार कर लेने से उसके अधीन जीवन आसान हो जाता है, उसी प्रकार दैवी सत्ता को नम्र होकर चुपचाप स्वीकार कर लेने से जीवन की यात्रा सरल हो जाती है |

मैं अस्पष्ट तौर पर यह ज़रूर अनुभव करता हूँ कि जब मेरे चारों ओर हर चीज़ हमेशा बदल रही है, नष्ट हो रही है, तब इस सारे परिवर्तन के पीछे कोई चेतन शक्ति ऐसी है जो बदलती नहीं है, जो सबको

धारण किये हुए है, जो सर्जन करती है, संहार करती है और फिर नया सर्जन करती है | यह जीवनदायी शक्ति ही ईश्वर है | और चूँकि केवल इंद्रियों द्वारा दिखाई देनेवाली और कोई भी चीज़ न स्थायी है और न हो सकती है, इसीलिए एकमात्र ईश्वर का ही अस्तित्व है |

यह शक्ति कल्याणकारी है या अकल्याणकारी ? मैं देखता हूँ कि यह सर्वथा कल्याणकारी है, क्योंकि मुझे दिखाई देता है कि मृत्यु के बीच जीवन कायम रहता है, असत्य के बीच सत्य और अंधकार के बीच प्रकाश स्थिर रहता है | इससे मुझे पता चलता है कि ईश्वर जीवन है, सत्य है और प्रकाश है | वही प्रेम है | वही परम मंगल है |

परंतु जो ईश्वर केवल बुद्धि को संतोष देता है वह ईश्वर नहीं है | ईश्वर तभी ईश्वर है जब वह हृदय पर शासन करता हो और उसका रूपान्तर करता हो | उसे अपने भक्त के छोटे से छोटे काम में प्रगट होना चाहिए | यह तभी हो सकता है जब पाँचों इंद्रियों से होनेवाले ज्ञान से भी अधिक वास्तविक रूप में उसका निश्चित साक्षात्कार प्राप्त किया जाय | इंद्रियों से होनेवाला ज्ञान हमें कितना ही वास्तविक दिखाई दे, वह झूठा और भ्रमपूर्ण हो सकता है, और अकसर होता है | लेकिन अतीन्द्रिय ज्ञान अचूक होता है | इसका प्रमाण बाहरी सबूतों से नहीं मिलता | परंतु जिन लोगों ने ईश्वर के वास्तविक अस्तित्व को अपने भीतर अनुभव किया है, उनके आचरण और चरित्र में होनेवाले परिवर्तन से मिलता है |

ऐसा प्रमाण सब देशों में होनेवाले पैगम्बरों और ऋषियों की अटूट परंपरा के अनुभवों में पाया जाता है | इस प्रमाण को अस्वीकार करना अपने आपको न मानने के बराबर है |

इस तरह के साक्षात्कार की पूर्वगामी शर्त है – अटल श्रद्धा | जो व्यक्ति अपने अन्दर ईश्वर की उपस्थिति के सत्य की जाँच करना चाहता है, उसे पहले जीवित श्रद्धा का विकास करना चाहिए | श्रद्धा के द्वारा ही वह ऐसा कर सकता है | और चूँकि स्वयं श्रद्धा किसी बाह्य प्रमाण से साबित नहीं की जा सकती, इसीलिए सबसे सुरक्षित मार्ग यह है कि संसार के नैतिक शासन में और इसीलिए नैतिक कानून में, सत्य और प्रेम के नियम की सर्वोपरिता में, विश्वास किया जाय | जहाँ सत्य और प्रेम के विपरीत सब बातों का सर्वथा त्याग करने का स्पष्ट संकल्प है, वहाँ श्रद्धा रखना सबसे सुरक्षित उपाय है |

किसी बौद्धिक उपाय से मैं दुनिया में बुराई के अस्तित्व का कारण नहीं समझा सकता | ऐसा करने की इच्छा रखना मानो ईश्वर की बराबरी करना है | इसीलिए मैं नम्रतापूर्वक यह मान लेता हूँ कि बुराई का अस्तित्व है | और मैं ईश्वर को अत्यन्त सहनशील और धैर्यशाली इसीलिए कहता हूँ कि वह संसार में बुराई होने देता है | मैं जानता हूँ कि उसमें बुराई नहीं है | उसने बुराई पैदा तो की है, परंतु वह उससे अछूता है |

मैं यह भी जानता हूँ कि अगर मैं प्राणों की बाजी लगाकर भी बुराई के खिलाफ युद्ध नहीं करूँगा तो मुझे ईश्वर का ज्ञान कभी नहीं होगा | मेरा यह विश्वास मेरे अपने ही नम्र और सीमित अनुभव से दृढ़ हुआ है | मैं जितना शुद्ध बनने की कोशिश करता हूँ, उतनी ही ईश्वर से निकटता अनुभव करता हूँ | जब मेरी श्रद्धा आज की तरह नाममात्र की न रहकर हिमालय की भांति अचल और उसके शिखर पर चमकनेवाली बर्फ की तरह धवल और तेजस्वी हो जायेगी, तब मैं उससे कितनी अधिक निकटता अनुभव करूँगा ? तब तक मैं अपने पत्रलेखक से कहूँगा कि वह कार्डिनल न्यूमैन के साथ उसका यह अनुभव से निकला हुआ भजन गाये :

"हे प्रेमल ज्योति, चारों ओर घिरे हुए अंधकार में तू मुझे रास्ता बता |

रात अंधेरी है और मैं घर से दूर हूँ | तू मुझे रास्ता बता |

तू मेरे पैरों को थामे रह, मैं दूर का दृश्य देखना नहीं चाहता;

मेरे लिए एक कदम ही काफी है |"

यंग इंडिया, ११-१०-१९२८

३

एक ईश्वर ही है

मेरी दृष्टि में ईश्वर सत्य और प्रेम है; ईश्वर नीति और सदाचार है; ईश्वर अभय है | ईश्वर प्रकाश और जीवन का स्रोत है, फिर भी इन सबसे ऊपर और परे है | ईश्वर अन्तरात्मा है | वह नास्तिक की नास्तिकता भी है, क्योंकि अपने नि:सीम प्रेम के कारण वह उसे भी रहने देता है | वह हृदयों की जाँच करता है | वह वाणी और बुद्धि से परे है | वह हमें और हमारे हृदयों को खुद हमसे भी अधिक जानता है | वह जो कुछ हम कहते हैं उसी को नहीं मान लेता, क्योंकि उसे मालूम है कि हममें से कुछ जान-बूझकर और दूसरे अनजाने अकसर जो कहते हैं वह करते नहीं | जिन्हें उसके व्यक्तिगत अस्तित्व की ज़रूरत है, उनके लिए वह व्यक्तिरूप है | जिन्हें उसके स्पर्श की आवश्यकता है, उनके लिए वह साकार है | वह शुद्धतम सार है | जिनमें श्रद्धा है उनके लिए वह केवल सत्स्वरूप है | वह सब मनुष्यों के लिए प्रत्येक की भावना के अनुसार सब कुछ है | वह हमारे भीतर है और फिर भी हमसे ऊपर और परे है | कोई कांग्रेस में से 'ईश्वर' शब्द को निकाल सकता है, परन्तु स्वयं ईश्वर को निकाल देने की शक्ति किसी में नहीं है | ईश्वर के नाम पर कहना और शपथपूर्वक कहना, इन दोनों में क्या फर्क है ? और जिसे conscience (सदसद्-विवेक की सहज शक्ति) कहा जाता है, वह सरल तीन अक्षरों के समूह 'ईश्वर' शब्द का है | खींच-तानकर किया गया किन्तु अपूर्ण अर्थ है | अगर उसके नाम पर बीभत्स दुराचार या अमानुषिक अत्याचार किये जाते हैं, तो इससे ईश्वर का अस्तित्व मिट नहीं सकता | वह बड़ा सहनशील है | वह धैर्यवान है, परंतु भयंकर भी है | वह इस लोक में और परलोक में सबसे कठोर व्यक्ति है | वह हमारे साथ वही बरताव करता है, जो हम अपने मनुष्य और पशु पड़ोसियों के साथ करते हैं | उसके सामने अज्ञान का बहाना नहीं चल सकता | पर साथ ही वह क्षमाशील भी है, क्योंकि वह हमें पश्चात्ताप का हमेशा मौका देता है | वह सबसे बड़ा लोकतंत्रवादी है, क्योंकि उसने हमें बुराई और अच्छाई के बीच अपना चुनाव खुद कर लेने की पूरी छूट दे रखी है | उसके बराबर आज तक कोई जालिम भी नहीं हुआ है, क्योंकि वह कई बार हमारे मुँह तक आये हुए कौर को छीन लेता है, और इच्छा-स्वातंत्र्य की आड़ में हमें इतनी अपर्याप्त छूट देता है कि हमारी बेवकूफी पर वह हँस सके | इसीलिए हिन्दू धर्म इसे उसकी लीला या माया कहता है | हम नहीं हैं, एक वही है | और अगर हम चाहते हैं कि हमारा अस्तित्व रहे, तो हमें सदा उसके गुणगान करने होंगे और उसकी इच्छा पर चलना होगा | हम उसकी बंसी की तान पर नाचते रहें तो कल्याण ही कल्याण है |

यंग इंडिया, ५-३-१९२५

अद्वैतवाद और ईश्वर

(एक मित्र के प्रश्नों के उत्तर में गांधीजी ने लिखा:)

मैं अद्वैतवादी हूँ, फिर भी द्वैतवाद का समर्थन करता हूँ | जगत हर क्षण बदल रहा है और इसीलिए मिथ्या है, उसका कोई स्थायी अस्तित्व नहीं है | परंतु सदा बदलते रहने पर भी उसमें कोई चीज़ ऐसी है जो कायम रहती है, इसीलिए वह उस हद तक सत्य है | इस कारण मुझे उसे सत्य और असत्य दोनों कहने में और इस प्रकार स्वयं अनेकान्तवादी या स्याद्वादी कहलाने में कोई आपत्ति नहीं | परंतु मेरा स्याद्वाद पंडितों का स्याद्वाद नहीं है, उसकी मेरी अपनी विशेष कल्पना है | मैं पंडितों से विवाद नहीं कर सकता | मेरा यह अनुभव रहा है कि अपने दृष्टिकोण से मैं सदा सही होता हूँ और अपने ईमानदार आलोचकों की नज़र में अकसर ग़लती पर होता हूँ | मैं जानता हूँ कि अपनी-अपनी दृष्टि से हम दोनों ही सही होते हैं | और इसीलिए मैं अपने विरोधियों अथवा आलोचकों की नीयत पर शक करने से बच जाता हूँ | जिन सात अंधों ने हाथी का सात तरह से अलग-अलग वर्णन किया, वे अपने अपने दृष्टिकोण से ठीक थे, एक-दूसरे के दृष्टिकोण से ग़लत थे और जो आदमी हाथी को जानता था उसके खयाल से सही भी थे और ग़लत भी थे | मैं सत्य की अनेकरूपता के इस सिद्धान्त को बहुत पसन्द करता हूँ | इसी सिद्धान्त ने मुझे मुसलमान को उसी की दृष्टि से और ईसाई को उसी की नजर से समझना सिखाया है | पहले मुझे अपने विरोधियों के अज्ञान पर क्रोध होता था | अब मैं उनसे प्रेम करता हूँ, क्योंकि अब मुझे वह दृष्टि मिल गई है, जिससे मैं अपने को दूसरों की नजर से और दूसरों को अपनी नजर से देख सकता हूँ | मैं सारे विश्व को अपने प्रेमालिंगन में बाँधना चाहता हूँ | मेरा अनेकान्तवाद मेरे सत्य और अहिंसा के सिद्धान्त का फल है |

मैं ईश्वर को जैसा मानता हूँ ठीक वैसा ही उसका वर्णन करता हूँ | मैं उसे स्रष्टा और अस्रष्टा दोनों मानता हूँ | यह भी मेरी सत्य की अनेकरूपता के सिद्धान्त की स्वीकृति का परिणाम है | जैनों के मंच से मैं ईश्वर के अस्रष्टा होने का समर्थन करता हूँ और रामानुज के मंच से स्रष्टा होने का | सच तो यह है कि हम सब अकल्पनीय की कल्पना करते हैं, अवर्णनीय का वर्णन करते हैं और अज्ञात को जानना चाहते हैं और इसीलिए हमारी वाणी लड़खड़ाती है, अपूर्ण सिद्ध होती है और बहुधा परस्परविरोधी होती है | इसीलिए वेदों ने ब्रह्म को 'नेति' 'नेति' कहा है | परंतु वह – उसे 'स:' कहो या 'तत्' – नेति अर्थात् 'यह नहीं' है, फिर भी वह है अवश्य | अगर हम हैं, हमारे माता-पिता हैं और उनके भी माता-पिता थे, तो यह मानना भी उचित है कि इस सारी सृष्टि का भी कोई स्रष्टा है | अगर वह नहीं है तो हमारा भी कोई ठौर-ठिकाना नहीं है | यही कारण है कि हम सब एक स्वर से एक ईश्वर को परमात्मा, ईश्वर, शिव,

विष्णु, राम, अल्लाह, खुदा, दादा अहुरमज्द, जिहोवा और गॉड आदि भिन्न भिन्न असंख्य नामों से पुकारते हैं | वह एक भी है और अनेक भी; वह परमाणु से भी छोटा है और हिमालय से भी बड़ा है | वह महासागर की एक बूंद में भी समा जाता है और सातों समुद्र भी उसका पार नहीं पा सकते | बुद्धि उसे जानने में असमर्थ है | वह बुद्धि की पहुँच या पकड़ के बाहर है | परंतु इस मुद्दे का मुझे विस्तार करने की ज़रूरत नहीं है | मामले में श्रद्धा अत्यावश्यक है | मेरा तर्क असंख्य धारणाएँ बना और बिगाड़ सकता है | मुमकिन है कोई चतुर नास्तिक वाद-विवाद में मुझे हरा दे | परंतु मेरी श्रद्धा की गति मेरी बुद्धि से इतनी तेज़ है कि मैं सारे संसार को चुनौती देकर कह सकता हूँ कि 'ईश्वर था, है और सदा रहेगा |'

परंतु जो ईश्वर के अस्तित्व से इनकार करना चाहते हैं उन्हें ऐसा करने की आज़ादी है | वह दयालु और करुणामूर्ति है | वह कोई पार्थिव राजा नहीं जिसे अपनी सत्ता मनवाने के लिए सेना की ज़रूरत हो | वह हमें स्वतंत्रता देता है, पर उसकी करुणा हमें उसकी इच्छा का स्वीकार और पालन करने के लिए बाध्य करती है | लेकिन अगर हममें से कोई उसकी इच्छा के आगे झुकना पसन्द न करे तो वह कहता है: 'ऐसा ही हो, मत झुको | मेरा सूर्य तुम्हें कम प्रकाश नहीं देगा, मेरे बादल तुम्हारे लिए कम वर्षा नहीं करेंगे | मैं तुमसे जबरन् अपनी सत्ता नहीं मनवाऊँगा |' ऐसे परम कृपालु ईश्वर का अस्तित्व नादान लोग न मानें तो न मानें | मैं तो उन करोड़ों सयानों में से हूँ, जिनका उसमें विश्वास है, और उसे प्रणाम करने और उसका गौरव गाने में मैं कभी थकता नहीं |

यंग इंडिया, २१-१-१९२६

४

सत्य ही ईश्वर है

(लंदन की गोलमेज परिषद से लौटते हुए स्विट्ज़रलैंड की एक सभा में पूछे गये एक प्रश्न के उत्तर में गांधीजी ने कहा:)

आपने मुझसे पूछा है कि मैं सत्य को ईश्वर क्यों समझता हूँ | अपने बचपन में मुझे हिन्दू शास्त्रों में जिन्हें ईश्वर के सहस्र नाम कहा जाता है उनका जप करना सिखाया गया था | परंतु इन सहस्र नामों में ईश्वर की सारी नामावली समाप्त नहीं हो जाती | हम मानते हैं – और मेरे खयाल में यही सत्य है – कि जितने प्राणी हैं उतने ही ईश्वर के नाम हैं और इसीलिए हम यह भी कहते हैं कि ईश्वर अनाम है; और चूँकि ईश्वर के अनेक रूप हैं, इसीलिए हम उसे अरूप भी समझते हैं; और चूँकि वह हमसे कई वाणियों में बात करता है, इसीलिए हम उसे अवाक् समझते हैं; इत्यादि- इत्यादि | इसी तरह जब मैंने इस्लाम का अध्ययन किया तब मुझे पता लगा कि इस्लाम में भी ईश्वर के अनेक नाम हैं | जो लोग कहते थे कि ईश्वर प्रेम है, उनके साथ मैं भी कहता था कि ईश्वर प्रेम है | परंतु अपने हृदय की गहराई में मैं यही कहा करता था कि ईश्वर प्रेमरूप होगा, मगर सबसे ज्यादा तो ईश्वर सत्यरूप है | अगर मानव-वाणी के लिए ईश्वर का संपूर्ण वर्णन करना संभव हो, तो मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि मेरे अपने लिए तो ईश्वर सत्य है – सत्य शब्द ही उसका सर्वोत्तम वाचक है | परंतु दो वर्ष पूर्व मैं एक कदम और आगे बढ़ा; मैंने कहा कि न केवल ईश्वर सत्यरूप है, बल्कि सत्य ही ईश्वर है | ईश्वर सत्य है और सत्य ही ईश्वर है, इन दोनों वचनों के सूक्ष्म भेद को आप समझ लेंगे | इस नतीजे पर मैं सत्य की पचास वर्ष की दीर्घ, अनवरत और कठिन खोज़ के बाद पहुँचा हूँ | इसके बाद मुझे पता चला कि सत्य तक पहुँचने का निकटतम मार्ग प्रेम है | परन्तु मैंने यह भी पाया कि कम से कम अंग्रेजी भाषा में 'लव' (प्रेम) शब्द के अनेक अर्थ हैं; और विकार के अर्थ में मानवप्रेम तो एक मलिन चीज़ है, जो मनुष्य का पतन करती है | मैंने यह भी देखा कि अहिंसा के अर्थ में प्रेम के पुजारियों की संख्या दुनिया में इनी-गिनी ही है | परन्तु सत्य के बारे में दो अर्थ नहीं है और नास्तिकों तक ने सत्य की आवश्यकता या शक्ति स्वीकार की है | परन्तु सत्य को ढूँढ़ निकालने की अपनी लगन में नास्तिकों ने ईश्वर के अस्तित्व से भी इनकार करने में संकोच नहीं किया है और अपने दृष्टिकोण से उन्होंने ठीक ही किया है | इस तरह सोचते हुए मेरी समझ में आया कि ईश्वर सत्यरूप है, यह कहने के बजाय मुझे यह कहना चाहिए कि सत्य ही ईश्वर है | इस सम्बन्ध में मुझे चार्ल्स ब्रैडलो का नाम याद आता है | वे अपने को बहुत उत्साहपूर्वक नास्तिक बताया करते थे | परन्तु मैं उनके बारे में कुछ जानता हूँ, इसीलिए मैं उन्हें कभी नास्तिक नहीं कहूँगा | मैं उन्हें एक ईश्वर-भीरू मनुष्य कहूँगा, यद्यपि मैं जानता हूँ कि वे इस वर्णन को स्वीकार नहीं करेंगे | यदि मैं उनसे कहूँ कि "मि. ब्रैडलो आप एक सत्यभीरू मनुष्य हैं, इसीलिए ईश्वर-भीरू मनुष्य हैं', तो उनका

मुँह लाल हो जायेगा | मगर मैं यह कहकर कि सत्य ही ईश्वर है उनके विरोध को सहज ही ठंडा कर सकता हूँ | मैंने अनेक नौजवानों का विरोध इसी तरह ठंडा कर दिया है | 'ईश्वर सत्य है' कहने में एक दूसरी कठिनाई यह है कि ईश्वर का नाम करोड़ों लोगों ने लिया है और उसके नाम पर अवर्णनीय अत्याचार किये हैं | यह बात नहीं है कि सत्य के नाम पर वैज्ञानिक लोग क्रूरताएँ नहीं करते | मैं जानता हूँ कि सत्य और विज्ञान के नाम पर पशुओं की चीर-फाड़ के सिलसिले में उन पर कैसी अमानुषिक निर्दयताएँ की जाती हैं | सारांश यह कि ईश्वर का वर्णन किसी भी तरह किया जाय, उसमें कई कठिनाइयाँ हैं | परन्तु मनुष्य का मन एक सीमित वस्तु है और जब आप एक ऐसी सत्ता की कल्पना करते हैं, जो मनुष्य की समझने की शक्ति से परे हैं, तब आपको इन सीमाओं के भीतर रहकर ही प्रयत्न करना पड़ता है |

हिन्दू तत्त्वज्ञान में एक चीज़ और है; वह कहता है – एक ईश्वर ही है, उसके सिवा किसी और चीज़ की सत्ता नहीं है | यही सत्य आप इस्लाम के कलम में जोर के साथ कहा हुआ पाते हैं | वहाँ आपको साफ साफ कहा गया है कि एक ईश्वर है, और कुछ भी नहीं है | असल में अंग्रेजी शब्द Truth के लिए संस्कृत में जो शब्द है – यानी 'सत्य' - उसका शब्दार्थ ही 'जो है' है | इस कारण से और अन्य कई कारणों से, जो मैं आपको बता सकता हूँ, मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि 'सत्य ही ईश्वर है' यह व्याख्या मुझे सबसे अधिक सन्तोष देती है | और जब आप सत्य को ईश्वर के रूप में पाना चाहते हैं, तब उसका एकमात्र अनिवार्य साधन प्रेम अर्थात् अहिंसा ही है | और चूंकि मैं मानता हूँ कि अंत में साधन और साध्य समानार्थक शब्द हो जाते हैं, इसीलिए मुझे यह कहने में संकोच नहीं होगा कि ईश्वर प्रेम है |

'तो फिर सत्य क्या है ?' यह सवाल उठा |

प्रश्न कठिन है, परन्तु मैंने उसे अपने लिए यह कहकर हल कर लिया है कि जो हमारी अन्तरात्मा कहे वही सत्य है | आप पूछेंगे, तब विभिन्न लोग विभिन्न और विरोधी सत्यों की कल्पना कैसे करते हैं ? इसका उत्तर यह है कि मानव-मन असंख्य माध्यमों द्वारा काम करता है और मानव-मन का विकास हरएक में एक सा नहीं हुआ है, इसीलिए यह परिणाम तो आयेगा ही कि जो एक के लिए सत्य हो वह दूसरे के लिए असत्य हो | और इसीलिए जिन लोगों ने सत्य के प्रयोग किये हैं, वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि इन प्रयोगों में कुछ शर्तों का पालन करना ज़रूरी है | जैसे वैज्ञानिक प्रयोग सफलतापूर्वक करने के लिए अमुक वैज्ञानिक तालीम चाहिए, ठीक वैसे ही आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रयोग करने की योग्यता प्राप्त करने के लिए कठोर प्रारंभिक साधना ज़रूरी है | इसीलिए कोई अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ की बात करें, उसके पहले उसे अपनी मर्यादाएँ अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए | इस कारण अनुभव के आधार पर हमारा विश्वास है कि जो लोग ईश्वर के रूप में सत्य की व्यक्तिगत खोज़ करना चाहते हैं, उन्हें पहले कई व्रतों का पालन करना चाहिए; उदाहरणार्थ, सत्य, ब्रह्मचर्य – क्योंकि आप

सत्य और ईश्वर के लिए अपना प्रेम और किसी को नहीं दे सकते – अहिंसा, दरिद्रता, अपरिग्रह आदि | अगर आप अपने पर ये पाँचों व्रत लागू नहीं करते तो आपको यह प्रयोग शुरू ही न करना चाहिए | और भी कई व्रत-नियम आदि बताये गये हैं, परन्तु मैं उन सबकी चर्चा अभी नहीं करूँगा | इतना कहना काफी है कि जिन लोगों ने ये प्रयोग किये हैं, वे जानते हैं कि हरएक का अन्तरात्मा की आवाज़ सुनने का दावा करना उचित नहीं | लेकिन आज-कल हरएक आदमी यम-नियम की कोई भी तालीम लिए बिना ही अपने अंत:करण की आवाज़ के अधिकार का दावा करता है | इसके फलस्वरूप संसार को इतना असत्य प्रदान किया जा रहा है कि वह हैरान है | इसीलिए मैं आपसे सच्ची नम्रतापूर्वक इतना ही निवेदन कर सकता हूँ कि सत्य की प्राप्ति ऐसे किसी व्यक्ति को नहीं हो सकती जिसमें नम्रता की विपुल भावना न हो | अगर आप सत्य के महासागर के तल पर तैरना चाहते हैं, तो आपको शून्य बन जाना होगा | इससे आगे मैं इस मोहक मार्ग पर इस समय नहीं बढ़ सकूँगा |

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

५

ईश्वर प्रेम है

वैज्ञानिक हमें बताते हैं कि हमारी यह पृथ्वी जिन परमाणुओं से बनी है, उनमें उन्हें एक-दूसरे के साथ बांध रखनेवाली शक्ति न हो, तो वह चूर-चूर हो जायेगी और हमारा अस्तित्व मिट जायेगा | यह शक्ति जिस तरह जड़ पदार्थ में है, उसी तरह सारे चेतन प्राणियों में भी होनी चाहिए | चेतन प्राणियों को एक-दूसरे से बांध रखनेवाली, उन्हें जोड़ने और एक करनेवाली इस शक्ति का नाम है – प्रेम | उसे हम पिता-पुत्र में, भाई-बहन में और मित्र-मित्र में देखते हैं | परन्तु हमें प्राणीमात्र में उसका उपयोग करना सीखना है और उसके उपयोग में ही हमारा ईश्वर का ज्ञान समाया हुआ है | जहाँ प्रेम है वहाँ जीवन है; द्वेष नाश की ओर ले जाता है |

यंग इंडिया, ५-५-१९२०

यद्यपि प्रकृति में काफी अपकर्षण है, फिर भी वह जीती है आकर्षण के द्वारा | पारस्परिक प्रेम के आधार पर प्रकृति कायम है | मनुष्य विनाश के आधार पर नहीं जीता | स्वप्रेम उसे दूसरों को प्रेम करने और उनके हित का ध्यान रखने के लिए प्रेरित करता है | राष्ट्रों में एकता इसलिए होती है कि जिन व्यक्तियों से वे बनते हैं उनमें पारस्परिक प्रेम का तत्त्व काम करता है | जिस तरह हमने परिवार-धर्म का विस्तार करके राष्ट्रों का निर्माण किया है, उसी तरह किसी दिन हमें राष्ट्रधर्म का विस्तार करके उसे विश्वव्यापी बनाना होगा |

यंग इंडिया, २-३-१९२२

मैंने देखा है कि विनाश के बीच भी जीवन कायम रहता है, और इसीलिए मेरा विश्वास है कि विनाश के नियम से बड़ा कोई नियम अवश्य है | वह नियम प्रगट होगा तभी सुव्यवस्थित समाज की रचना सम्भव होगी और जीवन जीने योग्य होगा | और अगर वह नियम ही जीवन का सच्चा नियम है, तो हमें दैनिक जीवन में उस पर चलना होगा | जहाँ कहीं भी विसंवाद पैदा हो, जहाँ कहीं भी आपको किसी विरोधी का सामना करना पड़े, वहाँ आप उसे प्रेम से जीतिये | मैंने उक्त नियम अपने जीवन में इसी सादे ढंग से कार्यान्वित किया है | इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी तमाम मुश्किलें हल हो गई | मतलब इतना ही है कि मैंने पाया है कि प्रेम के कानून ने जो काम किया है वह विनाश के कानून ने कभी नहीं किया |

यंग इंडिया, १-१०-१९३१

मेरा विश्वास है कि मानव-जाति की कार्यशक्ति कुल मिलाकर हमें गिराने के लिए नहीं, परन्तु उठाने के लिए हैं; और यह परिणाम उस निश्चित, भले ही अज्ञात, कार्य का है जो प्रेम का कानून करता है | मानव-जाति कायम है इसी बात से जाहिर होता है कि बिखेरनेवाली शक्ति से मिलानेवाली शक्ति बड़ी है, दूर ले जानेवाली शक्ति से नजदीक लानेवाली शक्ति बड़ी है |

यंग इंडिया, १२-११-१९३१

अगर प्रेम या अहिंसा हमारे जीवन का धर्म नहीं है, ... तो समय-समय पर होनेवाली उन लड़ाइयों से हम बच नहीं सकते, जो भयंकरता में एक से एक बढ़कर होती हैं |

हरिजन, २६-९-१९३६

जितने धर्मोपदेशक गुरू आज तक हुए हैं, उन सबने इस नियम का थोड़े या बहुत जोर के साथ प्रचार किया है | यदि प्रेम जीवन का धर्म न होता, तो जीवन मृत्यु के बीच कायम ही न रहता | जीवन मृत्यु पर एक शाश्वत विजय है | अगर मनुष्य और पशु में कोई बुनियादी फर्क है तो यही है कि मनुष्य दिन-दिन इस धर्म को अधिकाधिक स्वीकार कर रहा है और अपने निजी जीवन में उसका पालन कर रहा है | संसार के प्राचीन और अर्वाचीन सभी सन्त अपने अपने ज्ञान और सामर्थ्य के अनुसार मनुष्य-जीवन के इसी सर्वश्रेष्ठ धर्म के जीवित दृष्टान्त थे | यह सच है कि हमारे भीतर का पशु बहुत बार विजयी होता है | परन्तु इससे वह धर्म अप्रमाणित नहीं हो जाता, उसके पालन की कठिनाई ज़रूर जाहिर होती है | लेकिन एक ऐसे धर्म के पालन का, जो सत्य जितना ही ऊँचा है, कठिन होना ही स्वाभाविक है | जब इस धर्म का पालन सार्वत्रिक हो जायेगा तब स्वर्ग की भांति पृथ्वी पर भी ईश्वर का राज्य हो जायेगा | यह याद दिलाने की ज़रूरत नहीं कि पृथ्वी और स्वर्ग सब हमारे भीतर ही हैं | अपने भीतर की पृथ्वी को हम जानते हैं, पर अपने भीतर के स्वर्ग से हम अपरिचित हैं | अगर यह मान लिया जाता है कि कुछ लोगों के लिए प्रेमधर्म का पालन संभव है, तो यह न मानना धृष्टता है कि और सब लोगों के लिए इसका पालन करना संभव नहीं है | अभी कुछ समय पहले के हमारे पूर्वज नर-भक्षण और कई दूसरी बातें ऐसी करते थे जिन्हें आज हम घृणित कहेंगे | बेशक, उन दिनों में भी डिक शेपर्ड जैसे चन्द व्यक्ति रहे होंगे, जिनकी अपने भाइयों को खा जाने से इनकार करने के (उनके लिए) विचित्र सिद्धान्त का प्रचार करने पर हँसी उड़ाई गई होगी और कदाचित जिन्हें इसके लिए सताया भी गया होगा |

हरिजन, २६-९-१९३६

ईश्वर कोई ऐसी शक्ति नहीं है, जो दूर कहीं बादलों में रहती हो | ईश्वर हमारे भीतर रहनेवाली अदृश्य शक्ति है और पलकें आँखों के जितनी निकट हैं उनसे भी वह हमारे ज़्यादा निकट है | हमारे भीतर अनेक शक्तियाँ छिपी हुई पड़ी हैं, जिनका पता हमें सतत संघर्ष से लगता है | इसी प्रकार अगर हम इस

सर्वोच्च शक्ति को दृढ़ निश्चय और परिश्रमपूर्वक तलाश करें तो उसे भी पा सकते हैं | उसकी प्राप्ति का ऐसा एक मार्ग अहिंसा का है | यह बहुत ज़रूरी है, क्योंकि ईश्वर हम सबके भीतर है और इसीलिए हमें प्रत्येक मानव-प्राणी के साथ निरपवाद रूप में अपनी एकता सिद्ध करनी पड़ेगी | विज्ञान की भाषा में इसे आश्लेषण (cohesion) या आकर्षण की शक्ति कहते हैं | लोकभाषा में इसे प्रेम कहा जाता है | प्रेम हमें एक-दूसरे के साथ और ईश्वर के साथ बाँधता है | अहिंसा और प्रेम एक ही चीज़ है |

(ता॰ १-६-१९४२ के एक निजी पत्र से)

हरिजन, २८-३-१९५३

६

ईश्वर सत्-चित् आनन्द है

'सत्य' शब्द सत् धातु का बना है | सत् का अर्थ है – होना या अस्ति; सत्य का अर्थ हुआ – होने का भाव या अस्तित्व | सत्य के सिवा दूसरी किसी चीज़ की हस्ती ही नहीं है | परमेश्वर का सच्चा नाम ही 'सत्' या सत्य है | इसीलिए परमेश्वर 'सत्य' है ऐसा कहने की अपेक्षा 'सत्य' ही परमेश्वर है ऐसा कहना अधिक उचित है | राजा या सरदार के बिना हमारा काम नहीं चलता, इसलिए उसका 'परमेश्वर' नाम अधिक प्रचलित है और रहेगा | लेकिन विचार करने से मालूम होगा कि 'सत्' या 'सत्य' ही सच्चा नाम है और यही पूरा अर्थ प्रगट करनेवाला है |

जहाँ सत्य है वहाँ ज्ञान – शुद्ध ज्ञान – है ही | जहाँ सत्य नहीं है वहाँ शुद्ध ज्ञान असंभव है | इसीलिए ईश्वर नाम के साथ चित् यानी ज्ञान शब्द की योजना हुई है | और जहाँ सच्चा ज्ञान है वहाँ आनन्द ही आनन्द होता है, शोक होता ही नहीं | और चूँकि सत्य शाश्वत है, इसीलिए आनन्द भी शाश्वत होता है | इसी कारण से ईश्वर को हम सच्चिदानन्द नाम से भी पहचानते हैं |

इस सत्य की आराधना के लिए ही हमारी हस्ती है | हमारा प्रत्येक कार्य, प्रत्येक श्वासोच्छ्वास उसी के लिए होना चाहिए | ऐसा करना सीख लेने पर बाकी सारे नियम हमारे हाथ सहज ही लग जाते हैं और घुन का पालन भी सरल हो जाता है | सत्य के बिना किसी भी नियम का शुद्ध पालन अशक्य है |

सामान्यत: सत्य का अर्थ केवल सच बोलना ही समझा जाता है | लेकिन सत्य शब्द का प्रयोग यहाँ विशालतर अर्थ में किया गया है | विचार में, वाणी में और आचार में सत्य का होना ही सत्य है | इस सत्य को जो सम्पूर्णतया समझ लेता है, उसे जगत में दूसरा कुछ भी जानने को नहीं रहता | क्योंकि, जैसा हम ऊपर कह आये हैं, सारा ज्ञान उसमें समाया हुआ है | उसमें जो न समाये वह सत्य नहीं है, ज्ञान नहीं है | तो फिर उसमें सच्चा आनन्द तो हो ही कैसे सकता है ? यदि हम इस कसौटी का उपयोग करना सीख जायें, तो हमें यह जानने में देर न लगे कि कौन-सा कार्य करने योग्य है और कौन-सा त्याज्य है ? क्या देखने योग्य है और क्या नहीं; क्या पढ़ने योग्य है और क्या नहीं ?

पर यह पारसमणि-रूप, कामधेनु-रूप सत्य प्राप्त कैसे किया जाय ? इसका उत्तर भगवान ने दिया है – अभ्यास और वैराग्य से | अभ्यास यानी एकमात्र सत्य के लिए उत्कट अधीरता और वैराग्य यानी सत्य के सिवा दूसरी सारी वस्तुओं के विषय में आत्यंतिक उदासीनता | फिर भी हम देखेंगे कि एक के लिए जो सत्य है वह दूसरों के लिए असत्य हो सकता है | इससे घबराने का कोई कारण नहीं है | जहाँ शुद्ध प्रयत्न है वहाँ समझ में आ जायेगा कि भिन्न जान पड़नेवाले सब सत्य एक ही पेड़ के असंख्य भिन्न

दिखाई देनेवाले पत्तों के समान हैं | परमेश्वर स्वयं भी क्या प्रत्येक मनुष्य को भिन्न नहीं दिखायी देता ? फिर भी हम जानते हैं कि वह एक ही है | पर सत्य नाम ही परमेश्वर का है, इसीलिए जिसे जो सत्य जान पड़े उसी के अनुसार यह चले तो उसमें दोष नहीं है, इतना ही नहीं बल्कि वही उसका कर्तव्य है | फिर यदि उसमें भूल होगी तो वह अवश्य सुधर जायेंगी | कारण सत्य की शोध के पीछे तपश्चर्या होती है यानी खुद कष्ट सहन करने की, उसके पीछे मर-मिटने की भावना होती है | इसलिए उसमें स्वार्थ की तो गंध तक नहीं होती | ऐसी नि:स्वार्थ शोध में लगा हुआ कोई भी मनुष्य आज तक अन्तपर्यन्त ग़लत रास्ते पर नहीं गया | ग़लत रास्ते पर पांव पड़ते ही वह ठोकर खाता है और फिर सीधे रास्ते पर आ जाता है | इसीलिए सत्य की आराधना ही सच्ची भक्ति है | और भक्ति तो 'सिर का सौदा' है या यों कहें कि हरि का मार्ग है, जिसमें कायरता के लिए कोई स्थान नहीं, जिसमें हार नाम की कोई चीज़ है ही नहीं | वह 'मरकर जीने का मंत्र' है |

इस प्रसंग में हरिश्चन्द्र, प्रह्लाद, रामचंद्र, इमाम हसन, इमाम हुसेन, ईसाई संतों आदि के उदाहरण विचार करने योग्य हैं | यदि हम सब बालक और वृद्ध, स्त्री और पुरुष उठते-बैठते, खाते-पीते, खेलते और काम करते हुए प्रतिदिन सारे समय अपना संपूर्ण ध्यान सत्य की ही खोज़ में लगायें और जब तक शरीर के नाश के साथ हम सत्य के साथ तद्रूप न हो जाएँ तब तक ऐसा ही करते रहें तो कितना अच्छा हो ! यह सत्यरूप परमेश्वर मेरे लिए रत्न-चिन्तामणि सिद्ध हुआ है; हम सबके लिए वह वैसा ही सिद्ध हो |

मंगल-प्रभात, अध्याय १

७

ईश्वर और प्रकृति

हम न तो ईश्वर के सब कानूनों को जानते हैं और न हमें उनकी कार्य-पद्धति ही मालूम है | बड़े से बड़े वैज्ञानिक या अध्यात्मवादी का ज्ञान भी रजकण जितना ही है | यदि ईश्वर मेरे लिए अपने पार्थिव पिता की भांति कोई व्यक्ति नहीं है, तो इसका मतलब यह है कि वह उससे अनन्त गुना अधिक है | मेरे जीवन की छोटी से छोटी बात भी उसके शासन के अधीन है | मैं शब्दश: मानता हूँ कि उसकी मर्जी के बगैर पत्ता भी नहीं हिलता | एक-एक साँस जो मैं लेता हूँ उसकी कृपा पर निर्भर है |

हरिजन, १६-२-१९३४

वह और उसका कानून एक ही है | वह कानून ही ईश्वर है | उसका जो भी गुण बताया जाता है, वह केवल गुण नहीं है | वह स्वयं ही गुणरूप है | वह सत्य है, प्रेम है, कानून है और हजार अन्य वस्तुएँ हैं, जो मनुष्य की बुद्धि सोच सकती है |

हरिजन, १६-२-१९३४

प्रकृति के नियम अटल हैं, अपरिवर्तनीय हैं और चमत्कार का अर्थ यदि प्रकृति के नियमों का भंग या उल्लंघन माना जाय, तो चमत्कार नाम की कोई चीज़ ही नहीं होती | परंतु हम सीमित प्राणी तरह-तरह की कल्पनाएँ करते हैं और अपनी क्षुद्र मर्यादाएँ ईश्वर पर थोपते हैं | हम ईश्वर की नकल कर सकते हैं, मगर वह हमारा अनुकरण नहीं कर सकता | समय का विभाजन हमारे लिए है, उसके लिए नहीं | उसके लिए काल अनन्त है | हमारे लिए भूत है, वर्तमान है, भविष्य है | और महज सौ वर्ष का मानव-जीवन अनन्त काल के सागर में एक बूँद के सिवा और क्या है ?

हरिजन, १७-४-१९३७

ईश्वर ने अपने खुद के कानूनों में संशोधन करने का स्वयं अपने हाथ में कोई अधिकार नहीं रखा है और न उसे ऐसा कोई संशोधन करने की ज़रूरत है | वह सर्वशक्तिमान है और सर्वज्ञ है | वह एक ही समय में और बिना किसी प्रयास के भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों को जानता है | इसीलिए किसी चीज़ का पुनर्विचार, संशोधन, परिवर्तन या सुधार करने का उसके लिए प्रश्न ही नहीं उठता |

यंग इंडिया, २५-११-१९२६

हमारा यह पार्थिव जीवन औरतों की काँच की चूड़ियों से भी अधिक क्षण-भंगुर है | आप काँच की चूड़ियों को किसी पेटी में बन्द करके सुरक्षित रखें तो हजारों वर्ष तक वे टिक सकती हैं | परंतु यह

पार्थिव जीवन इतना क्षणभंगुर है कि पलभर में नष्ट हो सकता है | इसीलिए हमें जो स्वल्प अवकाश दिया गया है, उसका हमें सदुपयोग करना चाहिए, ऊँच-नीच के भेद छोड़ने चाहिए, हृदय की शुद्धि करना चाहिए और मृत्यु होने पर – जो साधारण क्रम में अथवा भूकंप या दूसरी प्राकृतिक विपत्तियों के द्वारा कभी भी आ सकती है – अपने मालिक के सामने खड़े होने को तैयार रहना चाहिए |

हरिजन, २-२-१९३४

सभ्य और असभ्य सारे संसार की तरह मेरा भी यह विश्वास है कि मानव-जाति पर आनेवाली तमाम विपत्तियाँ (जैसे १९३४ का बिहार-भूकंप) हमारे पापों के कारण आती हैं | जब यह विश्वास हृदय से पैदा होता है, तो लोग प्रार्थना करते हैं, पश्चात्ताप करते हैं और आत्म-शोधन करते हैं | ...मुझे ईश्वर के उद्देश्य का बहुत सीमित ज्ञान है | ऐसी विपत्तियाँ ईश्वर अथवा प्रकृति की सनक नहीं हैं | वे उतने ही निश्चित रूप में नियत नियमों के अधीन होती हैं, जितनी ग्रहों की चाल उनकी गति के नियमों के अधीन होती है | बात इतनी ही है कि इन घटनाओं का नियंत्रण करनेवाले नियमों का हमें ज्ञान नहीं होता और इसीलिए हम उन्हें आकस्मिक विपत्तियाँ अथवा प्राकृतिक उत्पात कहते हैं |

हरिजन, २-२-१९३४

प्रत्येक भौतिक विपत्ति के पीछे कोई ईश्वरीय हेतु होता है | यह बिलकुल संभव है कि विज्ञान के संपूर्णता को पहुँचने पर किसी दिन हमें वह पहले से ही यह भी बता सके कि भूचाल कब आयेंगे, जैसे आजकल वह हमें ग्रहण के बारे में बता देता है | यह मानव-मस्तिष्क की एक और विजय होगी | परंतु ऐसी एक नहीं, असंख्य विजयों से भी हमारे अन्तर की शुद्धि नहीं हो सकती और इस अन्त:शुद्धि के बिना किसी भी सफलता का कोई मूल्य नहीं है |

हरिजन, ८-६-१९३५

जो लोग भीतरी शुद्धि की आवश्यकता को समझते हैं, उनसे मैं कहूँगा कि वे मेरे साथ यह प्रार्थना करें कि हमें इन विपत्तियों के पीछे ईश्वर का हेतु समझने की बुद्धि मिले, वे हमें विनम्र बनायें, जब मृत्यु का बुलावा आ पहुँचे तब अपने सिरजनहार के समक्ष खड़े होने को हमें तैयार करें और हम अपने विपत्ति-ग्रस्त भाइयों का – फिर वे कोई भी हों – दुख बँटाने के लिए सदा उद्यत रहें |

हरिजन, ८-६-१९३५

यह कहना कि ईश्वर इस दुनिया में बुराई होने देता है भले ही कानों को अच्छा न लगे, परन्तु यदि वह भलाई के लिए जिम्मेदार माना जाता है, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उसे बुराई के लिए भी जिम्मेदार मानना पड़ेगा | क्या ईश्वर ने रावण को अद्वितीय बल का प्रदर्शन नहीं करने दिया ? इस बात को समझने में जो कठिनाई महसूस होती है, उसका मूल कारण यह है कि ईश्वर क्या है, इस बात की

हमें ठीक पहचान नहीं है | ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं है | वह वर्णन से परे है | वह कानून बनानेवाला है, कानून भी है और उसे कार्यान्वित करनेवाला भी है | कोई मानव-प्राणी अपने ही हाथ में ये सारी सत्ताएँ लेने की गुस्ताखी नहीं कर सकता | अगर करे तो पूरा निरंकुश समझा जायेगा | ये सत्ताएँ तो उसी को शोभा देती हैं जिसे हम ईश्वर कहकर पूजते हैं |

हरिजन, २४-२-१९४६

शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि से ईश्वर भलाई और बुराई दोनों के मूल में है | वह कातिल का खंजर और चीर-फाड़ करनेवाले डॉक्टर का चाकू, दोनों का संचालन करता है | परंतु इसके बावजूद हमारे लिए, हमारे जीवन के हित की दृष्टि से, भलाई और बुराई एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न और असंगत है | हमारे लिए वे प्रकाश और अंधकार की, ईश्वर और शैतान की प्रतीक हैं |

हरिजन, २०-२-१९३७

मैं ईश्वर को कोई व्यक्ति नहीं मानता | मेरे लिए सत्य ही ईश्वर है | और ईश्वर का कानून तथा ईश्वर इस अर्थ में भिन्न वस्तुएँ या तथ्य नहीं हैं, जिस अर्थ में कोई दुनियावी राजा और उसका कानून अलग अलग होते हैं | चूँकि ईश्वर स्वयं कानून है, इसीलिए यह कल्पना नहीं की जा सकती कि वह कानून को तोड़ता होगा | इसीलिए वह हमारे कार्यों का नियंत्रण नहीं करता और स्वयं हट नहीं जाता | जब हम कहते हैं कि वह हमारे कार्यों का नियंत्रण करता है, तब हम केवल मानव-भाषा का व्यवहार करते हैं और उसे सीमित बनाते हैं | अन्यथा वह और उसका कानून सब जगह विद्यमान हैं और सबका शासन करते हैं | इसीलिए मैं ऐसा नहीं समझता कि वह हमारी हर प्रार्थना का हर तफसील में उत्तर देता है | परंतु इसमें शक नहीं कि वह हमारे कार्य का नियंत्रण करता है और मैं अक्षरश: मानता हूँ कि घास की एक पत्ती भी उसकी मर्जी के बिना न तो उगती है और न हिलती है | हमें जो इच्छा-स्वातंत्र्य प्राप्त है वह खचाखच भरे जहाज के मुसाफिर के इच्छा-स्वातंत्र्य से भी कम है |

"ईश्वर से लौ लगाते हुए क्या आपको स्वतंत्रता की भावना अनुभव होती है ?"

होती है | तब मुझे वह पराधीनता अनुभव नहीं होती, जो यात्रियों से भरी नाव पर बैठे हुए यात्री को होती है | यद्यपि मैं जानता हूँ कि मेरी स्वतंत्रता एक मुसाफिर की स्वतंत्रता से भी कम है, फिर भी मैं उसकी कद्र करता हूँ; क्योंकि गीता का यह उपदेश मेरी रग-रग में समा गया है कि मनुष्य इस अर्थ में अपने भाग्य का विधाता स्वयं ही है कि उसे इस स्वतंत्रता का अपनी इच्छानुसार उपयोग करने की स्वतंत्रता है | परंतु परिणामों का नियंता वह नहीं है | जहाँ उसने अपने को नियंता माना वहीं वह ठोकर खाता है |

हरिजन, २३-३-१९४०

८

ईश्वर दरिद्रनारायण के रूप में

मानव-जाति ईश्वर को – जो मनुष्य की बुद्धि के लिए अगम्य है और जिसका वैसे कोई नाम नहीं हो सकता – जिन अनन्त नामों से पहचानती है, उनमें से एक नाम दरिद्रनारायण है; उसका अर्थ है ग़रीबों का यानी उनके हृदय में प्रगट होनेवाला ईश्वर |

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

ग़रीबों के लिए रोटी ही अध्यात्म है | उन करोड़ों भूखों को आप और किसी तरह प्रभावित नहीं कर सकते | कोई दूसरी बात उनका ध्यान आकर्षित नहीं कर सकती | हॉं, आप उनके पास भोजन लेकर जाइए, तो वे आपको ही अपना ईश्वर समझ लेंगे | वे और कोई विचार कर ही नहीं सकते |

यंग इंडिया, ५-५-१९२७

इन्हीं हाथों से मैंने उनके फटे-पुराने कपड़ों की गांठों में बंधे मैले पैसे इकट्ठे किये हैं | उनसे आधुनिक प्रगति की बातें न कीजिये | उनके सामने व्यर्थ ईश्वर का नाम लेकर उनका अपमान न कीजिये | हम उनसे ईश्वर की बात करेंगे तो वे आपको और मुझे राक्षस बतायेंगे | अगर वे किसी ईश्वर को पहचानते हैं, तो उसके बारे में उनकी कल्पना यही हो सकती है कि वह लोगों को आतंकित करनेवाला, दण्ड देनेवाला, एक निर्दय अत्याचारी है |

यंग इंडिया, १५-९-१९२७

मुझे उनके सामने ईश्वर का सन्देश ले जाने की हिम्मत नहीं होती | मैं उन करोड़ों भूखों के सामने, जिनकी आँखों में तेज नहीं और जिनका ईश्वर उनकी रोटी ही है, ईश्वर का सन्देश ले जाऊँ तो फिर वहाँ खड़े उस कुत्ते के सामने भी ले जा सकता हूँ | उनके सामने ईश्वर का सन्देश ले जाना हो तो मुझे उनके सामने पवित्र परिश्रम का सन्देश ही ले जाना चाहिए | हम यहाँ बढ़िया नाश्ता उड़ा कर बैठे हो और उससे भी बढ़िया भोजन की आशा रखते हों, तब ईश्वर की बात करना भला मालूम होता है | मगर जिन लाखों लोगों को दो जून खाने को भी नसीब नहीं होता, उनसे मैं ईश्वर की बात कैसे कहूँ ? उनके सामने तो ईश्वर रोटी और मक्खन के रूप में ही प्रगट हो सकता है | भारत के किसानों को रोटी अपनी जमीन से मिल रही थी | मैंने उन्हें चरखा दिया, ताकि उन्हें थोड़ा मक्खन भी मिल जाय | अगर आज यहाँ मैं लंगोटी पहनकर आया हूँ, तो इसका कारण यही है कि मैं उन लाखों आधे भूखे, आधे नंगे और मूक मानव-प्राणियों का एकमात्र प्रतिनिधि बनकर आया हूँ |

यंग इंडिया, १५-१०-१९३१

मेरा दावा है कि मैं अपने लाखों-करोड़ों देशवासियों को जानता हूँ | मैं दिन-रात उनके साथ रहता हूँ | मुझे एकमात्र उन्हीं की चिन्ता है, क्योंकि मैं उस ईश्वर के सिवा, जो लाखों मूक जनों के हृदयों में निवास करता है, और किसी ईश्वर को नहीं मानता | वे उसे नहीं पहचानते, पर मैं पहचानता हूँ | और मैं उस ईश्वर की, जो सत्य है या उस सत्य की जो ईश्वर है, इन लाखों लोगों की सेवा के द्वारा ही पूजा करता हूँ |

हरिजन, ११-३-१९३९

मैं तो कहूँगा कि एक तरह से हम सब चोर हैं | अगर मैं कोई ऐसी चीज़ लेता हूँ, जिसकी मुझे तात्कालिक आवश्यकता नहीं है, और उसे अपने पास रखता हूँ तो मैं उसे किसी दूसरे से चुराता ही हूँ | यह प्रकृति का निरपवाद बुनियादी नियम है कि प्रकृति हमारी ज़रूरत के लायक रोज़ पैदा करती है; और अगर हरएक अपने लिए उतना ही ले जितना उसके लिए ज़रूरी हो और उससे अधिक न ले, तो इस दुनिया में कोई कंगाल नहीं रहेगा, कोई मनुष्य भूख से नहीं मरेगा |

महात्मा गांधी (१९१८); पृ० १८९

भारत में लाखों-करोड़ों आदमी ऐसे हैं जिन्हें दिन में केवल एक जून खाकर संतोष कर लेना पड़ता है और इस एक जून में भी उन्हें सूखी रोटी और चुटकी भर नमक के सिवा और कुछ नहीं मिलता | जब तक इन करोड़ों को खाने को अन्न और पहनने को कपड़ा नहीं मिल जाता, तब तक आपके और हमारे पास जो कुछ है उसे रखने का सचमुच हमें कोई हक़ नहीं है | हमें और आपको इस बात का ख़याल होना चाहिए, हमें अपनी ज़रूरतें तद्नुसार कम करनी चाहिए और स्वेच्छापूर्वक कष्ट भी सहन करने चाहिए, ताकि उन लोगों की सेवा-शुश्रूषा हो सके और उन्हें अन्न-वस्त्र मिल सकें |

महात्मा गांधी (१९१८); पृ० १८९

९

ईश्वर की आवाज़

ईश्वर की आवाज़ सुनने का मेरा दावा नया नहीं है | जहाँ तक मैं जानता हूँ उसे सिद्ध करने का इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं है कि परिणामों की जॉच की जाय | ईश्वर अपने को सिद्ध करने का विषय बनाये और वह भी अपनी ही संतानों के द्वारा, तो ईश्वर, ईश्वर न रह जाय | किन्तु वह अपने स्वेच्छा-प्रेरित सेवक को कड़ी से कड़ी परीक्षाओं में से पार हो जाने की शक्ति अवश्य देता है | मैं पिछले पचास वर्षों से भी ज्यादा समय से इस अत्यन्त कठोर स्वामी का स्वेच्छा-प्रेरित दास रहा हूँ | उसकी आवाज़ ज्यों-ज्यों वर्ष बीते है त्यों-त्यों मुझे अधिकाधिक सुनायी पड़ती रही है | उसने मुझे अधिक से अधिक अंधकारपूर्ण घड़ी में भी छोड़ा नहीं है | कई बार तो उसने मुझे खुद मेरे ही खिलाफ बचाया है और मुझे रंचमात्र भी स्वाधीनता नहीं दी है | उसके प्रति मेरा समर्पण जितना अधिक रहा है उतना ही मेरा आनन्द बढ़ा है |

हरिजन, ६-५-१९३३

जहाँ तक मुझे मालूम है किसी ने इस बात पर शंका नहीं की है कि अन्तर्नाद कुछ लोगों को सुनाई पड़ सकता है | और यदि अन्तर्नाद के नाम पर बोलने का किसी एक भी व्यक्ति का दावा सच्चा ठहरे तो इसमें जगत का लाभ ही है | यह दावा बहुत से करेंगे, किन्तु वे सब उसे सत्य सिद्ध नहीं कर सकेंगे | लेकिन झूठा दावा करनेवालों को रोकने के लिए उस दावे को दबा रखना ठीक नहीं होगा और दबाना नहीं चाहिए | अन्तर्नाद का दावा यदि कई लोग सचमुच कर सकें तो इसमें कोई आपत्ति नहीं है | लेकिन दुर्भाग्यवश दंभ का कोई इलाज़ नहीं है | बहुत से लोग सद्‌गुणों का ढोंग और दिखावा कर सकते हैं, इसीलिए उन्हें दबाकर रखना ठीक नहीं हो सकता | अन्तर्नाद के नाम पर बोलने का दावा करनेवाले लोग सारी दुनिया में हमेशा होते आये हैं | लेकिन उनकी स्वल्पकालिक प्रवृत्तियों से दुनिया का कोई नुकसान नहीं हुआ है | कोई मनुष्य अन्तर्नाद सुन सके, उसके पहले उसे लंबी और काफी कठोर साधना करनी पड़ती है | और जब सचमुच जो चीज़ सुनाई पड़ती है वह अन्तर्नाद ही होता है तब उसे पहचानने में भूल हो ही नहीं सकती | कोई दुनिया को चिरकाल तक धोखा नहीं दे सकता | इसीलिए यदि मेरे जैसा अल्प मनुष्य अपनी प्रामाणिक बात कहने में संकोच नहीं करता, और जब उसे विश्वासपूर्वक लगे कि उसने अन्तर्नाद सुना है तभी उसके नाम पर बोलने की हिम्मत करता है, तो उससे दुनिया में अंधाधुंधी मचने का कोई भय नहीं है |

हरिजन, १८-३-१९३३

मेरे लिए ईश्वर की, अन्त:करण की या सत्य की आवाज़ या जिसे मैं अन्तर्नाद कहता हूँ – सब एक ही अर्थ के सूचक शब्द हैं | मैंने ईश्वर की कोई आकृति नहीं देखी | उसकी मैंने कभी कोशिश नहीं की, क्योंकि मैंने हमेशा ईश्वर को निराकार माना है | मैंने जो आवाज़ सुनी, वह दूर से आ रही मालूम होती थी, पर साथ ही बिलकुल समीप भी जान पड़ती थी | वह आवाज़ ऐसी असंदिग्ध थी जैसे कोई मनुष्य प्रत्यक्ष हमसे कुछ कह रहा हो | उसे किसी तरह टाला नहीं जा सकता था | जिस समय मैंने उसे सुना, मैं कोई सपना नहीं देख रहा था | मैं बिलकुल जागृत था | आवाज़ सुनने के पहले मेरे हृदय में भारी मंथन चल रहा था | एकाएक यह आवाज़ सुनने में आयी | मैंने उसे ध्यान से सुना | मुझे निश्चय हो गया कि वह अंतरात्मा की ही आवाज़ है और मेरा चित्त जो व्याकुल था, शान्त हो गया | मैंने निश्चय कर लिया; अनशन का दिन और उसके आरंभ का समय तय हो गया | मेरा हृदय उल्लास से भर गया | यह सब रात के ११ और १२ बजे के बीच में हुआ | मेरा मन ताज़ा हो गया और उसके बारे में मैं वह टिप्पणी लिखने लगा जो कि पाठकों ने देखी ही होगी |

हरिजन, ८-७-१९३३

क्या मैं इस बात का कोई प्रमाण दे सकता हूँ कि यह अन्तरात्मा की आवाज़ ही थी, मेरे उत्तप्त मस्तिष्क की कोई कल्पना-तरंग नहीं थी ? जो विश्वास नहीं करता ऐसे शंकाशील के लिए मेरे पास और कोई प्रमाण नहीं है | उसकी इच्छा हो तो वह कह सकता है कि यह सब भ्रम है और मैं आत्म-वंचना का शिकार हुआ हूँ | मुमकिन है ऐसा ही हुआ हो | मैं उसके विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं दे सकता | लेकिन यह मैं अवश्य कह सकता हूँ कि मेरे खिलाफ सारी दुनिया एकमत से अभिप्राय दे तो भी मुझे इस विश्वास से नहीं हटा सकती कि मैंने जो आवाज़ सुनी वह ईश्वर की ही आवाज़ थी |

हरिजन, ८-७-१९३३

लेकिन कुछ लोग तो ऐसा मानते हैं कि ईश्वर स्वयं हमारी कल्पना की उपज है | अगर यह विचार मान लिया जाय तब तो कुछ भी सत्य नहीं है, सब कुछ हमारी कल्पना की ही उपज है | मगर तब भी जब तक मेरे ऊपर मेरी कल्पना की सत्ता है, तब तक तो मैं उसके अधीन रह कर ही व्यवहार कर सकता हूँ | अत्यन्त वास्तविक वस्तुएँ भी सापेक्ष-रूप में ही वास्तविक हैं | मेरे लिए तो मैंने जो आवाज़ सुनी वह मेरी हस्ती से भी ज़्यादा वास्तविक थी | उसने मुझे धोखा नहीं दिया है; और दूसरों का भी यही अनुभव है |

हरिजन, ८-७-१९३३

और इस आवाज़ को जो चाहे सुन सकता है | वह हरएक के अन्दर है | लेकिन दूसरी चीज़ों की तरह उसके लिए भी निश्चित पूर्व-तैयारी की आवश्यकता है |

हरिजन, ८-७-१९३३

भ्रम का तो कोई प्रश्न ही नहीं है | मैंने एक सीधी-सादी वैज्ञानिक बात कही है | जिनमें आवश्यक योग्यता प्राप्त करने का धैर्य और आकांक्षा हो, वे सब इसकी जाँच कर सकते हैं | यह योग्यता भी समझने में नितान्त सरल और जिनमें उसे प्राप्त करने का संकल्प-बल हो उनके लिए नितान्त आसान है | मैं तो इतना ही कहूँगा: "तुम्हें किसी दूसरे का नहीं, केवल अपना ही विश्वास करना है | तुम इस अन्तर की आवाज़ को सुनने की कोशिश करो | 'अन्तर की आवाज़' यह प्रयोग यदि तुम्हें ठीक नहीं मालूम हो तो तुम उसे 'बुद्धि का आदेश' कह सकते हो | तब तुम बुद्धि का आदेश जानने का प्रयत्न करो और उसका पालन करो | तुम ईश्वर का नाम नहीं लेना चाहते तो मत लो, किसी दूसरी चीज़ का नाम लो | अन्त में तुम देखोगे कि नाम कुछ भी हो, यह चीज़ ईश्वर ही है | कारण, सद्भाग्य से इस विश्व में ईश्वर के सिवा और कुछ है ही नहीं |" मैं यह भी कहूँगा कि अन्तर की आवाज़ की प्रेरणा पर चलने का दावा करनेवाले सब लोगों को सचमुच यह प्रेरणा मिल चुकी होती है, ऐसी बात नहीं है | दूसरी मानसिक शक्तियों की तरह अन्तरात्मा की आवाज़ सुनने की क्षमता प्राप्त करने के लिए भी पूर्व-प्रयत्न और तालीम की ज़रूरत होती है, शायद किसी दूसरी क्षमता की प्राप्ति के लिए जितना चाहिए उससे कहीं अधिक प्रयत्न और तालीम की | लेकिन उन हज़ारों लोगों में से, जो उसे सुनने का दावा करते हैं, अगर चन्द भी अपना दावा सही साबित कर सकें, तो हमें इन शंकास्पद दावेदारों का खतरा उठाना चाहिए | जो व्यक्ति ईश्वरीय प्रेरणा या अन्तर की आवाज़ के आदेश के अनुसार चलने का झूठा दावा करता है, उसे अपने इस झूठ का किसी पार्थिव राजा के नाम पर झूठी सत्ता का दावा करनेवाले को जो परिणाम भुगतना पड़ता है, उससे अधिक बुरा परिणाम भुगतना पड़ता है | दूसरे को तो, भेद खुल जाने पर, मात्र शारीरिक दण्ड ही भोगना पड़ता है, लेकिन पहले को शरीर और आत्मा दोनों की क्षति उठानी पड़ती है | उदार आलोचकों ने मुझ पर बेईमानी का दोष नहीं लगाया है, लेकिन उनका खयाल है कि बहुत मुमकिन है मुझे कोई भ्रम हो गया है | ऐसा हो तो भी परिणाम उससे बहुत भिन्न होगा जो कि झूठा दावा करने पर होगा | मैं एक विनम्र साधक होने का दावा करता हूँ; ऐसी स्थिति में मुझे बहुत सावधान रहने की, अपने मन का सही सन्तुलन बनाये रखने की बड़ी आवश्यकता है | ऐसे साधक को पहले अपने को शून्यवत् कर देना होता है, तब कहीं ईश्वर उसका मार्गदर्शन करता है | मैं समझता हूँ कि इस सवाल पर इतना कहना काफी है |

'दि बॉम्बे क्रॉनिकल, १८-११-१९३३

१०

ईश्वर का साक्षात्कार

मेरे लिए सत्य सर्वोपरि सिद्धान्त है, जिसमें दूसरे अनेक सिद्धान्तों का समावेश हो जाता है | यह सत्य वाणी का स्थूल सत्य ही नहीं है, परन्तु विचार का सत्य भी है और न केवल हमारी कल्पना का सापेक्ष सत्य है, बल्कि स्वतंत्र चिरस्थायी सत्य है; यानी परमेश्वर ही है | ईश्वर की असंख्य व्याख्याएँ हैं, क्योंकि उसकी विभूतियाँ भी अगणित हैं | ये विभूतियाँ मुझे आश्चर्यचकित करती हैं और एक क्षण के लिए स्तब्ध भी कर देती हैं | परन्तु मैं ईश्वर की पूजा सत्य के रूप में ही करता हूँ | मैंने उसे अभी तक पाया नहीं है, परन्तु मैं उसकी खोज़ कर रहा हूँ | इस खोज़ में अपनी प्रिय से प्रिय वस्तुओं का भी त्याग करने को मैं तैयार हूँ | और मुझे विश्वास है कि इस शोधरूपी यज्ञ में अपने शरीर को भी होमने की मेरी तैयारी और शक्ति है | लेकिन जब तक मैं इस केवल सत्य का साक्षात्कार नहीं कर लेता, तब तक मैंने जिस सापेक्ष सत्य की कल्पना की है उसी को मुझे पकड़े रखना चाहिए | तब तक वह सापेक्ष सत्य ही मेरा प्रकाश-स्तंभ, मेरी ढाल और मेरा कमरबन्द रहेगा | यद्यपि यह मार्ग खांडे की धार की तरह तंग और दुर्गम है, फिर भी मेरे लिए वह जल्दी से जल्दी का और आसान से आसान मार्ग रहा है | चूँकि मैंने इस मार्ग का कठोरता से अनुसरण किया है, इसीलिए मेरी हिमालय जैसी बड़ी भूलें भी मुझे तुच्छ-सी प्रतीत हुई हैं | कारण, इस मार्ग ने मुझे विनाश से बचाया है और मैं अपने ज्ञान के अनुसार आगे बढ़ता रहा हूँ | अपनी प्रगति में मुझे केवल सत्य की, ईश्वर की हल्की हल्की झाँकियाँ होती रही हैं और मेरा यह विश्वास दिन-दिन बढ़ रहा है कि वही सत्य है, और सब कुछ असत्य है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६-७

मेरा यह विश्वास भी बढ़ता रहा है कि जो कुछ मेरे लिए संभव है, वह एक बच्चे के लिए भी संभव है और यह कहने के लिए मुझे उचित कारण भी मिले हैं | सत्य की खोज़ के साधन जितने कठिन हैं उतने ही सरल भी हैं | किसी अहंकारी व्यक्ति को वे सर्वथा असंभव और एक निर्दोष बालक को बिलकुल संभव दिखाई दे सकते हैं | सत्य के शोधक को रजकण से भी नम्र होना चाहिए | दुनिया धूल को पैरों तले रौंदती है, परन्तु सत्य के शोधक को इतना नम्र बन जाना चाहिए कि धूल भी उसे कुचल न सके | तभी और तभी उसे सत्य की झाँकी मिलेगी |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६-७

ईश्वर में इस विश्वास की बुनियाद पर श्रद्धा रखनी होगी जो बुद्धि से परे है | वास्तव में कथित साक्षात्कार की जड़ में भी श्रद्धा का कुछ तत्त्व होता है, क्योंकि उसके बिना उसकी सत्यता सिद्ध नहीं

हो सकती | वस्तुत: ऐसा ही होना चाहिए | अपने शरीर की मर्यादाओं को कौन लाँघ सकता है ? मेरा मत है कि इस सशरीर जीवन में संपूर्ण साक्षात्कार असंभव है | इसकी ज़रूरत भी नहीं | मानव-प्राणी जितनी अधिक से अधिक आध्यात्मिक उच्चता प्राप्त कर सकते हैं, उसके लिए ज़रूरत सिर्फ अटल और सजीव श्रद्धा की ही है | ईश्वर हमारे इस पार्थिव शरीर के बाहर नहीं है | इसीलिए बाहरी प्रमाण कुछ हो भी तो वह बहुत काम का नहीं है | इन्द्रियों द्वारा ईश्वर को पहचानने में हमें हमेशा असफलता होगी, क्योंकि वह इन्द्रियों से परे है | हाँ, हम इन्द्रियों से अपने को विरत कर लें तो उसका अनुभव कर सकते हैं | दैवी संगीत हमारे भीतर सतत चलता रहता है, परन्तु इन्द्रियों के कोलाहल में वह कोमल संगीत डूब जाता है, क्योंकि वह इन्द्रियों से प्रतीत होनेवाली वस्तु से भिन्न और अनन्त गुना श्रेष्ठ है |

हरिजन, १३-६-१९३६

मैंने देख लिया और मैं मानता हूँ कि ईश्वर हमारे सामने शरीर धारण करके नहीं, परन्तु कार्य के रूप में आता है | यही कारण है कि हमारा बुरे से बुरे समय में उद्धार हो जाता है |

हरिजन, १३-६-१९३६

मेरे हर बार के अनुभव ने – जो सदा एक-सा रहा है – मुझे विश्वास करा दिया है कि सत्य के सिवा और कोई ईश्वर नहीं है | ... सत्य की जो उड़ती हुई छोटी छोटी झाँकियाँ मुझे हो पाई हैं, उनसे सत्य के उस अवर्णनीय तेज़ की कल्पना नहीं हो सकती, जो हमारी आँखों से रोज़ दिखाई देनेवाले सूर्य के तेज़ से करोड़ गुना अधिक है | सच तो यह है कि जो कुछ मैंने देखा है वह उस महान प्रकाश की हल्की-सी झलकमात्र है | परन्तु मैं अपने तमाम प्रयोगों के परिणाम-स्वरूप विश्वासपूर्वक इतना कह सकता हूँ कि सत्य के संपूर्ण दर्शन अहिंसा के संपूर्ण पालन के बाद ही हो सकते हैं |

यंग इंडिया, ७-२-१९२९

मुझे ईश्वर की इच्छा का कोई खास साक्षात्कार नहीं हुआ है | मेरा दृढ़ विश्वास है कि वह अपने को प्रत्येक मानव-प्राणी के सामने रोज़ प्रगट करता है, मगर हम भीतर की इस शान्त आवाज़ के लिये अपने कान बन्द कर लेते हैं | हम अपने सामने के अग्निस्तंभ के प्रति आँखें मूंद लेते हैं | मैं उसकी सर्वव्यापकता को अनुभव करता हूँ |

यंग इंडिया, २५-५-१९३१

मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य ईश्वर-साक्षात्कार है, और उसकी सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक सभी प्रवृत्तियाँ ईश्वर-दर्शन के अंतिम उद्देश्य से प्रेरित होनी चाहिए | समस्त मानव-प्राणियों की तात्कालिक सेवा इस प्रयत्न का आवश्यक अंग बन जाती है | कारण, इश्वर को पाने का एकमात्र उपाय यह है कि उसे उसकी सृष्टि में देखा जाय और उसके साथ एकता अनुभव की जाय | यह सबकी सेवा से ही हो सकता है | मैं संपूर्ण का एक अविभाज्य अंग हूँ और मैं उसे शेष मानवता से अलग नहीं पा सकता |

मेरे देशवासी मेरे निकटतम पड़ोसी हैं | वे इतने असहाय, इतने साधनहीन, इतने जड़ हो गये हैं कि मुझे उनकी सेवा में अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिए | अगर मुझे यह विश्वास हो जाए कि मैं उसे हिमालय की किसी गुफा में पा सकता हूँ, तो मैं तुरन्त वहाँ के लिए चल पड़ूँगा | परन्तु मैं जानता हूँ कि मैं उसे मानवता से अलग कहीं नहीं पा सकता |

हरिजन, २९-८-१९३६

जो अभेद्य अंधकार हमारे चारों ओर छाया हुआ है, वह शाप नहीं बल्कि वरदान है | उसने हमें अपने सामने का कदम ही देखने की शक्ति दी है और अगर दैवी प्रकाश उस कदम को हमें दिखा देता है तो यह हमारे लिए काफी है | तब हम न्यूमैन के साथ मिलकर गा सकते हैं कि 'मेरे लिए एक कदम ही काफी है |' और अपने पिछले अनुभव से हम विश्वास रख सकते हैं कि दूसरा कदम हमें यथासमय हमेशा दिख जायेगा | दूसरे शब्दों में, वह अभेद्य अंधकार जैसी हम कल्पना करते हैं वैसा अभेद्य नहीं है | परन्तु अधीर होकर जब हम उस एक कदम से आगे देखना चाहते हैं तब वह अंधकार हमें अभेद्य मालूम होता है |

हरिजन, २०-४-१९३४

मुझे आपके और मेरे इस कमरे में बैठे होने का जितना विश्वास है, उससे अधिक ईश्वर के अस्तित्व का विश्वास है | और मैं यह भी कह सकता हूँ कि मैं हवा और पानी के बिना रह सकता हूँ, परन्तु ईश्वर के बिना नहीं रह सकता | आप मेरी आँखें निकाल लें, परन्तु इससे मैं नहीं मरूँगा | आप मेरी नाक काट डालें, परन्तु इससे भी मैं नहीं मरूँगा | परन्तु आप मेरा ईश्वर पर विश्वास नष्ट कर दें तो मैं निष्प्राण हो जाऊँगा | आप इसे अंधविश्वास कह सकते हैं, परन्तु मैं स्वीकार करता हूँ कि यह ऐसा अंधविश्वास है जिसे मैं अपनी छाती से लगाये रखता हूँ | अपने बचपन में जब मुझे कोई खतरा या डर मालूम होता था, तब मैं इसी तरह रामनाम से चिपटा रहता था | एक बूढ़ी दायी ने मुझे यही सिखाया था |

हरिजन, १४-५-१९३८

पृथ्वीतल पर मैंने ईश्वर जैसा कठोर मालिक नहीं देखा | वह आपकी परीक्षा बार-बार लेता ही रहता है | और जब आपको ऐसा लगता है कि आपकी श्रद्धा या आपका शरीर आपका साथ नहीं दे रहा है और आपकी नैया डूब रही हो, तब वह आपकी मदद को किसी न किसी तरह पहुँच जाता है और आपको विश्वास करा देता है कि आपको श्रद्धा नहीं छोड़नी चाहिए; और वह आपका संकेत पाते ही आने को तैयार है, परंतु आपकी शर्त पर नहीं, अपनी ही शर्त पर | मैंने यही पाया है | मुझे एक भी मौका ऐसा याद नहीं जब ऐन वक्त पर उसने मेरा साथ छोड़ दिया हो |

'स्पीचेज़ एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी' (१९३३); पृ० १०६९

११

अहिंसा का मार्ग

सत्य का मार्ग जितना सीधा है उतना ही तंग भी है | यही बात अहिंसा की है | यह खांडे की धार पर चलने के बराबर है | ध्यान की एकाग्रता के द्वारा एक कलाकार रस्सी पर चल सकता है | परन्तु सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलने के लिए कहीं बड़ी एकाग्रता की ज़रूरत है | ज़रा–सा ध्यान चूके कि धड़ाम से ज़मीन पर आ गिरे | सतत साधना के द्वारा ही सत्य और अहिंसा को सिद्ध किया जा सकता है |...

लोगों ने अहिंसा को आज जो रूप दे रखा है, अहिंसा वैसी स्थूल चीज़ नहीं है | किसी प्राणी को चोट न पहुँचाना बेशक अहिंसा का अंग है | परन्तु यह उसका छोटे से छोटा चिह्न है | अहिंसा के सिद्धान्त को प्रत्येक बुरे विचार से, अनुचित जल्दबाजी से, झूठ बोलने से, घृणा से, किसी का बुरा चाहने से आघात पहुँचता है | जिस वस्तु की संसार को आवश्यकता है उससे चिपटे रहने में भी अहिंसा का भंग होता है | परन्तु संसार को तो हम रोज़ जो कुछ खाते हैं उसकी भी ज़रूरत है | जिस स्थान पर हम खड़े हैं वहाँ लाखों कीटाणु हैं, जो उस स्थान के मालिक हैं और जिन्हें हमारे वहाँ होने से चोट पहुँचती है | तब हमें क्या करना चाहिए ? क्या हमें आत्महत्या कर लेनी चाहिए ? अगर हमारा यह विश्वास हो, जैसा कि है, कि जब तक शरीर के लिए आसक्ति बनी हुई है, तब तक एक शरीर के नष्ट होने पर आत्मा अपने लिए दूसरा शरीर तैयार कर लेती है, तो यह भी कोई हल नहीं है | शरीर का बंधन तो तभी मिटेगा जब हम उसकी आसक्ति छोड़ देंगे | आसक्ति से मुक्ति ही सत्यरूपी ईश्वर का साक्षात्कार है | यह साक्षात्कार जल्दबाजी से प्राप्त नहीं हो सकता | शरीर हमारा नहीं है | जब तक वह है तब तक हमें उसे अपने को सौंपी हुई धरोहर समझकर उसका उपयोग करना चाहिए | शरीर-सम्बन्धी बातों के प्रति यह दृष्टि रखकर ही हम किसी दिन शरीर के भार से मुक्त होने की आशा रख सकते हैं | शरीर की मर्यादाओं को अच्छी तरह समझकर हमें अपने भीतर जो भी शक्ति है उसे लगाकर आदर्श की ओर दिन-प्रतिदिन आगे बढ़ने का प्रयत्न करना चाहिए |

ऊपर की बातों से शायद यह स्पष्ट हो गया है कि अहिंसा के बिना सत्य की खोज़ और प्राप्ति असंभव है |

अहिंसा और सत्य आपस में इतने गुंथे हुए हैं कि उन्हें एक-दूसरे से सुलझाकर अलग करना लगभग असंभव है | वे एक सिक्के के या यों कहिये कि धातु के एक चिकने गोल टुकड़े के दो पहलुओं की तरह हैं | कौन कह सकता है कि यह उलटा है और यह सीधा है ? फिर भी, अहिंसा साधन है, सत्य

साध्य है | साधन वही है जो सदा हमारी पहुँच के भीतर हो, और इसीलिए अहिंसा हमारा सर्वोच्च धर्म है | अगर हम साधन को संभाल लें तो हम साध्य तक देर या सवेर पहुँचकर ही रहेंगे | एक बार यह बात अच्छी तरह समझ लें तो हमारी अंतिम विजय असंदिग्ध है | हमें रास्ते में चाहे जो कठिनाइयाँ आयें, बाह्य दृष्टि से हमारी चाहे जितनी हार होती दिखे, हम सत्य की खोज़ न छोड़ें और विश्वास के साथ एक ही मंत्र जपें – सत्य है |

मंगल-प्रभात, अध्याय २

अहिंसा सर्वोच्च प्रकार की सक्रिय शक्ति है | वह आत्मबल या हमारे भीतर विराजमान भगवान की शक्ति है | अपूर्ण मानव उसे पूरा ग्रहण नहीं कर सकता | वह उसके संपूर्ण तेजपुंज को बर्दाश्त नहीं कर सकेगा | परन्तु उसका लेशमात्र भी जब हमारे भीतर सक्रिय बन जाता है तब वह गज़ब का काम करता है | आकाश का सूर्य सारे विश्व को अपनी प्राणदायक गरमी से भर देता है | परन्तु कोई उसके बहुत निकट चला जाय तो उसे वह जलाकर राख कर देगा | इसी तरह ईश्वर की बात है | हम जिस हद तक अहिंसा को सिद्ध करते हैं उतनी ही हद तक ईश्वर के सदृश बनते हैं, परन्तु हम पूरी तरह ईश्वर कभी नहीं बन सकते | अहिंसा रेडियम की तरह काम करती है | रेडियम की छोटी से छोटी मात्रा भी किसी रोगी अंग के बीच में रख दी जाय, तो वह लगातार चुपचाप और बिना रुके काम करता रहता है और अन्त में सारे रोगग्रस्त अंग को निरोग बना डालता है | इस प्रकार थोड़ी सी भी सच्ची अहिंसा चुपचाप, सूक्ष्म और अदृश्य रूप में काम करती है, और सारे समाज में व्याप्त हो जाती है |

हरिजन, १२-११-१९३८

नम्रता के बिना सत्य अहंकारपूर्ण दिखावामात्र होगा | जो सत्य का पालन करना चाहता है, वह जानता है कि यह काम कितना कठिन है | संसार उसकी कथित विजयों की प्रशंसा कर सकता है | दुनिया उसके पतन के बारे में बहुत कम जानती है | सत्यपरायण मनुष्य परीक्षाओं से गुजरकर शुद्ध और नम्र बन जाता है | उसे नम्र रहने की ज़रूरत है | जो मनुष्य समस्त संसार से प्रेम रखना चाहता है और उसमें उन लोगों को भी शामिल समझता है जो अपने आपको उसके दुश्मन कहते हैं, वह जानता है कि अपने ही बल-बूते पर यह काम कितना असंभव है | उसे पहले रजकण बनना होगा, तब वह अहिंसा का 'क ख' समझ सकता है | प्रेम के साथ यदि उसकी नम्रता में वृद्धि नहीं होती है तो उसकी कोई कीमत नहीं है |... जिसमें जरा भी अहंकार है वह ईश्वर का साक्षात्कार नहीं कर सकता | ईश्वर का साक्षात्कार करना हो तो उसे शून्य बनना पड़ेगा | तूफानों के थपेड़े खाते हुए विश्व में कौन यह कहने का साहस करेगा कि 'मेरी जीत हुई'? विजय हमारे भीतर के ईश्वर की होती है, हमारी नहीं | ... जो बात भौतिक जगत के लिए सही है वही आध्यात्मिक जगत के लिए भी सही है | अगर एक सांसारिक युद्ध जीतने के लिए यूरोप ने पिछली लड़ाई में, जो एक क्षणभंगुर घटना थी, लाखों मनुष्यों की आहुति दे

डाली, तो क्या आश्चर्य है कि आध्यात्मिक संग्राम में जूझते हुए लाखों को नष्ट होना पड़े, ताकि संसार के सामने एक संपूर्ण उदाहरण बच रहे ?

यंग इंडिया, २५-६-१९२५

मानव-जाति के हाथ में अहिंसा सबसे बड़ा बल है | मनुष्य की सूझ ने विनाश के जो प्रबल से प्रबल हथियार निकाले हैं उनसे भी यह प्रबल है | विनाश मानव का धर्म नहीं है | मनुष्य अपने भाई के हाथों, ज़रूरत पड़ने पर, मरने को तैयार रहकर आज़ादी से जीता है, उसे मारकर हरगिज नहीं | प्रत्येक हत्या या आघात, उसका कारण कुछ भी रहा हो, मानवता के विरुद्ध अपराध है |

हरिजन, २०-७-१९३५

दया, अहिंसा, प्रेम और सत्य के सद्गुणों की परीक्षा किसी मनुष्य में तभी हो सकती है जब उनका मुकाबला क्रूरता, हिंसा, बैर और असत्य आदि से होता है |

अगर यह सच है तो यह कहना ग़लत होगा कि एक हत्यारे के सामने अहिंसा काम नहीं देगी | यह अवश्य कहा जा सकता है कि एक हत्यारे के सामने अहिंसा का प्रयोग करना आत्म-विनाश को न्यौता देना है | परन्तु अहिंसा की यही सच्ची कसौटी है | परन्तु जो निरी लाचारी के कारण अपना वध होने देता है उसके लिये यह हरगिज नहीं कहा जा सकता कि उसने यह परीक्षा पास कर ली है | जो वध होते समय भी अपने हत्यारे के प्रति क्रोध नहीं करता, बल्कि ईश्वर से भी उसे क्षमा करने को कहता है वही सचमुच अहिंसक है | इतिहास ईसा मसीह का ऐसा ही वर्णन करता है | सूली पर अन्तिम श्वास लेते समय उन्होंने अपने हत्यारों के बारे में ऐसा कहा बताते हैं : "परम पिता, इन्हें क्षमा कर दीजिए, क्योंकि इन्हें पता नहीं है कि ये क्या कर रहे हैं |" दूसरे धर्मों से भी हमें ऐसे ही उदाहरण मिल सकते हैं, परन्तु यह उद्धरण इसीलिए दिया गया है कि यह विश्व-विख्यात है |

यह दूसरी बात है कि हमारी अहिंसा अभी इतनी ऊँचाई तक नहीं पहुँची है | हमारे लिए यह बिलकुल ग़लत होगा कि हम अपने ही दोष के या अनुभव के अभाव के कारण अहिंसा का स्तर नीचा कर दें | आदर्श को सही तौर पर समझे बिना हम उस तक पहुँचने की कभी आशा नहीं रख सकते | अत: यह ज़रूरी है कि हम अहिंसा की शक्ति को समझने में अपनी बुद्धि को लगावें |

हरिजन, २८-४-१९४६

अहिंसा एक व्यापक सिद्धान्त है | हम हिंसा की ज्वाला में फँसे हुए असहाय प्राणी हैं | 'जीवो जीवस्य जीवनम्' – इस कहावत में एक गहरा अर्थ है | मनुष्य जाने-अनजाने बाह्य हिंसा किये बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता | उसके जीने में ही – खाने-पीने और चलने-फिरने में – कुछ न कुछ हिंसा होती ही है, फिर वह कितनी भी सूक्ष्म क्यों न हो | इसीलिए यदि अहिंसा के पुजारी के सब कामों का स्रोत दया

है, यदि वह छोटे से छोटे प्राणियों को भी नष्ट करने से भरसक परहेज रखता है, उन्हें बचाने की कोशिश करता है और इस प्रकार हिंसा के घातक फँदे से मुक्त होने का सतत प्रयत्न करता है, तो वह अपने ईमान का सच्चा होता है | उसके संयम और उसकी करुणा में सतत वृद्धि होती रहेगी, परन्तु वह बाह्य हिंसा से सर्वथा विमुक्त कभी नहीं हो सकता |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ४२७-२८

और फिर, चूँकि अहिंसा की जड़ में सब प्राणियों की एकता है, इसीलिए एक की भूल का परिणाम सब पर हुए बिना नहीं रह सकता और इस कारण मनुष्य हिंसा से सर्वथा मुक्त नहीं हो सकता | जब तक वह एक सामाजिक प्राणी है तब तक वह उस अहिंसा में भागीदार बने बिना नहीं रह सकता, जो समाज के अस्तित्व के साथ जुड़ी हुई है | जब दो राष्ट्र लड़ रहे हों तब अहिंसा के पुजारी का कर्तव्य है कि लड़ाई बन्द कराये | जो इस कर्तव्य-पालन में समर्थ नहीं है, जिसमें युद्ध का विरोध करने की शक्ति नहीं है, जिसमें लड़ाई रोकने की योग्यता नहीं है, वह लड़ाई में भाग लेकर भी अपने आपको, अपने राष्ट्र को और संसार को युद्ध से मुक्त करने की पूरे दिल से कोशिश कर सकता है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ४२८

१२

प्रार्थना – धर्म का सार

मैं मानता हूँ कि प्रार्थना धर्म का प्राण और सार है | और इसीलिए प्रार्थना मनुष्य के जीवन का धर्म होनी चाहिए, क्योंकि कोई आदमी धर्म के बिना जी ही नहीं सकता | कुछ लोग हैं जो अपनी बुद्धि के अहंकार में कह देते हैं कि उन्हें धर्म से कोई सरोकार नहीं | मगर यह तो ऐसा ही है जैसे कोई मनुष्य कहे कि वह साँस तो लेता है, मगर उसकी नाक नहीं है | बुद्धि से कहिए या स्वभाव से अथवा अंधविश्वास से कहिए, मनुष्य दिव्य तत्त्व से अपना कुछ न कुछ नाता स्वीकार करता ही है | घोर से घोर नास्तिक या अनीश्वरवादी भी किसी नैतिक सिद्धान्त की आवश्यकता को मानता है और उसके पालन में कुछ न कुछ भलाई और उसका पालन न करने में बुराई समझता है | ब्रेडलो की नास्तिकता मशहूर है; वे सदा अपने आन्तरिक दृढ़ विश्वास को घोषित करने का आग्रह रखते थे | उन्हें इस प्रकार सच कहने के कारण अनेक कष्ट उठाने पड़े, परन्तु इसमें उन्हें आनंद आता था और वे कहते थे कि सत्य स्वयं अपना पुरस्कार है | यह बात नहीं थी कि उन्हें सत्य के पालन से होनेवाले आनन्द का बिलकुल भान नहीं था | परन्तु यह आनन्द पूरी तरह सांसारिक ही नहीं होता, यह ईश्वर के साथ अपने सम्बन्ध की अनुभूति से पैदा होता है | इसीलिए मैंने कहा है कि जो आदमी धर्म को नहीं मानता, वह भी धर्म के बिना नहीं रह सकता और नहीं रहता |

अब मैं दूसरी बात पर आता हूँ | वह यह है कि प्रार्थना जैसे धर्म का सबसे मार्मिक अंग है वैसे ही मानव-जीवन का भी है | प्रार्थना या तो याचनारूप होती है या व्यापक अर्थ में वह ईश्वर से भीतरी लौ लगाना है | दोनों ही सूरतों में अंतिम परिणाम एक ही होता है | जब वह याचना के रूप में हो तब याचना आत्मा की सफाई और शुद्धि के लिए, उसके चारों ओर लिपटे हुए अज्ञान और अंधकार के आवरण हटाने के लिए होनी चाहिए | इसीलिए जो अपने भीतर दिव्य ज्योति जगाने को तड़प रहा हो उसे प्रार्थना का आसरा लेना होगा | परन्तु प्रार्थना शब्दों या कानों का व्यायाम मात्र नहीं है, खाली मंत्र-जाप नहीं है | आप कितना ही रामनाम जपिये, अगर उससे आत्मा में हलचल नहीं मचती तो वह व्यर्थ है | प्रार्थना में शब्दों के बिना हृदय होना हृदय के बिना शब्द होने से बेहतर है | वह स्पष्ट रूप से आत्मा की तड़प के जवाब में होनी चाहिए | और जैसे कोई भूखा आदमी मनचाहे भोजन में मजा लेता है, ठीक वैसे ही भूखी आत्मा को हार्दिक प्रार्थना में आनन्द आता है | और यह मैं अपने और अपने साथियों के थोड़े से अनुभव से कहता हूँ कि जिसने प्रार्थना के जादू का अनुभव किया है, वह लगातार कई दिन तक आहार के बिना तो रह सकता है, परन्तु प्रार्थना के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता | कारण, प्रार्थना के बिना भीतरी शांति नहीं मिलती |

अगर यह बात है तो कोई कहेगा कि हमें अपने जीवन के हर क्षण में प्रार्थना करते रहना चाहिए | इसमें कोई सन्देह नहीं | परन्तु हम भूल करनेवाले प्राणी हैं; एक क्षण के लिए भी भगवान से भीतरी लौ लगाने के लिए बाहरी विषयों से हटकर अन्तर्मुख होना हमें कठिन जान पड़ता है | तब हर क्षण ईश्वर से लौ लगाये रखना तो हमारे लिए असंभव ही होगा | इसीलिए हम कुछ घंटे नियत करके उस समय थोड़ी देर के लिए संसार का मोह छोड़ देने का गंभीर प्रयत्न करते हैं, एक प्रकार से इन्द्रियतीत रहने की दिली कोशिश करते हैं | आपने सूरदास का भजन सुना है | यह ईश्वर से मिलने के लिए भूखी आत्मा की करुण पुकार है | हमारे पैमाने से वे एक सन्त थे, परन्तु उनके अपने पैमाने से वे घोर पापी थे | आध्यात्मिक दृष्टि से वे हमसे मीलों आगे थे, परन्तु उन्हें ईश्वर-वियोग की इतनी तीव्र पीड़ा थी कि उन्होंने आत्मग्लानि और निराशा के स्वर में अपनी पीड़ा इस तरह व्यक्त की: 'मो सम कौन कुटिल खल कामी |'

मैंने प्रार्थना की आवश्यकता की बात कही है और उसके द्वारा प्रार्थना का सार भी बताया | हमारा जन्म अपने मानव-बन्धुओं की सेवा के लिए हुआ है और यह काम हम अच्छी तरह नहीं कर सकते यदि हम पूरी तरह से जाग्रत न रहें | मनुष्य के हृदय में अंधकार और प्रकाश की शक्तियों में सतत संग्राम होता रहता है | अत: जिसके पास प्रार्थना की ढाल का सहारा नहीं है, वह अंधकार की शक्तियों का शिकार हो जायेगा | प्रार्थना करनेवाला आदमी अपने मन में शांति का अनुभव करेगा और संसार के साथ भी उसका सम्बन्ध शांति का होगा | जो मनुष्य प्रार्थनापूर्ण हृदय के बिना सांसारिक कर्म करेगा, वह स्वयं भी दुखी होगा और संसार को भी दुखी करेगा | इसीलिए मनुष्य की मरणोत्तर स्थिति पर प्रार्थना का जो प्रभाव होता है उसके सिवा भी प्रार्थना का मनुष्य के पार्थिव जीवन में असीम महत्त्व है | हमारे दैनिक कार्यों में व्यवस्था, शांति और संवादिता लाने का एकमात्र उपाय प्रार्थना है | इस प्राणभूत वस्तु को संभाल लिया जाय तो और सब बातें अपने आप संभल जायेंगी | किसी वर्ग का एक कोण सम कर दिया जाय तो दूसरे कोण अपने आप सम हो जाते हैं |

इसीलिए दिन का काम प्रार्थना से शुरू कीजिए और उसमें इतनी आत्मा उंड़ेलिये कि वह शाम तक आपके साथ बनी रहे | दिन का अन्त भी प्रार्थना के साथ कीजिए, ताकि आपकी रात शांतिपूर्ण तथा स्वप्नों और दु:स्वप्नों से मुक्त रहे | प्रार्थना के स्वरूप की चिन्ता न कीजिए | स्वरूप कुछ भी हो, वह ऐसा होना चाहिए जिससे भगवान के साथ हमारे मन की लौ लग जाय | इतना ध्यान रखिये कि स्वरूप कैसा भी हो, मगर आपके मुँह से प्रार्थना के शब्द निकलते समय आपका मन इधर-उधर न भटकने पाये |

विश्व के सब पदार्थों को, जिनमें सूर्य, चन्द्र और तारे भी शामिल हैं, कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है | इन नियमों के नियंत्रण के बिना दुनिया का काम क्षणभर भी नहीं चल सकता | आपका

जीवनोद्देश्य अपने मानव-बन्धुओं की सेवा करना है | यदि आप अपने पर किसी न किसी तरह का अनुशासन नहीं लगायेंगे, तो आपका सर्वनाश ही हो जायेगा | प्रार्थना एक प्रकार का आवश्यक आध्यात्मिक अनुशासन है | अनुशासन और संयम ही हमें पशुओं से अलग करता है | अगर हम सिर ऊँचा करके चलनेवाले मनुष्य होना चाहते हैं और चौपाये नहीं बनना चाहते, तो हमें यह बात समझ लेनी चाहिए और अपने आपको स्वेच्छा से अनुशासन और संयम में रखना चाहिए |

यंग इंडिया, २३-१-१९३३

१३

प्रार्थना क्यों ?

हम प्रार्थना करें ही क्यों ? अगर ईश्वर है तो क्या जो कुछ हुआ है उसे ईश्वर नहीं जानता है ? क्या उसे अपना कर्तव्य पालन कर सकने के लिए प्रार्थना की ज़रूरत रहती है ?

नहीं, ईश्वर को याद दिलाने की आवश्यकता नहीं | वह सबके भीतर है, उसकी आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं होता | हमारी प्रार्थना तो अपने ही हृदय की छानबीन है | वह तो हमें ही यह स्मरण दिलाती है कि हम प्रभु के सहारे के बिना लाचार हैं | प्रार्थना के बिना कोई प्रयत्न संपूर्ण नहीं होता | यह निश्चित रूप में स्वीकार करना चाहिए कि अच्छे से अच्छे मानव-प्रयत्न के पीछे भी भगवान का आशीर्वाद न हो तो वह बेकार है | प्रार्थना नम्रता की पुकार है | वह आत्मशुद्धि का, आत्म-निरीक्षण का आह्वान है |

हरिजन, ८-६-१९३५

मेरी राय में राम, रहमान, अहुरमज्द, गॉड या कृष्ण, ये सब उस अदृश्य शक्ति को, जो सब शक्तियों से बड़ी है, कोई नाम देने के मानव-प्रयत्न हैं | भले ही मनुष्य अपूर्ण हो, परन्तु पूर्णता का सतत प्रयत्न करना उसके स्वभाव में है | प्रयत्न करते-करते वह चिन्तन में पड़ जाता है | और जैसे कोई बच्चा खड़ा होने की कोशिश करता है, बार-बार गिरता है और अन्त में चलना सीख जाता है, ठीक उसी तरह मनुष्य इतनी बुद्धि होते हुए भी उस अनन्त और अकाल पुरुष के मुकाबले में निरा शिशु है | इसमें अतिशयोक्ति दिखाई दे सकती है, परन्तु है नहीं | ईश्वर का वर्णन मनुष्य अपनी टूटी-फूटी भाषा में ही कर सकता है | जिस शक्ति को हम ईश्वर कहते हैं वह वर्णनातीत है | और न उसे इस बात की कोई ज़रूरत ही है कि मनुष्य उसका वर्णन करने का प्रयत्न करे | मानव को ही उस साधना की आवश्यकता है जिसके द्वारा वह महासागर से भी विशाल इस शक्ति का वर्णन कर सके | अगर यह विधान स्वीकार कर लिया जाय तो यह पूछने की आवश्यकता नहीं कि हम प्रार्थना क्यों करते हैं | मनुष्य ईश्वर की कल्पना अपने ही मन की सीमाओं के भीतर कर सकता है | यदि ईश्वर महासागर की भांति विशाल और असीम है, तो एक छोटी-सी बूँद जैसा मनुष्य कैसे कल्पना कर सकता है कि ईश्वर क्या है ? वह समुद्र में गिरकर और समाकर ही अनुभव कर सकता है कि महासागर क्या वस्तु है | यह अनुभव अवर्णनीय है | मैडम ब्लावट्स्की के शब्दों में, मनुष्य प्रार्थना करने में अपने ही विशालत स्वरूप की पूजा करता है | वही सच्ची प्रार्थना कर सकता है, जिसे दृढ़ विश्वास हो कि ईश्वर उसके भीतर है | जिसे यह विश्वास नहीं है, उसे प्रार्थना करने की ज़रूरत नहीं | ईश्वर तो नाराज़ नहीं होगा, परन्तु मैं अनुभव से कह सकता हूँ कि जो प्रार्थना नहीं करता वह ज़रूर घाटे में रहता है | तब इसका क्या महत्त्व है कि एक

आदमी ईश्वर को व्यक्ति मानकर पूजता है और दूसरा शक्ति मानकर ? दोनों ही अपनी अपनी समझ से ठीक ही करते हैं | कोई नहीं जानता और शायद कभी नहीं जानेगा कि प्रार्थना करने का सर्वथा उचित मार्ग क्या है | आदर्श तो सदा आदर्श ही रहेगा | हमें इतना ही याद रखने की ज़रूरत है कि सब शक्तियों में ईश्वर की ही शक्ति है | और सब शक्तियाँ भौतिक हैं | परन्तु ईश्वर ही वह प्राणभूत शक्ति या आत्मा है, जो सर्वव्यापी, सर्वग्राही और इसीलिए मानव-बुद्धि से परे है |

हरिजन, १८-८-१९४६

एक बौद्ध से संवाद

बुद्ध के एक अनुयायी डॉ॰ फाबरी एबटाबाद में गांधीजी से मिलने आये | उन्होंने पूछा :

"क्या प्रार्थना से ईश्वर का मन बदला जा सकता है? क्या प्रार्थना से उसे जाना जा सकता है ?"

गांधीजी ने कहा, "प्रार्थना करते समय मैं क्या करता हूँ, इसे पूरी तरह समझाना कठिन बात है | परन्तु मैं आपके प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न अवश्य करूँगा | ईश्वर का मन नहीं बदला जा सकता, परन्तु ईश्वर जड़-चेतन सभी पदार्थों और जीवों में है | प्रार्थना का अर्थ यह है कि मैं अपने भीतरवाले उस ईश्वर को पुकारता हूँ, जगाता हूँ | हो सकता है कि मुझे इसका बौद्धिक निश्चय तो हो, परन्तु कोई सजीव अनुभूति न हो | इसीलिए जब मैं स्वराज्य या भारत की स्वाधीनता के लिए प्रार्थना करता हूँ, तो मैं उस स्वराज्य को प्राप्त करने की या उसे प्राप्त करने में अधिक से अधिक योग देने की पर्याप्त शक्ति के लिए प्रार्थना या इच्छा करता हूँ | और मैं मानता हूँ कि प्रार्थना के उत्तर में मैं वह शक्ति प्राप्त कर सकता हूँ |" डॉ॰ फाबरी ने कहा, "तब तो आपका उसे प्रार्थना कहना ठीक नहीं है; प्रार्थना करने का अर्थ याचना या माँग करना है |"

"हाँ, यह सही है | आप कह सकते हैं कि मैं अपने आपसे, अपने उच्च स्वरूप से, वास्तविक आत्मा से याचना करता हूँ, जिसके साथ मैं अभी तक पूर्ण एकता स्थापित नहीं कर सका हूँ | इसीलिए आप इसका वर्णन यों कर सकते हैं कि जिस परमात्मा में सब समाये हुए हैं उसमें अपने आपको खो देने की सतत आकांक्षा करना ही प्रार्थना है |"

डॉ॰ फाबरी ने पूछा, "जो लोग प्रार्थना नहीं कर सकते, उनके लिए आपका क्या कहना है ?"

गांधीजी ने कहा, "मैं उनसे कहूँगा कि नम्र बनो और बुद्ध की अपनी कल्पना द्वारा सच्चे बुद्ध को सीमित मत करो | अगर उनमें प्रार्थना करने लायक विनम्रता न होती तो करोड़ों मनुष्यों के जीवन पर

उन्होंने जो राज्य किया और आज भी कर रहे हैं वह न कर सकते | बुद्धि से कहीं ऊँची कोई चीज़ है जो हम पर और शंका करनेवालों पर भी शासन करती है | उनके जीवन के नाजुक मौकों पर उनकी शंकाशीलता और उनका तत्त्वज्ञान उनकी मदद नहीं करते | उन्हें सहारा देने के लिए किसी बेहतर चीज़ की, अपने से बाहर किसी चीज़ की ज़रूरत होती है; और इसीलिए अगर कोई मेरे सामने कोई ऐसी पहेली रखता है तो मैं उससे कहता हूँ: 'जब तक तुम अपने आपको शून्य नहीं बना लोगे, तब तक तुम्हें ईश्वर या प्रार्थना का अर्थ मालूम नहीं होगा | तुममें यह समझने लायक नम्रता होनी ही चाहिए कि तुम्हारी महानता और जबरदस्त बुद्धि के बावजूद तुम विश्व में एक बिन्दु के समान ही हो | जीवन की बातों की निरी बौद्धिक कल्पना काफी नहीं होती | बुद्धि के लिए अगम्य आध्यात्मिक कल्पना ही ऐसी चीज़ है जो मनुष्य को संतोष दे सकती है | धनवान लोगों के जीवन में भी नाजुक समय आते हैं | यद्यपि उनके चारों ओर वे सब चीज़ें होती हैं जो रुपये से खरीदी जा सकती हैं और प्रेम से मिल सकती हैं, फिर भी अपने जीवन में उन्हें कुछ अवसरों पर थोड़ी भी सान्त्वना नहीं मिलती | इन्हीं अवसरों पर हमें ईश्वर की झाँकी होती है, उसके दर्शन होते हैं, जो जीवन में हर कदम पर हमें रास्ता बता रहा है | यही प्रार्थना है |'"

डॉ॰ फाबरी ने कहा, "आपका मतलब उस चीज़ से है जिसे हम सच्चा धार्मिक अनुभव कह सकते हैं और जो बौद्धिक कल्पना से अधिक बलवान होता है | जीवन में दो बार मुझे वह अनुभव हुआ, परन्तु बाद में मैंने उसे खो दिया है | परन्तु अब मुझे बुद्ध के एक-दो वचनों से बड़ी सान्त्वना मिलती है : 'स्वार्थ दुख का कारण है' और 'भिक्षुओ, याद रखो प्रत्येक वस्तु नाशवान है |' "इन वचनों का विचार करता हूँ तो मुझे लगभग वही बल मिलता प्रतीत होता है जो श्रद्धा से मिलता है |"

"यही प्रार्थना है", यह बात गांधीजी ने इतने आग्रह के साथ कही कि वह डॉ॰ फाबरी के मन को छुए बिना नहीं रही होगी |

हरिजन, १९-८-१९३९

१४

प्रार्थना कैसे, किसकी और कब करें ?

'नवजीवन' के एक पाठक पूछते हैं: 'आप हमसे अकसर ईश्वर की आराधना करने को, प्रार्थना करने को कहते हैं, परन्तु यह कभी नहीं बताते कि प्रार्थना कैसे करें और किसकी करें | क्या आप कृपा करके मुझे इसका बोध करायेंगे ?'

ईश्वर की पूजा करना ईश्वर का गुणगान करना है | प्रार्थना अपनी अयोग्यता और दुर्बलता को स्वीकार करना है | ईश्वर के सहस्त्र नाम हैं या यों कहिये कि वह अनाम है | जो भी नाम हमें अच्छा लगे उसी से हम उसकी पूजा या प्रार्थना कर सकते हैं | कुछ लोग उसे राम कहते हैं, कुछ कृष्ण और दूसरे रहीम और कई उसे गॉड कहते हैं | सब उसी एक तत्त्व की पूजा करते हैं, परन्तु जैसे सब आहार सभी को अनुकूल नहीं आते, उसी तरह सब नाम सबको नहीं भाते | हरएक अपनी अपनी परिस्थिति के अनुसार नाम पसन्द कर लेता है और ईश्वर अन्तर्यामी, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ होने के कारण हमारी भीतरी भावनाओं को जानता है और हमारी पात्रता के अनुसार उत्तर देता है |

इसीलिए पूजा या प्रार्थना वाणी से नहीं, हृदय से करने की चीज़ है | और यही कारण है कि उसे गूंगा और तुतलानेवाला, अज्ञानी और मूर्ख सब समान रूप से कर सकते हैं | पर जिन लोगों की वाणी में तो अमृत है, परन्तु जिनके हृदय विष से परिपूर्ण हैं, उनकी प्रार्थना कभी नहीं सुनी जाती | इसीलिए जो ईश्वर की प्रार्थना करना चाहे उसे अपना हृदय स्वच्छ कर लेना चाहिए | राम हनुमान की सिर्फ वाणी पर ही नहीं, उनके हृदय में भी विराजमान थे | उन्होंने हनुमान को अपार बल दिया | हनुमान ने ईश्वर के बल से पहाड़ को उठा लिया और समुद्र को पार किया | श्रद्धा ही हमें तूफानी समुद्रों के पार ले जाती है, श्रद्धा ही पहाड़ों को हिलाती है और श्रद्धा ही समुद्र को लाँघ जाती है | यह श्रद्धा अन्तर्यामी ईश्वर के सजीव और जाग्रत भान के सिवा और कुछ नहीं है | जिसने यह श्रद्धा प्राप्त कर ली है उसे और कुछ नहीं चाहिए | शरीर रोगी होने पर भी उसकी आत्मा स्वस्थ है; शरीर से शुद्ध होकर वह आध्यात्मिक दौलत के मजे लूटता है |

लेकिन यह पूछा जा सकता है कि 'इस हद तक हृदय की शुद्धि हो कैसे ?' मुँह की भाषा आसानी से सिखा दी जाती है, परन्तु हृदय की भाषा कौन सिखा सकता है ? केवल भक्त – सच्चा भक्त ही उसे जानता है और सिखा सकता है | गीता ने तीन स्थानों पर भक्त की व्याख्या की है और उसकी सामान्य चर्चा तो हर जगह की है | परन्तु भक्त की व्याख्या का ज्ञान हमारा अधिक मार्गदर्शन नहीं कर सकता | इस पृथ्वी पर भक्त विरले ही होते हैं | इसीलिए मैंने सेवाधर्म को उसका साधन बताया है | जो अपने

मानव-बन्धुओं की सेवा करता है, उसके हृदय में निवास करने की भगवान स्वयं इच्छा करते हैं | इसीलिए नरसिंह मेहता ने – जो इस रहस्य को जानते थे – कहा है कि 'वैष्णवजन तो तेने कहिए जे पीड पराई जाणे रे' | अबू-बेन-आदम भी ऐसा ही था | उसने मनुष्यों की सेवा की थी, इसीलिए ईश्वर के सेवकों की सूची में उसका नाम सबसे ऊपर था |

परन्तु दुखी और पीड़ित कौन है ? दलित और दरिद्र लोग | इसीलिए जिसे भक्त बनना हो उसे शरीर, आत्मा और मन से इनकी सेवा करनी चाहिए | जो दलित वर्गों को अछूत मानता है, वह शरीर द्वारा उनकी सेवा कैसे कर सकता है ? जो अपने शरीर को इतना भी कष्ट देने को तैयार नहीं है कि ग़रीबों के खातिर काते और जो झूठे बहाने बनाता है, वह सेवा का अर्थ नहीं जानता | हट्टे-कट्टे अभागों को दान नहीं मिलना चाहिए, उनसे रोटी के लिए काम करने को कहना चाहिए | दान से उनका पतन होता है | जो ग़रीबों के सामने स्वयं कातता है और उन्हें भी कातने को कहता है, वह ईश्वर की जैसी सेवा करता है वैसी और कोई नहीं करता | भगवान भगवद्-गीता में कहते हैं: 'जो भक्तिभाव से मुझे पत्र-पुष्प-फल जैसी तुच्छ वस्तुएँ भी अर्पण करता है वह मेरा सेवक है |' और उनके चरण वहाँ हैं जहाँ छोटे, ग़रीब और आश्रयहीन अभागे रहते हैं | इसीलिए ऐसे लोगों के कल्याण के लिए कातना सबसे बड़ी प्रार्थना, सबसे बड़ी पूजा और सबसे बड़ा त्याग है |

इसीलिए प्रार्थना किसी भी नाम से की जा सकती है | प्रार्थना का वाहन भक्तिपूर्ण हृदय है और सेवा से हृदय प्रार्थनापूर्ण बनता है | जो हिंदू इस युग में पूरे दिल से अछूतों की सेवा करते हैं वे सच्ची प्रार्थना करते हैं, जो हिन्दू और दूसरे लोग ग़रीबों और निर्धनों के लिए प्रार्थनापूर्वक कातते हैं वे सच्ची प्रार्थना करते हैं |

यंग इंडिया, २४-९-१९२५

इस बारे में कोई नियम नहीं बनाया जा सकता कि प्रार्थना अथवा पूजा में कितना समय लगाया जाय | यह अपने-अपने स्वभाव पर निर्भर है | मनुष्य के दैनिक जीवन में ये मूल्यवान घड़ियों होती हैं | प्रार्थना-पूजा आदि का हेतु हमें विवेकी और नम्र बनाना है और वे हमें यह अनुभव कराती हैं कि ईश्वर की मर्जी के बिना कुछ नहीं होता, और हम उस 'कुम्हार के हाथों में केवल मिट्टी हैं' | इन घड़ियों में मनुष्य अपनी पिछली बातों पर विचार करता है, अपनी दुर्बलताओं को स्वीकार करता है, क्षमा-याचना करता है और अधिक अच्छा बनने और करने के लिए बल माँगता है | किसी के लिए एक मिनिट काफी हो सकता है, औरों के लिए २४ घंटे भी थोड़े हो सकते हैं | जिनके हृदय में ईश्वर हर समय बसा हुआ है उनके लिए श्रम ही प्रार्थना है | उनका जीवन सतत पूजा या प्रार्थना ही है | जो लोग पाप के लिए ही जीते हैं, भोग के लिए और अपने लिए ही जीते हैं, उनके लिए बहुत समय भी थोड़ा है | अगर उनमें धीरज, श्रद्धा और शुद्ध होने का संकल्प हो तो वे उस समय तक प्रार्थना करते रहेंगे, जब

तक वे अपने भीतर ईश्वर के निश्चित और पावन प्रभाव को महसूस न करने लगें | हम साधारण मनुष्यों के लिए इन दो उग्र मार्गों के बीच का मध्यम मार्ग उचित है | हम यह कह सकने जितने उन्नत नहीं हैं कि हमारे सारे कार्य समर्पण के कार्य हैं और न हम इतने गिर गये हैं कि केवल अपने लिए ही जीते हैं | इसीलिए सब धर्मों ने सामान्य प्रार्थना के लिए अलग समय नियत कर दिया है | दुर्भाग्य से प्रार्थना आजकल दंभपूर्ण नहीं तो निरी यांत्रिक और नाममात्र की ज़रूर हो गयी है | ज़रूरत इस बात की है कि भक्ति के साथ सच्चा भाव हो |

ईश्वर से किसी वस्तु की याचना के अर्थ में निश्चित व्यक्तिगत प्रार्थना अपनी ही भाषा में होनी चाहिए | इससे अधिक भव्य याचना और क्या हो सकती है कि हम ईश्वर से यह माँगें कि हम सब प्राणियों के साथ न्याय का बर्ताव करें ?

यंग इंडिया, १०-६-१९२६

१५

उपवास

सच्चा उपवास शरीर, मन और आत्मा की शुद्धि करता है | वह इन्द्रियों का दमन करता है और उस हद तक आत्मा को मुक्त करता है | सच्चे हृदय से की हुई प्रार्थना चमत्कार कर सकती है | वह और भी अधिक शुद्धि के लिए आत्मा की तीव्र लालसा है | जब इस प्रकार प्राप्त की हुई शुद्धता का किसी उदात्त हेतु के लिए उपयोग किया जाता है तो वह प्रार्थना बन जाती है | गायत्री के भौतिक उपयोग से, बीमारों को अच्छा करने के लिए उसके जाप से यही अर्थ प्रगट होता है जो हमने प्रार्थना को दिया है | जब यही गायत्री का जाप नम्र और एकाग्र चित्त से समझ के साथ राष्ट्रीय कठिनाइयों और संकटों के समय किया जाता है, तब वह संकट-नियंत्रण का एक अत्यंत प्रबल अस्त्र बन जाता है | यह मान लेना सबसे बड़ी भूल है कि गायत्री का जाप, नमाज या इसलिए प्रार्थना अज्ञानियों या विचारहीनों के करने लायक कोई अंधविश्वास है | ईसाई प्रार्थना या उपवास शुद्धि की एक अत्यंत शक्तिशाली प्रक्रिया है और जो चीज़ शुद्धि करती है वह अवश्य ही हमें अपना कर्तव्य अधिक अच्छी तरह करने और अपना लक्ष्य सिद्ध करने के लिए समर्थ बनाती है | इसीलिए यदि कभी ऐसा प्रतीत हो कि उपवास और प्रार्थना सफल नहीं होते, तो इसका कारण यह नहीं है कि उनमें कुछ सार नहीं है, परन्तु यह है कि उनके पीछे सच्ची वृत्ति नहीं है |

कोई मनुष्य उपवास तो करे परन्तु सारा समय, जैसे कि अधिकांश लोग जन्माष्टमी के दिन करते हैं, यों ही बेकार गँवा दे, तो स्वाभाविक है कि उसको अधिक शुद्धि के रूप में न केवल उपवास का कोई फल मिलेगा, बल्कि इसके विपरीत ऐसे दूषित उपवास के अन्त में वह पतित हो जायेगा | सच्चा उपवास वह है जिसके साथ शुद्ध विचारों को ग्रहण करने की तैयारी हो और शैतान के सारे प्रलोभनों का विरोध करने का संकल्प हो | इसी प्रकार सच्ची प्रार्थना वह है जो बुद्धिसंगत और निश्चित हो | हमें उसके साथ एकाकार होना पड़ता है | जबान से अल्लाह का नाम लेते और माला जपते हुए हमारा मन इधर-उधर भटकता हो तो वह बेकार है |

यंग इंडिया, २४-३-१९२०

अलबत्ता, इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि उपवास सचमुच दबाव डालनेवाले हो सकते हैं | स्वार्थपूर्ति के लिए किये गये उपवास ऐसे ही हैं | किसी आदमी से रुपया ऐंठने या इसी तरह का कोई व्यक्तिगत काम निकालने के लिए किया गया उपवास दबाव या अनुचित प्रभाव डालने के बराबर होगा | ऐसे अनुचित प्रभाव के विरोध का मैं नि:संकोच समर्थन करूँगा | जो उपवास मेरे विरुद्ध किये

गये हैं या जिनके करने की धमकी दी गई है, उनमें मैंने खुद ऐसे दबाव का विरोध किया है | और अगर यह दलील दी जाय कि स्वार्थपूर्ण और स्वार्थरहित उद्देश्य की विभाजक रेखा अकसर बहुत बारीक होती है, तो मैं कहूँगा कि जो आदमी किसी उपवास का हेतु स्वार्थपूर्ण या नीच समझता हो उसे उसके आगे झुकने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर देना चाहिए, फिर भले उसके परिणाम-स्वरूप उपवास करनेवाले की मृत्यु ही हो जाय | यदि लोग उन उपवासों की परवाह न करने के आदी बन जाएँ, जो उनकी राय में अनुचित उद्देश्य से किये जाते हैं, तो उन उपवासों में दबाव और अनुचित प्रभाव का रंग नहीं रहेगा | सभी मानव-संस्थाओं की भांति उपवासों के भी सदुपयोग और दुरपयोग दोनों हो सकते हैं | परन्तु सत्याग्रह के शस्त्रागार के एक महान अस्त्र के रूप में उसे दुरूपयोग की संभावना के डर से छोड़ा नहीं जा सकता | सत्याग्रह की रचना और नियोजन हिंसा का स्थान ले सकनेवाले एक कारगर उपाय के रूप में किया गया है | सत्याग्रह का यह उपयोग अभी अपने प्रारंभिक काल में है, इसीलिए अभी वह पूर्णता को नहीं पहुँचा है | परन्तु चूँकि आधुनिक सत्याग्रह का जन्मदाता मैं हूँ, इसीलिए अगर मैं उसके अनेक उपयोगों में से किसी को भी छोड़ दूं, तो अपना यह दावा खो देता हूँ कि मैं एक नम्र जिज्ञासु की वृत्ति से उसका इस्तेमाल कर रहा हूँ |

हरिजन, ९-९-१९३३

ईसाइयों की आपत्तियाँ

(श्री सी. एफ. एण्ड्रूज ने गांधीजी को एक पत्र लिखा था, जिसमें बताया था कि इंग्लैंड के ईसाइयों में 'आमरण अनशन' के विरुद्ध नैतिक तिरस्कार का भाव है | इसका हवाला देते हुए गांधीजी ने लिखा:)

हिन्दुओं का धार्मिक साहित्य उपवास के उदाहरणों से भरा पड़ा है और हज़ारों हिन्दू आज भी जरा-जरा से निमित्त पर उपवास करते हैं | यही एक ऐसी वस्तु है जिससे कम से कम हानि होती है | इसमें शक नहीं कि हरएक अच्छी चीज़ की तरह उपवासों का भी दुरूपयोग होता है | यह अनिवार्य है | सिर्फ इसीलिए हम भलाई करना नहीं छोड़ सकते कि कभी कभी भलाई की आड़ में बुराई की जाती है |

मेरी असली मुश्किल अपने प्रोटेस्टेन्ट ईसाई भाइयों के साथ है | उनमें मेरे अनेक मित्र हैं और उनकी मित्रता का मेरी नजर में अपार महत्त्व है | मुझे उनके निकट स्वीकार करना चाहिए कि यद्यपि उनके साथ के प्रथम संपर्क में ही मुझे उपवासों के लिए उनकी अरुचि मालूम हो गई थी, फिर भी मैं उसे कभी समझ नहीं सका हूँ |

इन्द्रिय-दमन को संसारभर में आध्यात्मिक प्रगति की शर्त माना गया है | उपवास का व्यापक अर्थ करें तो उपवास के बिना कोई प्रार्थना नहीं हो सकती | संपूर्ण उपवास पूरी तरह और अक्षरश: आत्मत्याग

है | वह सच्ची से सच्ची प्रार्थना है | "मेरा जीवन ले-ले और वह सदा केवल तेरे ही लिए हो", यह प्रार्थना केवल जबानी जमा-खर्च या शब्दालंकार नहीं है और न होना चाहिए | यह तो संपूर्ण हृदय से परिणाम की परवाह न करते हुए खुशी से समर्पण करने की बात है | अन्न और जल का भी त्याग केवल समर्पण का प्रारंभ है, अल्पतम भाग है |

जब मैं इस लेख के लिए अपने विचारों का संग्रह कर रहा था, तब ईसाइयों की लिखी हुई एक पुस्तिका मेरे हाथों में आई | उसमें उपदेश के बजाय आचरण की आवश्यकता पर एक अध्याय था | उसमें जोनाह के तीसरे अध्याय का एक उद्धरण आता है | पैगम्बर ने भविष्यवाणी की थी कि उनके निनेवेह नगर में प्रवेश करने के चालीसवें दिन वह महान शहर नष्ट हो जायेगा:

> "निनेवेह के लोगों का ईश्वर पर विश्वास था | उन्होंने एक उपवास घोषित किया और छोटे से बड़े तक सबने टाट के कपड़े धारण कर लिये | सन्देशा निनेवेह के राजा के पास भी पहुँचा; वह अपने सिंहासन से उठा और उसने अपनी पोशाक उतारकर टाट के कपड़े पहन लिए और राख में बैठ गया | और उसने डोंडी पिटवा कर निनेवेह में राजा और सरदारों के नाम पर यह आज्ञा घोषित और प्रकाशित कराई कि 'मनुष्य या पशु, भेड़-बकरी या गाय-भैंस कोई कुछ न खाये-पिये; वे न भोजन करें, न पानी पियें | परन्तु मनुष्य और पशु सब टाट के कपड़े पहन लें और ईश्वर से जोर के साथ पुकार करें: 'सब अपने बुराई के रास्ते से हट जाएँ और अपने हाथों में भरी हुई हिंसा को छोड़ दें | हो सकता है कि यह देखकर ईश्वर अपना इरादा बदल दे और अपने भयंकर क्रोध से मुँह मोड़ ले और हमारा नाश न हो |' और ईश्वर ने उनके कामों से देख लिया कि वे कुमार्ग से विमुख हो गये हैं; और ईश्वर ने उन्हें सजा करने की अनिष्ट बात पर पश्चात्ताप किया और वैसा नहीं किया |"

इस प्रकार यह एक 'आमरण उपवास' ही था | परन्तु प्रत्येक आमरण उपवास आत्मघात नहीं होता | निनेवेह के राजा और प्रजा का यह उपवास मुक्ति के लिए ईश्वर से एक महान और विनम्र प्रार्थना थी | अगर मैं अपने उपवास की बाइबलवाले उपवास से तुलना करूँ, तो मेरा उपवास ऐसा ही था | जोनाह की पुस्तक का यह अध्याय पढ़कर ऐसा मालूम होता है, मानो वह रामायण की कोई घटना हो |

हरिजन, १५-४-१९३३

१६

शाश्वत द्वंद्व-युद्ध

विधाता ने मनुष्य का लक्ष्य पुरानी आदतों पर विजय पाना, अपनी बुराइयों पर काबू रखना और भलाई को फिर से उसके उचित स्थान पर स्थापित करना बनाया है | अगर धर्म हमें यह विजय प्राप्त करना नहीं सिखाता तो वह कुछ भी नहीं सिखाता | परन्तु जीवन के इस सच्चे साहस में सफलता का कोई राजमार्ग नहीं है | जिस सबसे बड़ी बुराई से हम पीड़ित हैं वह कायरता है | शायद वह सबसे बड़ी हिंसा भी है और रक्तपात वगैरा के नाम से आम तौर पर जो हिंसा होती है उससे तो अवश्य ही कायरता बड़ी हिंसा है | कारण वह ईश्वर में श्रद्धा न होने से और उसके गुणों के अज्ञान से पैदा होती है | ... परन्तु मैं अपना ही प्रमाण देकर कह सकता हूँ कि हार्दिक प्रार्थना नि:सन्देह सबसे प्रबल अस्त्र है, जो कायरता और अन्य सब बुरी आदतों पर विजय प्राप्त करने के लिए मनुष्य के पास है | अपने अन्तर में ईश्वर के वास का सजीव विश्वास न हो तो प्रार्थना असंभव है |

इसी प्रक्रिया को ईसाई और इस्लाम धर्म ईश्वर और शैतान के बीच होनेवाला बाहरी नहीं भीतरी द्वंद्व बताते हैं; पारसी धर्म अहुरमज्द और अहरीमान के बीच तथा हिन्दू धर्म भलाई और बुराई की शक्तियों के बीच का द्वंद्व बताता है | हमें अपना निर्णय कर लेना है कि हम बुराई की शक्तियों का साथ दें या भलाई की शक्तियों का | और ईश्वर की प्रार्थना करना ईश्वर और मनुष्य के बीच पवित्र गठबंधन के सिवा और कुछ नहीं है | उसके द्वारा मनुष्य शैतान के फँदे से मुक्ति प्राप्त करता है | परन्तु हार्दिक प्रार्थना जीभ का जाप नहीं है | यह तो एक आन्तरिक अभ्यर्थना है, जो मनुष्य के एक-एक शब्द, एक-एक काम, नहीं-नहीं, एक-एक विचार में प्रगट होती है | जब कोई बुरा विचार उस पर सफल आक्रमण करता है, तो वह जान ले कि उसने केवल वाणी से प्रार्थना की है | यही बात उसके मुँह से निकल जानेवाले बुरे शब्द के बारे में और उसके हाथ से हो जानेवाले बुरे काम के बारे में है | सच्ची प्रार्थना बुराइयों की इस त्रिमूर्ति के खिलाफ उसकी अचूक ढाल है | पहले ही प्रयत्न में ऐसी सच्ची प्रार्थना को सदा सफलता नहीं मिलती | हमें अपने विरुद्ध प्रयत्न करना पड़ता है, अपने बावजूद विश्वास रखना पड़ता है, क्योंकि हमारे लिए महीने ही वर्षों के बराबर होते हैं | इसीलिए अगर हमें प्रार्थना की क्षमता अनुभव करनी है, तो अपार धीरज की आदत डालनी होगी | हमारे सामने अंधकार होगा, निराशा होगी और इससे भी बुरी बातें होंगी; परन्तु हमें इन सबसे संग्राम करने का साहस रखना होगा और कायरता के असर से बचना होगा | प्रार्थनावाले मनुष्य के लिए पीछे हटने की तो कोई बात ही नहीं होती |

मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह कोई परियों की कहानी नहीं है | मैंने कोई काल्पनिक तसवीर नहीं खींची है | मैंने उन पुरुषों की गवाही का सार दे दिया है, उन्होंने प्रार्थना के द्वारा अपनी उर्ध्व गति में आनेवाली प्रत्येक कठिनाई को पार किया है; और मैंने अपना भी नम्र प्रमाण जोड़ दिया है कि जैसे-जैसे मेरी उम्र बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे मैं यह अनुभव करता जाता हूँ कि मुझे श्रद्धा और प्रार्थना से कितनी शक्ति प्राप्त हुई है | और ये दोनों वस्तुएँ मेरे लिए एक ही हैं | मैं जिस अनुभव का हवाला दे रहा हूँ, वह कुछ घंटों, दिनों या हफ्तों तक ही सीमित नहीं है; यह अनुभव मुझे लगातार लगभग ४० वर्षों से मिलता आ रहा है | मुझे भी निराशाओं के घोर अंधकार का, हार स्वीकार करने या सावधानी बरतने की सलाहों का और अहंकार के सूक्ष्म आक्रमणों का अपना हिस्सा मिला है, परन्तु मैं कह सकता हूँ कि मेरी श्रद्धा ने – और मैं जानता हूँ कि वह अभी तक बहुत थोड़ी है, कम से कम उतनी बड़ी तो नहीं है जितनी मैं चाहता हूँ – अन्त में उन सब कठिनाइयों पर अब तक विजय प्राप्त की है | अगर हमें अपने में श्रद्धा है, अगर हमारे भीतर प्रार्थनापूर्ण हृदय है, तो हम ईश्वर को प्रलोभन न दें, उसके साथ कोई शर्त न करें |... जब तक हम अपने को शून्य नहीं बना लेते, तब तक अपने भीतर की बुराई को नहीं जीत सकते | जो एकमात्र सच्ची और प्राप्त करने के योग्य स्वतंत्रता है, उसकी ईश्वर हमसे संपूर्ण आत्म-समर्पण से कम कीमत नहीं माँगता | और जब कोई मनुष्य इस प्रकार अपने आपको ईश्वर में खो देता है, तब वह तुरन्त अपने को सब प्राणियों की सेवा में संलग्न पाता है | वह उसके लिए आनन्द और मनोरंजन बन जाती है | वह एक नया आदमी हो जाता है, जिसे ईश्वर की सृष्टि की सेवा में कार्यरत होने में कभी थकावट नहीं मालूम होती |

यंग इंडिया, २०-१२-१९२८

१७

आत्मशुद्धि

प्रेम और अहिंसा का प्रभाव अद्वितीय है | परन्तु वे अपना काम बिना शोरगुल, दिखावे या प्रदर्शन के करते हैं | उनके लिए आत्म-विश्वास का होना ज़रूरी है और आत्म-विश्वास के लिए आत्मशुद्धि होनी चाहिए | निष्कलंक चरित्र और आत्मशुद्धिवाले मनुष्यों के प्रति आसानी से विश्वास हो जायेगा और उनके आसपास का वातावरण अपने आप शुद्ध हो जायेगा |

यंग इंडिया, ६-९-१९२८

सब प्राणियों के साथ तादात्म्य साधना आत्मशुद्धि के बिना असंभव है; आत्मशुद्धि के बिना अहिंसा-धर्म का पालन थोथा स्वप्न ही रहेगा; जो हृदय के शुद्ध नहीं हैं, उन्हें ईश्वर-दर्शन कभी नहीं हो सकता | इसलिए आत्मशुद्धि का अर्थ जीवन के सभी पहलुओं में शुद्धि होना चाहिए | और शुद्धि चूँकि बड़ी संक्रामक है, इसलिए अपनी शुद्धि से अपने आसपास की शुद्धि भी अवश्य होती है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६१५

परन्तु शुद्धि का मार्ग कठिन और दुर्गम है | पूर्ण शुद्धता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को मन, वचन और कर्म में सर्वथा विकार-रहित बनना पड़ता है | उसे प्रेम और घृणा, राग और द्वेष की विरोधी धाराओं से ऊपर उठना होता है | मैं जानता हूँ कि मुझमें अभी तक वह त्रिविध शुद्धि नहीं आयी है, यद्यपि मैं उसके लिए सतत, अविश्रान्त प्रयत्न करता हूँ | यही कारण है कि संसार की प्रशंसा मुझे प्रभावित नहीं करती, सच तो यह है कि वह मुझे चुभती है | सूक्ष्म विकारों पर विजयी होना मुझे शस्त्रबल द्वारा संसार की भौतिक विजय से कठिन प्रतीत होता है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६१६

किसी पवित्र कार्य में कभी हार न मानो और आगे के लिए दृढ़ संकल्प कर लो कि तुम शुद्ध रहोगे और ईश्वर की ओर से तुम्हें अवश्य मदद मिलेगी | परन्तु ईश्वर अहंकारियों की प्रार्थना कभी नहीं सुनता और न उनकी सुनता है जो उसके साथ सौदा करते हैं |... अगर तुम उससे सहायता चाहते हो तो उसके पास अपने सब आग्रह छोड़कर जाओ, मन में कोई 'किन्तु-परन्तु' मत रखो और यह डर या शंका भी न रखो कि वह तुम जैसे पतित प्राणी की सहायता कैसे कर सकता है | जिसने सहायता माँगनेवाले लाखों को मदद दी, वह क्या तुम्हें ही छोड़ देगा ? वह कोई भी अपवाद नहीं करता और तुम देखोगे कि तुम्हारी प्रत्येक प्रार्थना सुनी जायेगी | अत्यंत अशुद्ध व्यक्तियों की प्रार्थना भी सुनी जायेगी | यह मैं

अपने निजी अनुभव से कहता हूँ | मैं यातनाओं में से गुजर चुका हूँ | पहले स्वर्गीय राज्य की खोज़ करो, फिर और सब कुछ तुम्हें मिल जायेगा |

यंग इंडिया, ४-४-१९२९

१८

मौन का महत्त्व

मुझे अकसर खयाल होता है कि सत्य के शोधक को चुप रहना चाहिए | मुझे मौन की विलक्षण क्षमता का ज्ञान है | मैं दक्षिण अफ्रीका में एक ट्रेपिस्ट मठ देखने गया था | वह बड़ा सुन्दर स्थान था | वहाँ के अधिकांश निवासियों ने मौनव्रत ले रखा था | मैंने मठ के मुख्य व्यवस्थापक से पूछा कि इसका हेतु क्या है | उसने कहा कि हेतु तो प्रकट ही है : 'हम सब दुर्बल मनुष्य हैं | अकसर हम नहीं जानते कि हम क्या कहते हैं | अगर हमें उस छोटी-सी मूक आवाज़ को सुनना है, जो सदा हमारे भीतर बोलती रहती है, तो वह हमें सुनाई नहीं देगी यदि हम लगातार बोलते रहेंगे |' मैंने वह कीमती पाठ समझ लिया | मुझे मौन का रहस्य मालूम है |

यंग इंडिया, ६-८-१९२५

अनुभव ने मुझे सिखाया है कि सत्य के पुजारी के लिए मौन उसके आध्यात्मिक अनुशासन का एक अंग है | जाने-अनजाने बढ़ा-चढ़ाकर कहने की, सत्य को दबा देने की या कम-ज्यादा कर देने की वृत्ति मनुष्य की स्वाभाविक कमजोरी है और मौन उस पर विजय प्राप्त करने के लिए ज़रूरी है | अल्पभाषी मनुष्य अपनी वाणी में क्वचित ही विचारहीन होता है; वह एक-एक शब्द को तौलेगा | कितने ही आदमी बोलने के लिए अधीर दिखाई देते हैं | किसी सभा का अध्यक्ष ऐसा नहीं होता, जिसके पास बोलना चाहनेवालों के पर्चों का ढेर न आता हो | और जिसे भी बोलने दिया जाता है, वह आम तौर पर समय की मर्यादा का उल्लंघन करता है, अधिक समय माँगता है और इजाजत के बगैर बोलता चला जाता है | यह सब बोलना संसार के लिए शायद ही लाभदायक होता होगा | स्पष्ट ही उतना समय बर्बाद अवश्य होता है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ॰ ८४

जब हम इस विषय पर विचार करते हैं तो यह महसूस किये बिना नहीं रह सकते कि अगर हम उद्विग्न प्राणी मौन का महत्त्व समझ लें, तो दुनिया का आधा दुख खतम हो जायेगा | हम पर आधुनिक सभ्यता का आक्रमण होने से पहले हमें चौबीस में से कम से कम छह से आठ घंटे मौन के मिलते थे | आधुनिक सभ्यता ने हमें रात को दिन में और मूल्यवान मौन को व्यर्थ के शोरगुल में बदलना सिखा दिया है | यह कितनी बड़ी बात होगी अगर हम अपने व्यस्त जीवन में रोज़ कम से कम दो घंटे अपने मन के एकान्त में चले जायें और हमारे भीतर जो महान मौन की वाणी है उसे सुनने की तैयारी करें |

अगर हम सुनने को तैयार हों तो ईश्वरीय रेडियो तो हमेशा गाता ही रहता है | परंतु मौन के बिना उसे सुनना असंभव है | संत थेरेसा ने मौन के मधुर परिणाम का सार बताते हुए एक मोहक चित्र खींचा है:

> "आप तुरंत महसूस करेंगे कि आपकी इन्द्रियाँ सिमटकर अपनी जगह आ जाती हैं; जिस तरह मधुमक्खियाँ अपने छत्ते में लौट आती हैं, उसी तरह वे वापिस आ जाती हैं, काम करने के लिए अपने को बन्द कर लेती हैं और इसके लिए आपको कोई प्रयत्न या चिन्ता नहीं करनी पड़ती | आपकी आत्मा अपने प्रति जो हिंसा करती रही है, उसका बदला ईश्वर यों देता है; और उसे इन्द्रियों पर ऐसा प्रभुत्व प्रदान करता है कि जब वह अन्तर्मुख होना चाहती है, तब इन्द्रियों को सिमटकर एक जगह जाने के लिए केवल इशारा ही काफी हो जाता है | ज्यों ही आदेश मिलता है, त्यों ही वे पहले से अधिक जल्दी लौट आती हैं | अन्त में इस प्रकार बार-बार अभ्यास करने के बाद ईश्वर उन्हें संपूर्ण शांति और ध्यान की अवस्था की ओर ले जाता है|"

हरिजन, २४-९-१९३८

मेरे लिए यह (मौन) अब शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की आवश्यकता बन गया है | शुरू-शुरू में वह काम के दबाव से राहत पाने को लिया जाता था | इसके सिवा मुझे लिखने को समय चाहिए था | परंतु थोड़े दिन के अभ्यास के बाद मुझे उसका आध्यात्मिक मूल्य मालूम हो गया | मेरे मन में अचानक यह विचार दौड़ गया कि यही समय है जब मैं ईश्वर से अच्छी तरह लौ लगा सकता हूँ | और अब तो मुझे ऐसा महसूस होता है, मानो मेरी मनोरचना स्वभावत: मौन के लिए ही हुई है |

हरिजन, १०-१२-१९३८

मेरे जैसे सत्य के जिज्ञासु के लिए मौन बड़ा सहायक है | मौन वृत्ति में आत्मा को उसका मार्ग अधिक स्पष्ट दिखाई देता है और जो कुछ पकड़ में नहीं आता या जिसे समझने में भ्रम की संभावना होती है, वह स्फटिक की तरह स्पष्ट दिखाई देने लगता है | हमारा जीवन सत्य की एक लंबी और कठोर खोज़ है और आत्मा को अपनी पूरी ऊँचाई तक पहुँचने के लिए भीतरी विश्राम और शांति की ज़रूरत होती है |

हरिजन, १०-१२-१९३८

१९

धर्मों की समानता

सब धर्म एक ही स्थान पर पहुँचने के अलग-अलग रास्ते हैं | अगर हम एक ही लक्ष्य पर पहुंच जाते हैं, तो अलग-अलग रास्ते अपनाने में क्या हर्ज है ? वास्तव में जितने मनुष्य हैं उतने ही धर्म हैं |

हिन्द स्वराज (१९४६); पृ॰ ३६

मैं मानता हूँ कि कम या अधिक संसार के सभी बड़े-बड़े धर्म सच्चे हैं | 'कम या अधिक' मैं इसलिए कहता हूँ कि मेरा विश्वास है कि मानव-प्राणी के अपूर्ण होने से जहाँ उसका हाथ लगता है वहीं अपूर्णता आ जाती है | पूर्णत्व तो केवल ईश्वर का ही गुण है | और वह अवर्णनीय है; भाषा में उसका वर्णन नहीं हो सकता | हाँ, मेरा यह विश्वास ज़रूर है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए ईश्वर के बराबर ही पूर्ण हो जाना संभव है | हम सबके लिए पूर्णता की आकांक्षा रखना ज़रूरी है, परंतु जब वह सुखद स्थिति प्राप्त हो जाती है तब वह अवर्णनीय, अकथनीय हो जाती है | और इसलिए मैं अत्यंत नम्र भाव से स्वीकार करता हूँ कि वेद, कुरान और बाइबल भी ईश्वर के अपूर्ण वचन हैं, और चूँकि हम अनेक विचारों में इधर उधर बह जानेवाले अपूर्ण प्राणी हैं, इसलिए ईश्वर की इस वाणी को पूरी तरह समझना भी हमारे लिए असंभव है |

यंग इंडिया, २२-९-१९२७

एक ईश्वर में विश्वास होना सभी धर्मों का मूल आधार है | परंतु मैं ऐसे किसी समय की कल्पना नहीं कर सकता, जब पृथ्वी पर व्यवहार में एक ही धर्म होगा | सिद्धान्त रूप में, चूँकि ईश्वर एक है, इसलिए एक ही धर्म हो सकता है | परंतु व्यवहार में मैं ऐसे कोई दो आदमी नहीं जानता जिनकी ईश्वर-सम्बन्धी कल्पना एक ही हो | इसलिए शायद हमेशा ही अलग-अलग प्रकृतियों और जलवायु-सम्बन्धी परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग धर्म होंगे |

हरिजन, २-२-१९३४

तात्कालिक आवश्यकता यह नहीं है कि एक धर्म हो, बल्कि यह है कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों में परस्पर आदर और सहिष्णुता हो | हम निर्जीव समानता नहीं प्राप्त करना चाहते, परंतु विविधता में एकता चाहते हैं | परम्पराओं, पैतृक संस्कारों, जलवायु और दूसरी परिस्थितियों को मिटाने का प्रयत्न किया जायेगा तो वह असफल ही नहीं होगा, बल्कि अधर्म भी होगा | धर्मों की आत्मा एक है, परंतु

वह अनेक रूपों में प्रगट हुई है | ये रूप अनन्त काल तक रहेंगे | ज्ञानी पुरुष इस बाहरी आवरण की परवाह न करके विभिन्न आवरणों के भीतर रहनेवाली एक ही आत्मा के दर्शन करेंगे |

यंग इंडिया, २५-९-१९२५

हिन्दू धर्म में ईसा, मुहम्मद, जरथुस्त्र और मूसा सबके लिए समान स्थान है | मेरे लिए ये एक ही बाग के सुन्दर पुष्प हैं या एक ही शानदार पेड़ की शाखाएँ हैं | इसलिए वे समान रूप में सत्य हैं, यद्यपि उनकी प्रेरणा ग्रहण करनेवाले और उनका अर्थ लगानेवाले मनुष्य हैं, इसलिए वे सब समान रूप में अपूर्ण भी हैं | जिस ढंग से धर्म-परिवर्तन की प्रवृत्ति आज भारत में और अन्यत्र चल रही है, उसे स्वीकार करना मेरे लिए असंभव है | यह एक ऐसी भूल है जो शायद शांति की और संसार की प्रगति में सबसे बड़ी रुकावट है | यह कहना कि 'धर्म परस्पर-विरोधी हैं' ईश्वर की निन्दा करना है | फिर भी भारत की हालत का यह ठीक-ठीक वर्णन है | भारतभूमि धर्मों की या धर्मों की जननी है, ऐसा मैं मानता हूँ | अगर वह सचमुच धर्मों की जननी है तो उसके जननीत्व की परीक्षा हो रही है | एक ईसाई की इच्छा एक हिन्दू को ईसाई बनाने की या हिन्दू की इच्छा ईसाई को हिन्दू बनाने की क्यों होनी चाहिए ? यदि हिन्दू भला या ईश्वर परायण मनुष्य है तो उसे इसी से संतोष क्यों न होना चाहिए ? अगर मनुष्य की नीति-अनीति का कोई खयाल नहीं करना हो तो किसी गिरजे, मस्जिद या मंदिर में विशेष प्रकार की पूजाविधि एक थोथी चीज़ हो जाती है; और वह व्यक्तिगत या सामाजिक विकास के लिए रुकावट भी हो सकती है | और अमुक रीति से उपासना करने या अमुक ही मंत्र जापने का आग्रह भयंकर झगड़ों का प्रबल कारण बन सकता है और उसका परिणाम हिंसक लड़ाइयों में और धर्म अर्थात स्वयं ईश्वर में घोर अविश्वास उत्पन्न होने के रूप में आ सकता है |

हरिजन, ३०-१-१९३७

परंतु दूसरे धर्मों के शास्त्रों की आलोचना करना या उनके दोष बताना मेरा काम नहीं है | अलबत्ता, यह मेरा विशेष अधिकार है और होना चाहिए कि उनमें जो सच्चाइयाँ हों उनकी मैं घोषणा करूँ और उन पर अमल करूँ | इसलिए मुझे कुरान की या पैगम्बर के जीवन की जो बातें समझ में न आयें, उनकी आलोचना या निन्दा नहीं करनी चाहिए | परंतु उनके जीवन के जिन पहलुओं को मैं समझ सका हूँ और जो मुझे अच्छे लगे हैं, उनकी प्रशंसा करने के हर मौके का मैं स्वागत करता हूँ | रही वे बातें जिनके बारे में कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं; उन्हें मैं धर्मप्रेमी मुसलमान मित्रों की दृष्टि से देखकर संतोष कर लेता हूँ और साथ ही इस्लाम प्रसिद्ध मुस्लिम प्रवक्ताओं की रचनाओं की सहायता से उन्हें समझने की कोशिश करता हूँ | दूसरे धर्मों के प्रति ऐसा पूज्य भाव रखकर ही मैं सब धर्मों की समानता के सिद्धान्त का पालन कर सकता हूँ | परंतु हिन्दू धर्म को शुद्ध करने और शुद्ध रखने के लिए उसके दोष बताना मेरा अधिकार भी है और कर्तव्य भी | परंतु जब अहिन्दू लोग हिन्दू धर्म की आलोचना

करने लगते हैं और उसके दोष गिनाने लगते हैं, तब वे हिन्दू धर्म के बारे में अपने अज्ञान का ही ढिंढोरा पीटते हैं और उसे हिन्दू दृष्टि से देखने की अपनी असमर्थता प्रगट करते हैं | इससे उनकी दृष्टि विकृत होती है और निर्णय दूषित बनता है | इस प्रकार हिन्दू धर्म के अहिन्दू आलोचकों का मेरा अपना अनुभव मुझे अपनी मर्यादाओं का ज्ञान कराता है और इस्लाम या ईसाई धर्म तथा उनके संस्थापकों की आलोचना करने के बारे में सावधानी रखना सिखाता है |

हरिजन, १३-३-१९३७

इस्लाम का अल्लाह वही है जो ईसाइयों का गॉड और हिन्दुओं का ईश्वर है | जैसे हिन्दू धर्म में ईश्वर के बहुत से नाम हैं, वैसे ही ईस्लाम में भी ईश्वर के अनेक नाम हैं | इन नामों से व्यक्तित्त्व का नहीं, गुणों का निर्देश होता है और अल्पज्ञ मानव ने अपने नम्र ढंग से सर्वशक्तिमान ईश्वर का वर्णन उसे अनेक गुणवाचक विशेषण देकर करने की कोशिश की है, यद्यपि ईश्वर सब विशेषणों से परे, अवर्णनीय, अकल्पनीय और अज्ञेय है | इस ईश्वर में सजीव श्रद्धा होने का अर्थ है मानव-जाति का भ्रातृत्व स्वीकार करना | इसका अर्थ सब धर्मों के लिए समान आदरभाव भी है |

हरिजन, १४-५-१९३८

२०

सहिष्णुता

मुझे सहिष्णुता (टोलरेशन) शब्द पसन्द नहीं है, परंतु इससे अच्छा कोई शब्द ध्यान में नहीं आया | सहिष्णुता में खामखाह यह मान लिया जाता है कि हमारे अपने धर्म से दूसरे धर्म घटिया हैं, जब कि अहिंसा हमें यह सिखाती है कि हम दूसरों के धर्म का उतना ही आदर करें जितना हम अपने धर्म का करते हैं | इस प्रकार हम अपने धर्म की अपूर्णता को स्वीकार कर लेते हैं | जो सत्य का जिज्ञासु प्रेमधर्म का पालन करता है वह इस बात को तुरंत स्वीकार कर लेगा | अगर हमें सत्य के संपूर्ण दर्शन हो जायें तो हम जिज्ञासु नहीं रहते; तब तो ईश्वर के साथ हमारी एकात्मता हो जाती है, क्योंकि सत्य ही ईश्वर है | परंतु चूँकि हम केवल जिज्ञासु हैं, इसीलिए हम अपनी खोज़ जारी रखते हैं और हमें अपनी अपूर्णता का भान होता है | और अगर हम खुद अपूर्ण हैं तो धर्म की हमारी कल्पना भी अपूर्ण ही होगी | जैसे हमने ईश्वर के दर्शन नहीं किये हैं, वैसे ही धर्म की पूर्णता के दर्शन भी नहीं किये हैं | इस प्रकार हमारी कल्पना का धर्म अपूर्ण होता है और उसमें सदा विकास और नये-नये अर्थ करने की गुंजाइश रहती है | इस प्रकार के विकास से ही सत्य की ओर, ईश्वर की ओर प्रगति संभव होती है | और यदि मनुष्यों द्वारा प्रतिपादित सभी धर्म अपूर्ण हैं तो उनकी पारस्परिक तुलना का प्रश्न ही नहीं उठता | सभी धर्मों में सत्य प्रगट हुआ है, परंतु सभी अपूर्ण हैं और उनमें भूल हो सकती है | दूसरे धर्मों के प्रति पूज्यभाव रखने का यह मतलब नहीं कि हम उनके दोषों के प्रति अंधे बन जायें | अपने धर्म के दोषों के प्रति तो हमें बहुत जागरूक रहना चाहिए | लेकिन दोषों के कारण उसे छोड़ने का विचार नहीं करना चाहिए, बल्कि उन दोषों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए | जब हम सब धर्मों को समान दृष्टि से देखेंगे, तब हमें अपने धर्म में दूसरे धर्मों की सभी ग्राह्य बातें अपना लेने में न केवल कोई संकोच होगा, बल्कि हम उसे अपना फर्ज़ समझेंगे |

तब यह सवाल उठता है – इतने सारे धर्म क्यों होने चाहिए ? हम जानते हैं कि धर्म विविध और अनेक हैं | आत्मा एक है, परंतु वह अनेक शरीरों को अनुप्राणित करती है | हम शरीरों की संख्या कम नहीं कर सकते; फिर भी हम आत्मा की एकता स्वीकार करते हैं | जैसे एक पेड़ के एक ही तना होता है, परंतु शाखाएँ और पत्ते अनेक होते हैं, वैसे ही धर्म एक है, परंतु मत-पन्थ कई हैं | ये सब ईश्वर की देन हैं, परंतु उनमें मानव की अपूर्णता का पुट है; क्योंकि वे मनुष्य की बुद्धि और भाषा के माध्यम से गुजरते हैं | ईश्वर-प्रदत्त धर्म भाषातीत है | अपूर्ण मनुष्यों के पास जैसी भी भाषा है उसी में वे उसे रख देते हैं, और उनके शब्दों का अर्थ उतने ही अपूर्ण मनुष्य करते हैं | तब फिर किसका अर्थ सही माना जाये ? अपने-अपने दृष्टिकोण से सभी सही हैं, परंतु यह असंभव नहीं है कि सभी ग़लत हों | इसीलिए

सहिष्णुता की ज़रूरत है | इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपने धर्म के प्रति उदासीन हो जायें, परंतु यह है कि उसके प्रति हमारा प्रेम अधिक बुद्धिपूर्ण और शुद्ध हो | सहिष्णुता से हमें आध्यात्मिक परिज्ञान प्राप्त होता है और वह धार्मिक कट्टरता से उतना ही दूर है जितना उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव से दूर है | धर्म का सच्चा ज्ञान मत-पन्थों के बीच की दीवारों को हटाकर सहिष्णुता उत्पन्न करता है | दूसरे धर्मों के लिए सहिष्णुता रखने से हमें अपने धर्म को सही तौर पर समझने में मदद मिलेगी |

स्पष्ट है कि सहिष्णुता से सही-ग़लत या भले-बुरे के भेद में फर्क नहीं पड़ता | यहाँ शुरू से आखिर तक धर्मों से मेरा आशय संसार के मुख्य धर्मों का ही रहा है, जो सब एक ही तरह के मौलिक सिद्धान्तों पर आधारित हैं और जिनमें उन सिद्धान्तों का पालन करनेवाले सन्त स्त्री-पुरुष हो गये हैं और हैं | भलाई और बुराई के बारे में हमारा दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि हम दुष्टता और पाप के प्रति तो घोर द्वेष रखें, परंतु दुष्ट और सज्जन, पापी और पुण्यात्मा सबके लिए समान रूप में उदारभाव रखें |

यंग इंडिया (बुलेटिन), २-१०-१९३०

इसीलिए आचरण का सुनहरा नियम यह है कि आपस में यह समझकर सहिष्णुता रखी जाय कि हम सबके विचार एक से कभी नहीं होंगे और हम सत्य को आंशिक रूप में और विभिन्न दृष्टियों से ही देख सकते हैं | भले-बुरे की आन्तरिक पहचान सबके लिए एक-जैसी नहीं होती | इसीलिए जहाँ वह व्यक्तिगत आचरण के लिए अच्छा मार्गदर्शन कर सकती है, वहाँ उस आचरण को सब पर लादना प्रत्येक की अन्तरात्मा की स्वतंत्रता में – भले-बुरे की अपनी आन्तरिक पहचान के अनुसार चलने के अधिकार में – असह्य हस्तक्षेप होगा |

यंग इंडिया, २३-९-१९२६

२१

धर्म-परिवर्तन

(विदेशी धर्म-प्रचारकों के सामने दिये गये प्रवचन से)

आप धर्म-प्रचारक भारत में यह सोचकर आते हैं कि यह धर्महीनों, मूर्तिपूजकों और ईश्वर को न जाननेवालों का देश है | ईसाई पादरियों में एक बहुत बड़े पादरी बिशप हेबर ने ये दो पंक्तियाँ लिखी हैं, जो मुझे सदा डंक की तरह चुभती रही हैं : 'जहाँ और सब चीज़ें सुखदायक हैं, लेकिन आदमी ही बुरा है |' काश, वे ये पंक्तियाँ न लिखते ! भारतभर की मेरी यात्राओं में मेरा अपना अनुभव इससे उलटा रहा है | मैं देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक कोई पूर्वग्रह न रखकर सत्य की सतत खोज़ में घूमा हूं, परंतु मैं यह नहीं कह सकता कि इस सुन्दर भूमि पर – जहाँ महान गंगा, ब्रह्मपुत्र और यमुना बहती हैं – बुरे आदमी रहते हैं | वे बुरे नहीं हैं | वे उतने ही सत्य के जिज्ञासु हैं जितने मैं और आप हैं, शायद हमसे अधिक हों | इस पर मुझे एक फ्रांसीसी पुस्तक की याद आती है, जिसका एक फ्रांसीसी मित्र ने मेरे लिए अनुवाद किया था | उसमें ज्ञान की खोज़ की एक काल्पनिक यात्रा का वर्णन है | एक दल भारत में उतरा और उसे एक अछूत की छोटी सी झोंपड़ी में सत्य और ईश्वर के दर्शन हुए | मैं आपसे कहता हूँ कि अछूतों की ऐसी अनेक झोपड़ियाँ हैं जहाँ आपको ईश्वर अवश्य मिलेगा | वे तर्क नहीं करते, परंतु इस विश्वास पर जमे रहते हैं कि ईश्वर है | वे ईश्वर पर उसकी सहायता के लिए निर्भर रहते हैं | और सहायता उन्हें मिल भी जाती है | इन उदात्त अछूतों के बारे में भारत के कोने-कोने में कई कथाएँ कही जाती हैं | उनमें से कुछ बुरे हो सकते हैं, फिर भी उनमें मानवता के अत्यंत उदात्त नमूने मौजूद हैं | परंतु क्या मेरा अनुभव केवल अछूतों पर ही समाप्त हो जाता है ? नहीं | मैं दावे से कहता हूँ कि अब्राह्मण और ब्राह्मण भी ऐसे हैं, जो मानवता के उतने ही बढ़िया नमूने हैं जितने दुनिया के पर्दे पर कहीं भी मिल सकते हैं | भारत में आज भी ऐसे ब्राह्मण हैं जो त्याग, ईश्वर-परायणता और नम्रता की मूर्ति हैं | ऐसे ब्राह्मण भी हैं जो तन-मन लगाकर अछूतों की सेवा कर रहे हैं; उन्हें अछूतों से किसी पुरस्कार की आशा नहीं है, परंतु कट्टरपंथियों से बहिष्कार की ज़रूर है | उन्हें इसकी परवाह नहीं, क्योंकि वे अछूतों की सेवा करके ईश्वर की ही सेवा कर रहे हैं | मैं अपने अनुभव से इसका ठीक प्रमाण दे सकता हूँ | मैं अत्यंत नम्रतापूर्वक ये सब बातें आपके सामने सिर्फ इसीलिए रख रहा हूँ कि आप इस देश को, जिसकी सेवा करने आप यहाँ आये हैं, अधिक अच्छी तरह जान लें | आप यहाँ भारत के लोगों का कष्ट जानकर उसे मिटाने आये हैं | परंतु मुझे आशा है कि आप यहाँ ग्रहण करने की वृत्ति भी लेकर आये हैं | और अगर भारत में आपको देने लायक कोई चीज़ है, तो आप अपने कान बन्द नहीं कर लेंगे, अपनी आँखें बन्द नहीं कर लेंगे, बल्कि इस देश में जो भी अच्छी बात होगी उसे ग्रहण करने को

अपने कान, आँखें और सबसे अधिक अपने दिल खुले रखेंगे | मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि भारत में बहुत कुछ अच्छाई है | आप यह न मान लीजिए कि सन्त जॉन की प्रसिद्ध प्रार्थना का पाठ कर लेने से ही कोई आदमी ईसाई बन जाता है | अगर मैंने बाइबिल ठीक-ठीक पढ़ी है तो मुझे ऐसे अनेक मनुष्य ज्ञात हैं, जिन्होंने कभी ईसा मसीह का नाम तक नहीं सुना, बल्कि ईसाई धर्म के प्रमाणभूत अर्थ को अस्वीकार तक किया है | परंतु अगर ईसा मसीह हमारे बीच फिर से अवतार लें तो वे इन लोगों को हममें से बहुतों से ज्यादा अपनायेंगे | इसीलिए मैं आपसे कहता हूँ कि इस समस्या पर आप खुले दिल और नम्रता के साथ विचार कीजिए |

मैं आपको उस बातचीत की याद दिलाये बिना नहीं रह सकता, जिसका वर्णन मैंने दार्जिलिंग मिशनरी लैंग्वेज़ स्कूल में किया था | चीन के बारे में ईसाई प्रचारकों का एक शिष्ट-मंडल लॉर्ड सालिस्बरी की सेवा में उपस्थित हुआ और उसने रक्षा की माँग की | मुझे ठीक शब्द तो याद नहीं हैं, परंतु लॉर्ड सालिस्बरी ने जो उत्तर दिया उसका सार बता सकता हूँ | उन्होंने कहा, "महाशयों, अगर आप ईसाई धर्म का सन्देश प्रचारित करने चीन जा रहे हैं तो पार्थिव सत्ता की सहायता मत माँगिये | अपने प्राण हथेली पर रखकर जाइए और चीन के लोग आपको मारना चाहें तो ऐसा मानिये कि आपने ईश्वर की सेवा में अपने प्राण दे दिये हैं |" लॉर्ड सालिस्बरी ने ठीक ही कहा था | ईसाई धर्म-प्रचारक भारत में एक सांसारिक शक्ति की छाया में या यों कहिये कि उसके संरक्षण में आते हैं और इससे एक ऐसी रुकावट खड़ी हो जाती है जिसे पार नहीं किया जा सकता |

अगर आप मुझे आंकड़े दें कि आपने इतने अनाथों को अपनाकर ईसाई धर्म की दीक्षा दी है तो मैं उन्हें मान लूँगा, परंतु इससे मुझे यह विश्वास नहीं हो जायेगा कि यह आपका मिशन है | मेरी राय में आपका मिशन इससे कहीं श्रेष्ठ है | आप भारत में मनुष्य ढूँढ़ना चाहते हैं | और अगर आप यह चाहते हैं तो आपको ग़रीबों की झोंपड़ियों में जाना होगा और वह भी उन्हें कुछ देने को नहीं बल्कि उनसे कुछ लेने को | चूँकि मैं भारत के ईसाई धर्म-प्रचारकों और यूरोपियनों का हितैषी होने का दावा करता हूँ, इसीलिए आपसे वही बात कहता हूँ जो मुझे दिल की गहराई में महसूस होती है | मुझे आप लोगों में ग्रहणशील वृत्ति, नम्रता और भारत के जन-साधारण से तादात्म्य स्थापित करने की इच्छा का अभाव मालूम होता है | दिल की साफ बातें कही हैं | आशा है आपके हृदयों से वैसा ही उत्तर मिलेगा |

यंग इंडिया, ६-८-१९२५

मेरी राय में मानव-दया के कार्यों की आड़ में धर्म-परिवर्तन करना कम से कम अहितकर तो है ही | अवश्य ही यहाँ के लोग इसे नाराजी की दृष्टि से देखते हैं | आखिर तो धर्म एक गहरा व्यक्तिगत मामला है, उसका सम्बन्ध दिल से है | कोई ईसाई डॉक्टर मुझे किसी बीमारी से अच्छा कर दे तो मैं अपना धर्म क्यों बदल लूँ, या जिस समय मैं उसके असर में हूँ तब वह डॉक्टर मुझसे इस तरह के परिवर्तन की

आशा क्यों रखे या ऐसा सुझाव क्यों दे ? क्या डॉक्टरी सेवा अपने आप में ही एक पारितोषिक और संतोष नहीं है ? या जब मैं किसी ईसाई शिक्षा-संस्था में शिक्षा लेता होऊँ तब मुझ पर ईसाई शिक्षा क्यों थोपी जाय ? मेरी राय में ये बातें ऊपर उठानेवाली नहीं हैं, और अगर भीतर ही भीतर शत्रुता पैदा नहीं करत तो भी संदेह तो उत्पन्न करती ही हैं | धर्म-परिवर्तन के तरीके ऐसे होने चाहिए जिन पर सीज़र की पत्नी की तरह किसी को कोई शक न हो सके | धर्म की शिक्षा लौकिक विषयों की तरह नहीं दी जाती | वह हृदय की भाषा में दी जाती है | अगर किसी आदमी में जीता-जागता धर्म है तो उसकी सुगंध गुलाब के फूल की तरह अपने आप फैलती है | सुगंध दिखाई नहीं देती, इसीलिए फूल की पंखुड़ियों के रंग की प्रत्यक्ष सुन्दरता से उसकी सुगन्ध का प्रभाव अधिक व्यापक होता है |

मैं धर्म-परिवर्तन के विरुद्ध नहीं हूँ , परंतु मैं उसके आधुनिक उपायों के विरुद्ध हूँ | आजकल और बातों की तरह धर्म-परिवर्तन ने भी एक व्यापार का रूप ले लिया है | मुझे ईसाई धर्म-प्रचारकों की एक रिपोर्ट पढ़ी हुई याद है, जिसमें बताया गया था कि प्रत्येक व्यक्ति का धर्म बदलने में कितना खर्च हुआ, और फिर 'अगली फसल' के लिए बजट पेश किया गया था |

हाँ, मेरी यह राय ज़रूर है कि भारत के महान धर्म उसके लिए सब तरह से काफी हैं | ईसाई और यहूदी धर्म के अलावा हिन्दू धर्म और उसकी शाखाएँ, इस्लाम और पारसी धर्म सब सजीव धर्म हैं | दुनिया में कोई भी एक धर्म पूर्ण नहीं है | सभी धर्म उनके माननेवालों के लिए समान रूप से प्रिय हैं | इसीलिए ज़रूरत संसार के महान धर्मों के अनुयायियों में सजीव और मित्रतापूर्ण संपर्क स्थापित करने की है, न कि हर सम्प्रदाय द्वारा दूसरे धर्मों की अपेक्षा अपने धर्म की श्रेष्ठता जताने की व्यर्थ कोशिश करके आपस में संघर्ष पैदा करने की | ऐसे मित्रतापूर्ण सम्बन्ध के द्वारा हमारे लिए अपने अपने धर्मों की कमियाँ और बुराइयाँ दूर करना संभव होगा |

मैंने ऊपर जो कुछ कहा है उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस प्रकार का धर्म-परिवर्तन मेरी दृष्टि में है उसकी हिन्दुस्तान में ज़रूरत नहीं है | आज की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि आत्मशुद्धि, आत्म-साक्षात्कार के अर्थ में धर्म-परिवर्तन किया जाये | परंतु धर्म-परिवर्तन करनेवालों का यह हेतु कभी नहीं होता | जो भारत का धर्म-परिवर्तन करना चाहते हैं, उनसे क्या यह नहीं कहा जा सकता कि 'वैद्यजी, आप अपना ही इलाज कीजिये ?'

यंग इंडिया, २३-४-१९३१

जब मैं जवान था उस समय की एक हिन्दू के ईसाई हो जाने की बात मुझे याद है | सारे नगर ने समझ लिया था कि एक अच्छे कुल के हिन्दू ने ईसा मसीह के नाम पर गोमांस और मदिरा का सेवन शुरू कर दिया है और अपनी राष्ट्रीय पोशाक छोड़ दी है | बाद में मुझे मालूम हुआ और मेरे अनेक पादरी मित्रों ने भी बताया कि धर्म बदलनेवाले लोग बंधन के जीवन से निकलकर आज़ादी के जीवन में,

ग़रीबी से निकलकर आराम के जीवन में प्रवेश करते हैं | जब मैं भारतवर्ष के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूमता हूँ, तो मुझे ऐसे बहुत से भारतीय ईसाई मिलते हैं, जिन्हें अपने जन्म से और अपने बाप-दादाओं के धर्म से शर्म आती है | एंग्लो-इंडियन लोग यूरोपियनों की जो नकल करते हैं वही काफी बुरी है, परंतु भारतीय ईसाई जिस तरह उनकी नकल करते हैं वह तो अपने देश के प्रति और मैं यहाँ तक कहूँगा कि अपने नये धर्म के प्रति भी द्रोह है | 'न्यू टेस्टामेंट' में एक वचन है जिसमें ईसाई को यह आदेश दिया गया है कि माँसाहार से तुम्हारे पड़ोसियों को बुरा लगे तो उसे छोड़ दिया जाय | मेरा खयाल है कि यहाँ माँस में मदिरापान और पोशाक भी आ जाती है | पुराने रिवाजों में जितनी भी बुराइयाँ हैं, उन सबका कठोर बनकर त्याग कर दिया जाय तो मैं उसे समझ सकता हूँ | परंतु जहाँ किसी बुराई का प्रश्न ही न हो, बल्कि प्राचीन रिवाज इष्ट हो वहाँ तो उसे छोड़ना पाप ही है, क्योंकि हमें निश्चित रूप से मालूम रहता है कि उसके त्याग से इष्ट मित्रों को गहरी चोट पहुँचेगी | धर्म-परिवर्तन का अर्थ राष्ट्रीयता का त्याग कभी नहीं होता | धर्म-परिवर्तन का अर्थ निश्चित रूप से यह होना चाहिए कि पुराने धर्म की बुराई छोड़ दी जाय, नये धर्म की सारी अच्छाई ले ली जाय और नये में जो भी बुराई हो उससे पूरी तरह बचा जाय | इसीलिए धर्म-परिवर्तन का यह नतीजा होना चाहिए कि हम अपने देश के प्रति अधिक भक्ति का, ईश्वर के सामने अधिक समर्पण का और अधिक आत्मशुद्धि का जीवन व्यतीत करें | ... क्या यह सचमुच दुःखद बात नहीं है कि बहुत से भारतीय ईसाई अपनी मातृभाषा को छोड़कर अपने बच्चों को अंग्रेजी में ही बोलने की शिक्षा देते हैं ? क्या ऐसा करके वे अपने बच्चों को जिस प्रजा के बीच में उन्हें रहना है उससे पूरी तरह अलग नहीं कर लेते ?

यंग इंडिया, २०-८-१९२५

ईसा के उपदेशों के अनुसार जीवन जीना शुरू में, बीच में और आखिर में सबसे कारगर रास्ता है | ... पादरियों का धर्मोपदेश मेरे कानों को खटकता है; वह मुझे नहीं जँचता| जो धर्म-प्रचारक भाषणों द्वारा उपदेश देते हैं उन पर मुझे सन्देह होने लगता है | परंतु जो लोग कभी धर्म का उपदेश न देकर अपने-अपने ज्ञान के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं उनसे मैं प्रेम करता हूँ | उनके जीवन शान्त होते हैं, परंतु सबसे प्रभावकारी प्रमाण भी होते हैं | इसीलिए मैं यह तो नहीं कह सकता कि क्या उपदेश दिया जाय, परंतु यह ज़रूर कह सकता हूँ कि सेवा और अत्यन्त सादगी का जीवन उत्तम उपदेश है | गुलाब के फूलों को कोई उपदेश देने की ज़रूरत नहीं पड़ती, वह सिर्फ अपनी सुगन्ध फैलाता है | यह सुगन्ध ही उसका अपना उपदेश है | अगर उसमें मनुष्य की-सी समझ हो और वह कुछ उपदेशकों को नौकर रख ले, तो जितने फूलों की बिक्री उनकी सुगन्ध से हो सकती है उससे अधिक प्रचारकों के उपदेश से नहीं हो सकती | धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन की सुगन्ध गुलाब के फूल से अधिक मधुर और सूक्ष्म होती है |

हरिजन, २९-३-१९३५

जैसे मैं अपना धर्म बदलने की कल्पना नहीं कर सकता, वैसे ही किसी ईसाई या मुसलमान या पारसी या यहूदी को अपना धर्म बदलने के लिए कहने की कल्पना भी नहीं कर सकता | इसीलिए मुझे जितना अपने धर्म के अनुयायियों की गंभीर मर्यादाओं का ध्यान है, उतना ही दूसरे धर्मों के अनुयाइयों की मर्यादाओं का भी ध्यान है | और जब मैं यह देखता हूँ कि मुझे अपने आचरण को अपने धर्म के अनुसार बनाने में और उसे अपने सहधर्मियों को समझाने में अपनी सारी शक्ति खर्च कर देनी पड़ती है, तब मुझे दूसरे धर्मों के अनुयायियों को उपदेश देने का तो खयाल भी नहीं आता | मनुष्य के आचरण के लिए यह सुन्दर नियम है : 'दूसरों के काजी न बनो, नहीं तो दूसरे तुम्हारे काजी बनेंगे |' मेरे मन पर यह विश्वास दिनोंदिन जमता जा रहा है कि महान और सम्पन्न ईसाई मिशन भारत की सच्ची सेवा करेंगे, यदि वे अपने को इस बात के लिए तैयार कर लें कि वे दया के कामों तक ही अपने को सीमित रखेंगे और उसमें भारत को या कम से कम उसके भोले-भाले ग्रामीणों को ईसाई बनाने की भावना न रखेंगे तथा इस तरह उनकी सामाजिक रचना को नष्ट न करेंगे क्योंकि उसमें अनेक दोष होते हुए भी वह बाहरी और भीतरी हमलों के सामने अनन्त काल से टिकी हुई है | ईसाई धर्म-प्रचारक और हम चाहें या न चाहें, तो भी हिन्दू धर्म में जो सत्य है वह टिका रहेगा और जो असत्य है वह नष्ट हो जायेगा | किसी भी सजीव धर्म को यदि जीवित रहना है तो स्वयं उसके भीतर जीवन-शक्ति होनी चाहिए |

हरिजन, २८-९-१९३५

शुद्धि और तबलीग

मेरी राय में ईसाइयों में और उससे कुछ कम मुसलमानों में जिस अर्थ में धर्मपरिवर्तन को समझा जाता है वैसी कोई चीज़ हिन्दू धर्म में नहीं है | मेरे खयाल से आर्यसमाज ने अपने धर्म-प्रचार की योजना बनाने में ईसाइयों की नकल की है | यह आजकल की पद्धति मुझे नहीं जँचती | इससे लाभ की अपेक्षा हानि अधिक हुई है | यद्यपि धर्म-परिवर्तन सर्वथा हृदय की और अपने तथा ईश्वर के बीच की वस्तु समझी जाती है, फिर भी उसे इतना बाजारू बना दिया गया है कि उसमें मुख्यत: स्वार्थवृत्ति को ही जगाने की कोशिश की जाती है | ... मेरी हिन्दू धर्मवृत्ति मुझे सिखाती है कि थोड़े या बहुत सभी धर्म सच्चे हैं | सबकी उत्पत्ति एक ही ईश्वर से हुई है, परंतु सब धर्म अपूर्ण हैं, क्योंकि वे अपूर्ण मानव-माध्यम के द्वारा हम तक पहुँचे हैं | सच्चा शुद्धि का आन्दोलन यह होना चाहिए कि हम सब अपने अपने धर्म में रहकर पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करें | इस प्रकार की योजना मे एकमात्र चरित्र ही मनुष्य की कसौटी होगा | अगर एक बाड़े से निकलकर दूसरे में चले जाने से कोई नैतिक उत्थान न होता हो तो जाने से क्या लाभ ? शुद्धि या तबलीग का फलितार्थ ईश्वर की सेवा ही होना चाहिए | इसीलिए मैं ईश्वर की सेवा के खातिर यदि किसी का धर्म बदलने की कोशिश करूँ तो उसका क्या

अर्थ होगा, जब मेरे ही धर्म को माननेवाले रोज़ अपने कर्मों से ईश्वर का इनकार करते हैं ? दुनियावी बातों के बनिस्बत धर्म के मामलों में यह कहावत अधिक लागू होती है कि 'वैद्यजी, पहले अपना इलाज कीजिये' |

यंग इंडिया, २९-५-१९२४

२२

मैं हिन्दू क्यों हूँ ?

चूँकि मैं पैतृक संस्कारों को मानता हूँ और एक हिन्दू परिवार में पैदा हुआ हूँ, इसीलिए मैं हिन्दू रहा हूँ | अगर मुझे मालूम हो जाये कि हिन्दू धर्म का मेरे नैतिक विचारों या आध्यात्मिक विकास के साथ मेल नहीं बैठता तो मैं उसे छोड़ दूँगा | मगर जाँच करके मैंने पाया है कि मैं जितने धर्मों को जानता हूँ, उन सबमें हिन्दू धर्म सबसे अधिक सहिष्णु है | इसमें कट्टरता का जो अभाव है वह मुझे बहुत पसन्द आता है, क्योंकि इससे उसके अनुयायी को आत्माभिव्यक्ति के लिए अधिक से अधिक अवसर मिलता है | हिन्दू धर्म एकांगी धर्म न होने के कारण उसके अनुयायी न सिर्फ अन्य सब धर्मों का आदर कर सकते हैं, परंतु दूसरे धर्मों में जो कुछ अच्छाई हो उसकी प्रशंसा भी कर सकते हैं और उसे हजम भी कर सकते हैं | अहिंसा सब धर्मों में समान है | परंतु हिन्दू धर्म में वह सर्वोच्च रूप में प्रगट हुई है और उसका प्रयोग भी हुआ है | (मैं जैन धर्म या बौद्ध धर्म को हिन्दू धर्म से अलग नहीं मानता |) हिन्दू धर्म न केवल मनुष्यमात्र की, बल्कि प्राणीमात्र की एकता में विश्वास रखता है | मेरी राय में गाय की पूजा करके उसने दयाधर्म के विकास में अद्‌भुत सहायता की है | यह प्राणीमात्र की एकता में और इसीलिए पवित्रता में विश्वास रखने का व्यावहारिक प्रयोग है | पुनर्जन्म की महान धारणा इस विश्वास का सीधा परिणाम है | अन्त में वर्णाश्रम धर्म का आविष्कार सत्य की निरन्तर शोध का भव्य परिणाम है |

यंग इंडिया, २०-१०-१९२७

मैं अपने आपको सनातनी हिन्दू कहता हूँ, क्योंकि :

(१) मेरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों और जिन्हें हिन्दू धर्म-शास्त्र कहा जाता है, उन सबमें और इसीलिए अवतारों तथा पुनर्जन्म में भी विश्वास है;

(२)वर्णाश्रम धर्म में मेरा विश्वास शुद्ध वैदिक अर्थ में है, न कि उसके वर्तमान प्रचलित और भद्दे अर्थ में;

(३)गोरक्षा में मेरा विश्वास प्रचलित अर्थ से कहीं अधिक विशाल अर्थ में है;

(४) मूर्तिपूजा में मेरा अविश्वास नहीं है |

पाठक देखेंगे कि वेदों अथवा अन्य धर्मशास्त्रों के सम्बन्ध में मैंने अपौरूषेय या ईश्वर-प्रणीत शब्द का प्रयोग जान-बूझकर नहीं किया है | कारण, मैं नहीं मानता कि केवल वेद ही अपौरूषेय या ईश्वर-प्रणीत हैं | मैं मानता हूँ कि वेदों में जितनी दैवी प्रेरणा है उतनी ही बाइबल, कुरान और अवेस्ता में भी है |

हिन्दू धर्मशास्त्रों में मेरी श्रद्धा है, इसीलिए यह ज़रूरी नहीं कि मैं उनके प्रत्येक शब्द और प्रत्येक श्लोक को ईश्वर-प्रेरित मान लूँ | मेरा यह दावा भी नहीं है कि मुझे इन अद्‌भुत ग्रंथों का कोई प्रत्यक्ष ज्ञान है | मगर मेरा यह दावा ज़रूर है कि मैं धर्मशास्त्रों के मूल उपदेश की सच्चाई को जानता और अनुभव करता हूँ | उनका कोई अर्थ कितना ही पांडित्यपूर्ण क्यों न हो, यदि वह मेरी बुद्धि या नैतिक बुद्धि को अग्राह्य है, तो मैं उससे बंधने से इनकार करता हूँ | अगर वर्तमान शंकराचार्यों और शास्त्रियों का यह दावा हो कि वे हिन्दू धर्मशास्त्रों का जो अर्थ करते हैं वही एकमात्र सच्चा अर्थ है, तो मैं उसका जोरों से खंडन करता हूँ | इसके विपरीत मैं मानता हूँ कि इन धर्मग्रंथों का हमारा वर्तमान ज्ञान अत्यंत अव्यवस्थित स्थिति में है | इस धर्मसूत्र पर मेरी अटूट श्रद्धा है कि जिसने अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य में पूर्णता प्राप्त नहीं की हो और जिसने समस्त परिग्रह छोड़ न दिया हो, उसे शास्त्रों का सच्चा ज्ञान नहीं होता | गुरू-प्रणाली में मेरा विश्वास है | परंतु इस युग में लाखों मनुष्यों को गुरू नहीं मिलते, क्योंकि विरलों में ही पूर्ण शुद्धता और पांडित्य का सामंजस्य होता है | परंतु अपने धर्म की सच्चाई जानने में हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि प्रत्येक महान धर्म की तरह हिन्दू धर्म के मूलभूत सिद्धान्त सनातन और समझने में सुगम हैं | हर हिन्दू ईश्वर में, उसके 'एकमेवाद्वितीयम्' होने में, पुनर्जन्म में और मोक्ष में विश्वास रखता है | ... मैं शुरू से ही सुधारक रहा हूँ | परंतु मेरा उत्साह मुझे हिन्दू धर्म की किसी मूलभूत बात को अस्वीकार करने के लिए नहीं कहता | मैंने कहा है कि मूर्तिपूजा में मेरा अविश्वास नहीं है | मूर्ति को देखकर मुझमें कोई पूजा का भाव उदय नहीं होता | परंतु मेरा विचार है कि मूर्तिपूजा मनुष्य के स्वभाव का ही एक अंग है | हमें बाह्य प्रतीकों की लालसा होती ही है | अन्यथा हमें जो शांति देवालय में मिलती है, वह अन्यत्र क्यों नहीं मिलती ? मूर्तियाँ ईश्वर की उपासना में सहायक होती हैं | कोई भी हिन्दू किसी मूर्ति को ईश्वर नहीं समझता | मैं मूर्तिपूजा को पाप नहीं मानता |

इन बातों से स्पष्ट है कि हिन्दू धर्म कोई एकांगी धर्म नहीं है | उसमें संसार के सब पैगम्बरों या विभूतियों की पूजा के लिए स्थान है | साधारण अर्थ में वह प्रचारक धर्म नहीं है | बेशक, उसने अनेक जातियों को अपने में समा लिया है | परंतु यह क्रिया विकासक्रम के न्याय से अदृश्य रूप में हुई है | हिन्दू धर्म कहता है कि सब अपने ही विश्वास या धर्म के अनुसार ईश्वर की पूजा करें, इसीलिए वह सब धर्मों के साथ शान्ति से रहता है |

यंग इंडिया, ६-१०-१९२१

२३

बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम

मैंने असंख्य बार यह सुना है और बौद्ध धर्म की भावना को प्रगट करने का दावा करनेवाली पुस्तकों में पढ़ा है कि बुद्ध ईश्वर को नहीं मानते थे | मेरे नम्र मत में ऐसा मानना बुद्ध के मुख्य उपदेश के विरुद्ध है | ... यह गड़बड़ इसीलिए पैदा हुई है कि उन्होंने अपने युग में ईश्वर के नाम पर चलनेवाली सभी हीन वस्तुओं को अस्वीकार कर दिया था, और वह ठीक भी था | बेशक, उन्होंने इस धारणा को अस्वीकार कर दिया था कि ईश्वर नामधारी कोई प्राणी द्वेषवश काम करता है, अपने कर्मों पर पश्चात्ताप कर सकता है, पार्थिव राजाओं की तरह वह भी प्रलोभनों और रिश्वतों में फँस सकता है और उसका कृपापात्र बना जा सकता है | उनकी सारी आत्मा ने इस विश्वास के विरुद्ध प्रबल विद्रोह किया था कि ईश्वर नामधारी प्राणी को अपने ही पैदा किये हुए जीवित प्राणियों का ताज़ा खून अच्छा लगता है और इससे वह प्रसन्न होता है | इसीलिए बुद्ध ने ईश्वर को फिर से उचित स्थान पर बैठा दिया और जिस अनधिकारी ने उस सिंहासन को हस्तगत कर लिया था उसे पदभ्रष्ट कर दिया | उन्होंने जोर देकर पुन: इस बात की घोषणा की कि इस विश्व का नैतिक शासन शाश्वत और अपरिवर्तनीय है | उन्होंने नि:संकोच कहा कि नियम ही ईश्वर है |

यंग इंडिया, २४-११-१९२७

ईश्वर के नियम शाश्वत और अपरिवर्तनीय हैं और स्वयं ईश्वर से भी अलग नहीं किये जा सकते | ईश्वर की पूर्णता की यह अनिवार्य शर्त है | इसीलिए यह भारी गड़बड़ पैदा हुई कि बुद्ध ईश्वर को नहीं मानते थे और केवल नैतिक नियमों में विश्वास रखते थे | और ईश्वर-सम्बन्धी इस गड़बड़ के कारण ही उस महान शब्द 'निर्वाण' को ठीक तरह से समझने के बारे में भी गड़बड़ पैदा हुई | नि:सन्देह निर्वाण का अर्थ सर्वथा नाश नहीं है | जहाँ तक मैं बुद्ध के जीवन का केन्द्रीय तथ्य समझ पाया हूँ, निर्वाण का अर्थ है हममें जो कुछ हीन है, जो कुछ बुरा है, जो कुछ विकारमय है और विकार के वश होने जैसा है, उसका संपूर्ण नाश | निर्वाण स्मशान की-सी कालिमापूर्ण जड़ शांति नहीं, किन्तु सजीव शान्ति है | वह ऐसी आत्मा का सजीव आनन्द है, जिसे अपना भान है और शाश्वत तत्त्व के हृदय में अपना स्थान प्राप्त कर चुकने का ज्ञान है |

यंग इंडिया, २४-११-१९२७

मानव-जाति को बुद्ध की यह बड़ी देन तो थी ही कि उन्होंने ईश्वर को उसके शाश्वत स्थान पर फिर से प्रस्थापित किया, परन्तु मेरी नम्र राय में मनुष्य-जाति को उनकी इससे भी बड़ी देन थी सभी प्राणियों के लिए, चाहे वे कितने ही छोटे हों, प्रेम तथा आदरभाव रखने का आग्रह |

यंग इंडिया, २०-१-१९२७

मैं कह सकता हूँ कि किसी ऐतिहासिक ईसा में मेरी कभी दिलचस्पी नहीं रही | अगर कोई यह साबित कर दे कि ईसा नामधारी मनुष्य कभी हुआ ही नहीं और बाइबल का वर्णन कपोल-कल्पित है तो मुझे उसकी परवाह न होगी, क्योंकि उस सूरत में भी ईसा का महान उपदेश मेरे लिए सत्य ही रहेगा |

यंग इंडिया, ३१-१२-१९३१

मैं यह नहीं मान सकता कि केवल ईसा में ही देवांश था | उनमें उतना ही दिव्यांश था जितना कृष्ण, राम, मुहम्मद या जरथुस्त्र में था | इसी तरह मैं जैसे वेदों या कुरान के प्रत्येक शब्द को ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता, वैसे ही बाइबल के प्रत्येक शब्द को भी ईश्वर-प्रेरित नहीं मानता | बेशक, इन पुस्तकों की समस्त वाणी ईश्वर-प्रेरित है, परंतु अलग-अलग वस्तुओं को देखने पर उनमें से अनेकों में मुझे ईश्वर-प्रेरणा नहीं मिलती | मेरे लिए बाइबल उतनी ही आदरणीय धर्म-पुस्तक है, जितनी गीता और कुरान है |

हरिजन, ६-३-१९३७

मेरे लिए ईसा का क्या... अर्थ है ? मेरे खयाल से वे मानव-जाति के महानतम गुरुओं में से एक थे | उनके अनुयायियों के लिए वे ईश्वर के एकमात्र पुत्र थे | मैं इस विश्वास को मानूँ या न मानूँ, लेकिन क्या इससे मेरे जीवन पर ईसा का प्रभाव कम या ज्यादा हो सकता है ? क्या उनके उपदेश और सिद्धान्त का सारा गौरव मेरे लिए निषिद्ध हो जायेगा ? मैं यह नहीं मान सकता |

'दि मॉडर्न रिव्यू', अक्तूबर, १९४१

मैं मानता हूँ कि संसार के विभिन्न धर्मों के गुण-दोषों का अंदाजा लगाना असंभव है और मेरा यह भी विश्वास है कि ऐसी कोशिश करना अनावश्यक और हानिकारक भी है | परंतु मेरी राय में उनमें से प्रत्येक के मूल में एक ही प्रेरक हेतु है – मानव के जीवन को ऊँचा उठाने और उसे उद्देश्य प्रदान करने की इच्छा | और चूँकि ईसा के जीवन में ऊपरोक्त महत्त्व और श्रेष्ठता है, इसलिए मैं मानता हूँ कि वे केवल ईसाई धर्म के ही नहीं हैं, परन्तु सारे जगत के और तमाम जातियों और लोगों के भी हैं, भले ही वे किसी भी झंडे, नाम या सिद्धान्त के मातहत काम करें, किसी भी धर्म को मानें या अपने बापदादों से पाये हुए देवता की पूजा करें |

'दि मॉडर्न रिव्यू', अक्तूबर, १९४१

मैं ईसा के 'पर्वतीय उपदेश' और भगवद्गीता में कोई अन्तर नहीं देख पाया हूँ | जो बात उस उपदेश में विशद ढंग से वर्णन की गई है, उसी को भगवद्गीता में एक वैज्ञानिक सूत्र का रूप दे दिया गया है | वह माने हुए अर्थ में वैज्ञानिक ग्रंथ भले न हो, परंतु उसमें प्रेमधर्म को – या जैसा मैं कहूँगा, समर्पण-धर्म को – तर्क द्वारा शास्त्रीय ढंग से सिद्ध करने की कोशिश की गई है | 'पर्वतीय उपदेश' अद्भुत भाषा में उसी धर्म का वर्णन करता है | 'न्यू टेस्टामेंट' से मुझे अपार सांत्वना और असीम आनंद मिला, क्योंकि वह 'ओल्ड टेस्टामेंट' के कुछ भागों से हुई विरक्ति के बाद मेरे पढ़ने में आया | मान लीजिए कि आज मुझे गीता से वंचित कर दिया जाय और मैं उसकी सारी बातें भूल जाऊँ, परंतु मेरे पास पर्वतीय उपदेश की पुस्तिका हो, तो मुझे उससे उतना ही आनन्द प्राप्त होगा जितना गीता से होता है |

यंग इंडिया, २२-१२-१९२७

अवश्य ही मैं इस्लाम को उसी अर्थ में शांति का धर्म मानता हूँ, जिस अर्थ में ईसाई, बौद्ध और हिन्दू धर्म शांति के धर्म हैं | बेशक, मात्रा का फर्क है, परन्तु इन धर्मों का उद्देश्य शांति है |

यंग इंडिया, २०-१-१९२७

भारत की राष्ट्रीय संस्कृति के लिए इस्लाम की विशेष देन तो यह है कि वह एक ईश्वर में खालिस विश्वास रखता है और जो लोग उसके दायरे के भीतर हैं, उनके लिए व्यवहार में वह मानव-भ्रातृत्व के सत्य को लागू करता है | इन्हें मैं इस्लाम की दो विशेष देनें मानता हूँ, क्योंकि हिन्दू धर्म में भ्रातृभाव बहुत अधिक दार्शनिक बन गया है | इसी तरह दार्शनिक हिन्दू धर्म में ईश्वर के सिवा और कोई देवता नहीं है, फिर भी इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि व्यवहार में हिन्दू धर्म इस मामले में इतना कट्टर और जोरदार रवैया नहीं रखता जितना इस्लाम रखता है |

यंग इंडिया, २१-३-१९२९

२४

ईश्वर और देवता

पादरी ने सुझाया, 'अगर हिन्दू धर्म एकेश्वरवादी बन जाय तो ईसाई धर्म और हिन्दू धर्म मिलकर भारत की सेवा कर सकते हैं |'

गांधीजी ने कहा, 'सहयोग हो तो मुझे बड़ी खुशी होगी | परन्तु वह हो नहीं सकता, अगर ईसाई मिशन हिन्दू धर्म की खिल्ली उड़ाते रहें और यह कहते रहें कि जब तक कोई हिन्दू धर्म को छोड़ न दे और उसकी निन्दा न करे, तब तक वह स्वर्ग को नहीं जा सकता | परन्तु मैं एक ऐसे भले ईसाई की कल्पना कर सकता हूँ, जो चुपचाप अपना काम करता रहे और जैसे गुलाब के फूल को अपनी सुगन्ध फैलाने के लिए किसी भाषण की ज़रूरत नहीं होती और वह सुगन्ध फैलाता रहता है – क्योंकि सुगन्ध फैलाये बगैर वह रह नहीं सकता – उसी तरह वह ईसाई हिन्दू जातियों को अपने जीवन की मधुर सुगन्ध से प्रभावित करता रहे | सच्चे आध्यात्मिक जीवन में यही बात होती है | ऐसा हो तो अवश्य ही पृथ्वी पर शांति और मनुष्यों में सद्भावना स्थापित होगी | परन्तु वह तब तक नहीं होगी जब तक ईसाई धर्म में आक्रामकता या बलवाद रहेगा | बाइबल में तो यह बात नहीं पाई जाती, परन्तु जर्मनी और दूसरे देशों में आपको यह बात मिलेगी |'

'परन्तु यदि भारतवासी एक ईश्वर में विश्वास रखने लगें और मूर्तिपूजा छोड़ दें, तो क्या आपके खयाल से सारी मुश्किलें हल नहीं हो जायेंगी ?'

'क्या इससे ईसाइयों को संतोष हो जायेगा ? वे सब एकमत हैं ?'

'कैथोलिक पादरी ने कहा, 'बेशक, सारे ईसाई संप्रदाय आपस में एक-मत नहीं हैं |'

'तब तो आप केवल सैद्धान्तिक प्रश्न पूछ रहे हैं | और मैं आपसे पूछता हूँ कि यद्यपि इस्लाम और ईसाई धर्म एक ही ईश्वर में माननेवाले कहे जाते हैं, फिर भी क्या उन दोनों में मेल हो गया है ? अगर इन दोनों में मेल नहीं हुआ तो आपके सुझाये हुए ढंग पर ईसाइयों और हिन्दुओं के मिल जाने की तो और भी कम आशा है | मेरे पास अपना ही हल है; परन्तु पहले तो मैं इस वर्णन को ही नहीं मानता कि हिन्दू अनेक ईश्वरों को मानते हैं और मूर्तिपूजक हैं | वे यह ज़रूर कहते हैं कि अनेक देवता हैं, परन्तु वे यह घोषणा भी असंदिग्ध रूप में करते हैं कि ईश्वर एक है और वह देवताओं का भी ईश्वर है | इसीलिए यह कहना अनुचित है कि हिन्दू अनेक ईश्वरों को मानते हैं | बेशक, वे अनेक लोकों को मानते हैं | जैसे एक मनुष्यों का लोक है और दूसरा जानवरों का, ठीक वैसे ही एक ऐसा लोक भी है जिसमें देवता नामधारी श्रेष्ठ प्राणी रहते हैं, जो हमें दिखाई तो नहीं देते फिर भी हैं अवश्य | सारी बुराई देव या देवता

शब्द के अंग्रेजी अनुवाद से पैदा हुई है | उसके लिए आपको 'गॉड' से अच्छा शब्द नहीं मिला है | परन्तु 'गॉड' ईश्वर है, देवाधिदेव है, देवताओं का ईश्वर है | इस प्रकार आप देखेंगे कि विभिन्न दैवी प्राणियों का वर्णन करने के लिए 'गॉड' शब्द के प्रयोग ने ही यह गड़बड़ पैदा की है | मैं मानता हूँ कि मैं पक्का हिन्दू हूँ, परन्तु मैंने कभी अनेक ईश्वर नहीं माने | मैंने अपने बचपन में भी यह विश्वास नहीं रखा और किसी ने मुझे कभी ऐसा सिखाया भी नहीं |

मूर्तिपूजा

'रही बात मूर्तिपूजा की, सो किसी न किसी रूप में इसे माने बिना आपका काम नहीं चल सकता | एक मस्जिद की, जिसे एक मुसलमान खुदा का घर कहता है, रक्षा करने के लिए वह अपनी जान क्यों दे देता है ? और एक ईसाई गिरजे में क्यों जाता है, और जब उससे शपथ लिवाने की ज़रूरत होती है तब वह बाइबल की शपथ क्यों लेता है ? यह बात नहीं कि मुझे इसमें कोई आपत्ति है | और मस्जिद तथा मकबरे बनाने के लिए अपार धन का दान करना मूर्तिपूजा नहीं तो क्या है ? और जब रोमन कैथोलिक लोग पत्थर से बनायी गयी या कपड़े अथवा काँच पर चित्रित की गयी कुमारी मेरी और संतों की बिलकुल काल्पनिक मूर्तियों या चित्रों के सामने घुटने टेकते हैं तब वे क्या करते हैं ?'

कैथोलिक पादरी ने आपत्ति की, 'मैं अपनी माता का चित्र रखता हूँ और भक्तिभाव से उसका चुम्बन करता हूँ, लेकिन मैं न उसकी पूजा करता हूँ, न संतों की | जब मैं ईश्वर की पूजा करता हूँ, तब मैं उसे स्रष्टा और किसी भी मानव-प्राणी से महान मानता हूँ |'

'ठीक इसी तरह हम पत्थर की पूजा नहीं करते, परन्तु पत्थर या धातु की मूर्ति में ईश्वर की पूजा करते हैं, भले ही वे भद्दी हों |'

'परन्तु देहाती लोग पत्थरों को ईश्वर मानकर पूजते हैं |'

'नहीं, मैं आपसे कहता हूँ कि वे ईश्वर से कम किसी चीज़ की पूजा नहीं करते | जब आप कुमारी मेरी के सामने घुटने टेकते हैं और अपने पक्ष में उनका हस्तक्षेप चाहते हैं तब आप क्या करते हैं ? आप उनके द्वारा ईश्वर के साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहते हैं | इस तरह एक हिन्दू पत्थर की मूर्ति के द्वारा ईश्वर से सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश करता है | कुमारी मेरी का हस्तक्षेप चाहने की आपकी बात को मैं समझ सकता हूँ | जब मुसलमान किसी मस्जिद में प्रवेश करते हैं, तब उनके हृदय आदर और आनन्द से क्यों भर जाते हैं ? क्या सारा विश्व ही मस्जिद नहीं है ? आपके सिर पर आकाश का जो शानदार शामियाना फैला हुआ है उसे क्या कहेंगे ? क्या वह मस्जिद से कम है ? परंतु मैं मुसलमानों की बात समझता हूँ

और उनके साथ हमदर्दी रखता हूँ | ईश्वर तक पहुँचने का यह उनका अपना तरीका है | उसी नित्य सत्ता तक पहुँचने का हिन्दुओं का अपना तरीका है | हमारे पहुँचने के तरीके अलग-अलग हैं, परंतु इससे ईश्वर अलग-अलग नहीं हो जाता |'

'परंतु कैथोलिकों का विश्वास है कि ईश्वर ने उनके लिए सत्य मार्ग प्रगट किया है |'

'परंतु आप यह क्यों कहते हैं कि ईश्वर की इच्छा बाइबल नामक एक ही पुस्तक में प्रगट हुई है और दूसरी पुस्तकों में प्रगट नहीं हुई ? आप ईश्वर की सत्ता को सीमित क्यों करते हैं ?'

'परंतु ईसा ने चमत्कारों द्वारा सिद्ध कर दिया कि उन्हें ईश्वर का सन्देश प्राप्त हुआ था |'

'परंतु यही दावा मुहम्मद का भी है | अगर आप ईसाई प्रमाण को मानते हैं तो आपको मुस्लिम प्रमाण और हिन्दू प्रमाण को भी मानना होगा |'

'परंतु मुहम्मद ने तो यह कहा था कि मैं चमत्कार नहीं कर सकता |'

'नहीं | वे चमत्कारों द्वारा ईश्वर का अस्तित्व साबित नहीं करना चाहते थे | परन्तु उनका दावा था कि उन पर खुदा के पैगाम आते हैं |'

हरिजन, १३-३-१९३७

अवतार

ईश्वर कोई व्यक्ति नहीं है | यह कहना कि वह मनुष्य के रूप में समय समय पर पृथ्वी पर उतरता है आंशिक सत्य है और उसका इतना ही अर्थ है कि इस प्रकार का मनुष्य ईश्वर के निकट रहता है | चूँकि ईश्वर सर्वव्यापी है, इसीलिए वह प्रत्येक मानव-प्राणी के भीतर निवास करता है और इसीलिए सभी को उसके अवतार कहा जा सकता है | परन्तु इससे हम किसी नतीजे पर नहीं पहुँचते | राम, कृष्ण आदि ईश्वर के अवतार इसलिए कहे जाते हैं कि हम उनमें दैवी गुणों का आरोपण करते हैं | वास्तव में वे मानव-कल्पना की सृष्टि हैं | वे सचमुच हुए हैं या नहीं, इससे मनुष्यों के दिमाग में उनके चित्र पर कोई असर नहीं पड़ता | ऐतिहासिक राम और कृष्ण अकसर ऐसी कठिनाइयाँ उपस्थित करते हैं, जिनका तरह तरह की दलीलों से निवारण करना पड़ता है |

सच तो यह है कि ईश्वर एक शक्ति है | वह जीवन का तत्त्व है | वह शुद्ध और दोषरहित ज्ञान है | वह शाश्वत है | फिर भी अचंभे की बात है कि सब उसके सर्वव्यापक और सजीव अस्तित्व से लाभ नहीं उठा पाते और न उसकी शरण में जा सकते हैं |

बिजली एक जबरदस्त शक्ति है | मगर सब उससे फायदा नहीं उठा सकते | वह कुछ नियमों का पालन करके ही पैदा की जा सकती है | वह एक निर्जीव शक्ति है | मनुष्य उसका उपयोग कर सकता है, अगर वह उसके नियमों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पर्याप्त परिश्रम करे |

इसी प्रकार जिस चेतन शक्ति को हम ईश्वर कहते हैं उसका भी पता लग सकता है, यदि हम उसके नियमों को जानें और उनका पालन करें | तब पता लगेगा कि वह हमारे भीतर ही है |

हरिजन, २२-६-१९४७

हिन्दू धर्म अनन्त महासागर की भांति है, जिसमें अमूल्य रत्न भरे पड़े हैं | उसमें आप जितना गहरा गोता लगायेंगे, उतने ही ज्यादा रत्न आपको मिलेंगे | हिन्दू धर्म में ईश्वर अनेक नामों से जाना जाता है | बेशक, हजारों लोग राम और कृष्ण को ऐतिहासिक व्यक्ति मानते हैं और यह विश्वास करते हैं कि सचमुच ईश्वर दशरथ-पुत्र राम के रूप में सशरीर पृथ्वी पर आये और यह कि उनकी पूजा करने से मोक्ष प्राप्त होता है | यही बात कृष्ण के बारे में है | इतिहास, कल्पना और सत्य एक-दूसरे से इस तरह मिल गये हैं कि एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता | उन्हें अलग-अलग करना असंभव हो गया है | मैंने ईश्वर में आरोपित सब नामों और रूपों को एक रूपरहित सर्वव्यापक राम के प्रतीकों के तौर पर मान लिया है | इसीलिए मेरी नज़र में सीतापति दशरथ-पुत्र राम वह सर्व-शक्तिमान तत्त्व है, जिसका नाम हृदयांकित होकर मानसिक, नैतिक और शारीरिक सब प्रकार के कष्ट मिटा देता है |

हरिजन, २-६-१९४६

२५

मंदिर और मूर्तियाँ

मैं किसी मंदिर का होना पाप या अंधविश्वास नहीं मानता | किसी न किसी रूप में सर्वसामान्य पूजा और सर्वसामान्य पूजास्थान मनुष्य के लिए ज़रूरी हैं | मंदिरों में मूर्तियाँ हों या न हों, यह अपने अपने स्वभाव और रूचि की बात है | मूर्तियाँ होने के कारण मैं किसी हिन्दू या रोमन कैथोलिक पूजास्थान को बुरा या अंधविश्वासपूर्ण नहीं मानता और न यही मानता हूँ कि मूर्तियाँ न होने से कोई मस्जिद या प्रोटेस्टेंट गिरजा अच्छा या अंधविश्वासमुक्त है | सूली (क्रोस) या पुस्तक जैसा प्रतीक आसानी से मूर्तिपूजा का विषय बन सकता है और इसीलिए अंधविश्वास का निमित्त हो सकता है | और बालकृष्ण या कुमारी मेरी की मूर्ति की पूजा ऊँचा उठानेवाली और सर्वथा अंधविश्वास-रहित हो सकती है | इसका आधार पूजा करनेवाले के हृदय की वृत्ति पर है |

यंग इंडिया, ५-११-१९२५

हम मानव-परिवार के सभी लोग तत्त्ववेत्ता नहीं हैं | हम दुनिया के सामान्य जीव हैं और हमें अदृश्य ईश्वर का ध्यान करने से संतोष नहीं होता | कारण कुछ भी हो, हमें ऐसी कोई चीज़ चाहिए जिसे हम छू सकें, जिसे हम देख सकें, जिसे हम प्रणाम कर सकें और अपना भक्तिभाव अर्पित कर सकें | इस बात का कोई महत्त्व नहीं कि वह वस्तु कोई ग्रंथ है या कोई पत्थर की खाली इमारत है या अनेक मूर्तियोंवाली कोई पत्थर की इमारत है | किसी को पुस्तक से संतोष हो जायेगा, किसी को खाली इमारत से हो जायेगा और बहुतों को तब तक संतोष नहीं होगा जब तक वे इन खाली इमारतों में रहनेवाली कोई चीज़ नहीं देखेंगे | इसीलिए मैं कहता हूँ कि आप इन मंदिरों के लिए यह न समझिये कि वे अंधविश्वास के प्रतीक हैं | अगर आप इन मंदिरों में श्रद्धा लेकर जायें तो आपको पता लगेगा कि आप जब-जब वहाँ जायेंगे, तब-तब आप वहाँ से शुद्ध होकर और चेतन ईश्वर में अधिक श्रद्धा लेकर लौटेंगे |

हरिजन, २३-१-१९३७

मंदिर जाना आत्मा की शुद्धि के लिए है | पूजा करनेवाला पूजा करने में अपने उत्तम गुणों को बाहर लाता है | किसी सजीव व्यक्ति को प्रणाम किया जाय और प्रणाम नि:स्वार्थ हो, तो प्रणाम करनेवाला जिसे प्रणाम किया गया है उसके उत्तम गुणों को खींच सकता है और ग्रहण कर सकता है | सभी सजीव व्यक्ति हमारी ही तरह भूल करनेवाले हो सकते हैं | परंतु मंदिर में हम ऐसे चेतन ईश्वर की पूजा करते हैं जिसकी पूर्णता कल्पना से परे है | सजीव व्यक्तियों को लिखे पत्रों का उत्तर मिलने पर भी

अकसर वे अन्त में हृदय-विदारक सिद्ध होते हैं और यह भी निश्चय नहीं कि उनका जवाब हमेशा मिलेगा ही | ईश्वर के नाम लिखे गये पत्रों में, जो भक्त की कल्पना के अनुसार मंदिरों में रहता है, न दावात-कलम की ज़रूरत होती है, न कागज की | वाणी की भी आवश्यकता नहीं | मूक पूजा ही पत्र बन जाती है और उसका उत्तर मिले बिना नहीं रहता | सारी क्रिया श्रद्धा का एक सुन्दर व्यायाम है | इसमें कोई प्रयत्न व्यर्थ नहीं जाता, दिल के टूटने का कोई सवाल नहीं रहता और ग़लतफहमी होने का कोई खतरा नहीं होता | पत्रलेखक को मंदिर, मस्जिद या गिरजे में पूजा करने के पीछे जो सरल तत्त्वज्ञान है उसे समझने की कोशिश करनी चाहिए | अगर वह यह समझ लेगा कि मैं ईश्वर के इन भिन्न भिन्न निवासस्थानों में कोई भेद नहीं करता, तो मेरी बात उसकी समझ में ज्यादा अच्छी तरह आ जायेंगी | वे स्थान तो मनुष्य की श्रद्धा ने खड़े किये हैं | वे अदृश्य शक्ति तक किसी न किसी तरह पहुँचने की मानव की लालसा के परिणाम हैं |

हरिजन, १८-३-१९३३

मेरे खयाल से मूर्तिपूजक और मूर्तिभंजक शब्दों का जो सच्चा अर्थ है उस अर्थ में मैं दोनों ही हूँ | मैं मूर्तिपूजा की भावना की कद्र करता हूँ | इसका मानव-जाति के उत्थान में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग रहता है | और मैं चाहूँगा कि मुझमें हमारे देश को पवित्र करनेवाले हजारों पावन देवालयों की रक्षा अपने प्राणों की बाजी लगाकर भी करने का सामर्थ्य हो |

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

मैं मूर्तिभंजक इस अर्थ में हूँ कि कट्टरता के रूप में मूर्तिपूजा का जो सूक्ष्म रूप प्रचलित है उसे मैं तोड़ता हूँ | ऐसी कट्टरता रखनेवाले को अपने ही ढंग के सिवा और किसी भी रूप में ईश्वर की पूजा करने में कोई अच्छाई नजर नहीं आती | मूर्तिपूजा का यह रूप अधिक सूक्ष्म होने के कारण पूजा के उस ठोस और स्थूल रूप से अधिक घातक है, जिसमें ईश्वर को पत्थर के एक छोटे से टुकड़े के साथ या सोने की मूर्ति के साथ एक समझ लिया जाता है |

यंग इंडिया, २८-८-१९२४

मंदिरों, गिरजाघरों और मस्जिदों में बहुधा भ्रष्टाचार के और उससे भी अधिक ह्रास के चिह्न दिखाई देते हैं | फिर भी यह साबित करना असंभव होगा कि सभी पुजारी बुरे हैं या बुरे रहे हैं और सभी गिरजाघर, मंदिर और मस्जिद भ्रष्टाचार और अंधविश्वास के अड्डे हैं | इस दलील में इस बुनियादी बात का भी ध्यान नहीं रखा जाता कि किसी भी धर्म का किसी धाम के बिना काम नहीं चला; और मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि जब तक मनुष्य की रचना आज के जैसी बनी रहेगी, तब तक स्वभावत: कोई धर्म किसी धाम के बिना रह ही नहीं सकता | मनुष्य के शरीर को भी देव-मंदिर कहा गया है और ठीक ही कहा

गया है, यद्यपि ऐसे असंख्य मंदिर इस बात को झूठ साबित करते हैं; वे भ्रष्टाचार के ऐसे अड्डे हैं जिन्हें दुराचरण के लिए काम में लिया जाता है | चूँकि इन शरीरों में से बहुत से भ्रष्ट है, इसीलिए सारे शरीर नष्ट कर दिये जाने चाहिए – इस दलील के खिलाफ इस जवाब को, मैं समझता हूँ, पर्याप्त मान लिया जायेगा कि इनमें से कुछ शरीर सचमुच ईश्वर के निवासस्थान भी हैं | बहुत से शरीरों की भ्रष्टता का कारण और कहीं ढूँढ़ना पड़ेगा | ईंट-पत्थर के मंदिर इन मानव-मंदिरों का ही स्वाभाविक विस्तार हैं और यद्यपि कल्पना यही की गई थी कि मानव-मंदिरों की तरह ये भी ईश्वर के निवासस्थान हों फिर भी ह्रास के नियम दोनों पर ही एक से काम करते रहे हैं |

हरिजन, ११-३-१९३३

मुझे ऐसा कोई धर्म या संप्रदाय मालूम नहीं है जिसका अपने देवालय के बिना काम चला हो या चल रहा है, चाहे उसे मंदिर के नाम से पुकारा जाये चाहे मस्जिद, गिरजे या अगियारी के नाम से पुकारा जाये | यह भी निश्चित नहीं है कि ईसा आदि महान सुधारकों में से किसी ने मंदिरों को बिलकुल नष्ट ही कर दिया हो या अस्वीकार किया हो | उन सब ने समाज की तरह देवालयों में से भी भ्रष्टाचार को दूर करने की कोशिश की | उनमें से सब ने नहीं तो कुछ ने ज़रूर मंदिरों में उपदेश दिया मालूम होता है | मैंने वर्षों से मंदिर जाना छोड़ दिया है, परंतु उससे मैं यह नहीं समझता कि मैं पहले की अपेक्षा अच्छा आदमी बन गया हूँ | मंदिर जाने की स्थिति होती तब मेरी माँ कभी मंदिर जाना चूकती नहीं थी | मैं मंदिर नहीं जाता, फिर भी शायद माँ की श्रद्धा मुझसे कहीं अधिक थी | ऐसे लाखों लोग हैं जिनकी श्रद्धा इन मंदिरों, गिरजाघरों और मस्जिदों के द्वारा बनी रहती है | वे सब न तो अंधविश्वास के अनुयायी हैं और न कट्टरपंथी हैं | अंधविश्वास और कट्टरता का ठेका उन्हीं ने नहीं ले रखा है | इन बुराइयों की जड़ हमारे दिलों और दिमागों में है |

हरिजन, ११-३-१९३३

२६

वृक्षपूजा

एक भाई लिखते हैं :

> "इस देश में स्त्री-पुरुषों का और और पूजाओं के साथ पत्थरों और पेड़ों की पूजा करते दिखाई देना एक सामान्य बात है | परन्तु यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि उत्साही सामाजिक कार्यकर्ताओं के घरों की शिक्षित महिलाएं भी इस रिवाज से दूर नहीं है | इन बहनों और भाईयों में से कुछ इस प्रथा का यह कहकर समर्थन करते हैं कि उसका आधार प्रकृति में निवास करनेवाले ईश्वर के प्रति शुद्ध पूजाभाव है, न कि कोई झूठा विश्वास; इसीलिए इसे अंधविश्वास की श्रेणी में नहीं गिना जा सकता | और वे इस सिलसिले में सत्यवान और सावित्री के नाम लेते हैं और कहते हैं कि इस रिवाज का पालन करके वे उनका स्मरण करते हैं | मुझे यह दलील जँचती नहीं | क्या आप इस मामले पर कुछ प्रकाश डालने की कृपा करेंगे ?"

मुझे यह प्रश्न अच्छा लगा है | इसमें मूर्तिपूजा का बहुत पुराना सवाल उठाया गया है | मैं मूर्तिपूजा का समर्थक और विरोधी दोनों हूँ | जब मूर्तिपूजा बिगड़ कर पत्थर-पूजा हो जाती है और उस पर झूठे विश्वासों और सिद्धांतों की काई चढ़ जाती है, तब उसे घोर सामाजिक बुराई समझकर उसके साथ लड़ना ज़रूरी हो जाता है | दूसरी ओर, अपने आदर्श को कोई ठोस रूप देने के अर्थ में मूर्तिपूजा मानव-स्वभाव का अभिन्न अंग रही है, और भक्ति के लिए वह एक मूल्यवान सहायता भी है | जब हम किसी पुस्तक को पवित्र समझकर उसका आदर करते हैं, तो हम मूर्ति की पूजा ही करते हैं | पवित्रता या पूजा के भाव से मंदिरों या मस्जिदों में जाने का भी वही अर्थ है | लेकिन इन सब बातों में मुझे कोई हानि दिखाई नहीं देती | उलटे, मनुष्य की बुद्धि सीमित है, इसलिए वह और कर ही क्या सकता है ? ऐसी हालत में वृक्षपूजा में कोई मौलिक बुराई या हानि दिखाई देने के बजाय मुझे तो इसमें एक गहरी भावना और काव्यमय सौन्दर्य ही दिखाई देता है | वह समस्त वनस्पति-जगत के लिए सच्चे पूजाभाव का प्रतीक है | वनस्पति-जगत तो सुन्दर रूपों और आकृतियों का अनन्त भण्डार है; उनके द्वारा वह मानो असंख्य जिह्वाओं से ईश्वर की महानता और गौरव की घोषणा करता है | वनस्पति के बिना इस पृथ्वी पर जीवधारी एक क्षण के लिए भी नहीं रह सकते | इसीलिए ऐसे देश में, जहाँ खास तौर पर पेड़ों की कमी है, वृक्षपूजा का एक गहरा आर्थिक महत्त्व हो जाता है |

इस कारण मुझे वृक्षपूजा के विरुद्ध कोई धर्मयुद्ध छेड़ने की ज़रूरत नहीं दिखाई देती | यह सच है कि जो ग़रीब और सीधी-सादी स्त्रियाँ वृक्षों की पूजा करती हैं, वे अपने कार्य के गूढ़ार्थों को बुद्धिपूर्वक

नहीं समझतीं | अगर उनसे पूछा जाये कि वे यह पूजा क्यों करती हैं, तो बहुत संभव है कि इसका वे कोई उत्तर न दे सकें | वे शुद्ध और अत्यन्त सरल श्रद्धा से यह काम करती हैं | इस प्रकार की श्रद्धा तिरस्कार की वस्तु नहीं हैं; वह एक महान और जबरदस्त ताकत है, जिसका हमें संचय करना चाहिए |

किन्तु उन व्रतों और प्रार्थनाओं की, जो भक्त लोग वृक्षों के आगे करते हैं, बात बिलकुल अलग है | स्वार्थसिद्धि के लिए जो व्रत और प्रार्थनाएँ की जाती हैं वे चाहे गिरजाघरों, मस्जिदों और मंदिरों में की जाएँ या वृक्षों और देवालयों के सामने की जाएँ, ऐसी चीज़ हैं जिन्हें प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए | स्वार्थपूर्ण प्रार्थनाएँ करने या व्रत लेने का मूर्तिपूजा के साथ कार्य-कारण जैसा सम्बन्ध नहीं है | व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ण प्रार्थना बुरी ही है, चाहे वह किसी मूर्ति के सामने की जाये या अदृश्य ईश्वर के सामने |

परंतु उससे कोई यह न समझें कि मैं आम तौर पर वृक्षपूजा का पक्षपाती हूँ | मैं वृक्षपूजा का समर्थन इसलिए नहीं करता कि मैं उसे भक्ति का कोई आवश्यक साधन समझता हूँ | मैं तो सिर्फ इतना ही मानता हूँ कि ईश्वर इस विश्व में असंख्य रूपों में प्रगट होता है | ऐसे हरएक स्वरूप के सामने मेरा सिर अपने आप झुक जाता है |

यंग इंडिया, २६-९-१९२९

२७

बुद्धि और श्रद्धा

अनुभव ने मुझे इतना नम्र बना दिया है कि मैं बुद्धि की विशेष मर्यादाएँ समझने लगा हूँ | जैसे ग़लत जगह पर रखे हुए पदार्थ कचरा बन जाते हैं, ठीक वैसे ही बुद्धि का दुरूपयोग किया जाय तो वह पागलपन बन जाती है |

यंग इंडिया, १४-१०-१९२६

बुद्धिवादी लोग बड़े अच्छे होते हैं | लेकिन बुद्धिवाद जब अपने लिए सर्व-शक्तिमान होने का दावा करता है, तब वह कुरूप राक्षस हो जाता है | बुद्धि को सर्व-शक्तिमान मानना उतनी ही बुरी मूर्तिपूजा है, जितनी किसी वृक्ष या पत्थर को ईश्वर मानकर उसकी पूजा करना | मैं बुद्धि के दमन का समर्थन नहीं करता, परन्तु मैं हमारे भीतर की उस वस्तु को, जो बुद्धि को पवित्र बनाती है, उचित मान्यता दिलवाना चाहता हूँ |

यंग इंडिया, १४-१०-१९२६

ऐसे विषय भी हैं जिनमें बुद्धि हमें दूर तक नहीं ले जा सकती और हमें श्रद्धा से ही कुछ वस्तुओं को स्वीकार करना पड़ता है | उस समय श्रद्धा बुद्धि का खंडन नहीं करती, परन्तु उसका अतिक्रमण करती है | श्रद्धा एक तरह की छठी इन्द्रिय है, जो उन मामलों में काम देती है जो बुद्धि के क्षेत्र से बाहर हैं |

हरिजन, ६-३-१९३७

श्रद्धा ही हमें तूफानी समुद्रों से पार ले जाती है, श्रद्धा ही पर्वतों को हिला देती है और श्रद्धा ही महासागर पार करा देती है | यह श्रद्धा और कुछ नहीं, केवल अन्तर्यामी प्रभु का सजीव, जाग्रत भान ही है | जिसे यह श्रद्धा प्राप्त हो गई, उसे और कुछ नहीं चाहिए | शरीर से रोगी होकर भी वह आध्यात्मिक दृष्टि से नीरोग है; भौतिक दृष्टि से चाहे वह निर्धन हो, पर उसके पैरों में आध्यात्मिक दौलत लोटती है |

यंग इंडिया, २४-९-१९२५

श्रद्धा के बिना यह संसार क्षणभर में नष्ट हो जायेगा | जिन लोगों के बारे में हमें विश्वास है कि उन्होंने प्रार्थना और प्रायश्चित्त से पुनीत बना हुआ जीवन व्यतीत किया है, उनके युक्तियुक्त अनुभव को स्वीकार कर लिया जाये, यही सच्ची श्रद्धा है | इसीलिए जो पैगम्बर या अवतार प्राचीन काल में हो

गये हैं, उनमें विश्वास रखना कोई व्यर्थ का अंधविश्वास नहीं, परंतु एक आन्तरिक आध्यात्मिक आवश्यकता की पूर्ति है |

यंग इंडिया, १४-४-१९२७

यद्यपि सबको इसका ज्ञान नहीं, फिर भी ईश्वर में श्रद्धा सभी को है | कारण, सभी को अपने में विश्वास है और वही अनन्त गुना होने पर ईश्वर बन जाता है | जगत में दिखाई देनेवाला सारा जीवन ही ईश्वर है | हम ईश्वर न हों तो भी ईश्वर के तो हैं ही, जैसे पानी की छोटी सी बूंद महासागर की होती है | कल्पना कीजिये कि वह समुद्र से अलग करके लाखों मील दूर फेंक दी जाती है | तब वह अपने स्थान से विच्छिन्न होकर नि:सहाय बन जाती है और महासागर की ताकत और शान को महसूस नहीं कर सकती | परन्तु कोई उसे यह बता दे कि वह महासागर का अंग है, तो उसकी श्रद्धा पुनर्जीवित हो जायेगी, वह खुशी के मारे नाचने लगेगी और महासागर की सारी ताकत और शान उसमें प्रतिबिम्बित होगी |

हरिजन, ३-६-१९३९

ईश्वर के साक्षात्कार का अर्थ यह अनुभव करना है कि वह हमारे हृदयों में विराजमान है, जैसे बच्चे को किसी प्रत्यक्ष प्रमाण की आवश्यकता के बिना ही अपनी माता का स्नेह अनुभव होता है | क्या बालक मां के प्रेम का अस्तित्व तर्क से सिद्ध करता है ? क्या वह उसे दूसरों के लिए साबित कर सकता है ? वह विजय के गर्व के साथ कहता है : "वह तो है ही |" यही बात ईश्वर के अस्तित्व के बारे में होनी चाहिए | वहाँ बुद्धि का गुजर नहीं है | परन्तु वह अनुभव से जाना जाता है | जैसे हम सांसारिक गुरूओं के अनुभव को अस्वीकार नहीं करते, वैसे ही हमें तुलसीदास, चैतन्य, रामदास और अनेक आध्यात्मिक गुरूओं के अनुभव को भी अस्वीकार नहीं करना चाहिए |

यंग इंडिया, ९-७-१९२५

२८

धर्मग्रंथ

श्री बेसिल मैथ्यूज: धर्म का प्रमाण आप किसमें मानते हैं ?

गांधीजी: (छाती पर हाथ रखकर) वह यहाँ है | मैं गीता-सहित प्रत्येक धर्मग्रंथ के बारे में अपने विवेक से काम लेता हूँ | मैं धर्मशास्त्र के किसी भी वचन को अपनी बुद्धि की उपेक्षा नहीं करने दे सकता | मेरा यह विश्वास तो है कि मुख्य धर्म-पुस्तकें ईश्वर-प्रेरित हैं, लेकिन उनमें दोहरी छनाई का दोष भी है | पहले तो वे किसी मानव सन्देश-वाहक के द्वारा आती हैं और फिर उन पर टीकाएँ लिखी जाती हैं | उनमें से कोई भी बात ईश्वर से सीधी नहीं आती | एक ही वचन का मैथ्यू एक अर्थ करेगा तो जॉन दूसरा करेगा | ईश्वरीय प्रेरणा को स्वीकार करते हुए भी मैं अपने विवेक को तिलांजलि नहीं दे सकता | और सबसे बड़ी बात यह है कि 'शब्द जीवन का नाश करते हैं, जबकि उनके पीछे रहा हुआ अर्थ और भावना जीवन देती है |' परन्तु आपको मेरी स्थिति के बारे में ग़लतफहमी हरगिज न होनी चाहिए | मैं श्रद्धा को भी मानता हूँ; ऐसी चीज़ों में जहाँ बुद्धि को कोई स्थान नहीं होता, - जैसे ईश्वर का अस्तित्व – उस श्रद्धा से मुझे कोई दलील नहीं हटा सकती | और उस छोटी लड़की की तरह, जो सब दलीलों के बावजूद यही कहती रही कि 'हम सात हैं', मैं भी अपने से श्रेष्ठ बुद्धिशाली के तर्क से हारकर भी बार बार यह कहूँगा कि 'तब भी ईश्वर है' |

हरिजन, ५-१२-१९३६

ईश्वरीय ज्ञान पुस्तकों से उधार नहीं लिया जाता | उसे अपने ही भीतर अनुभव करना पड़ता है | अधिक से अधिक पुस्तकों से मदद मिल जाती है; अकसर वे रुकावट ही होती हैं |

यंग इंडिया, १७-७-१९२४

बार-बार प्रचार करने से कोई भूल सत्य नहीं बन जाती और न सत्य इसीलिए भूल बन जाता है कि उसे कोई देखता नहीं |

यंग इंडिया, २६-२-१९२५

कोई भी शास्त्र-प्रमाण हो, यदि वह सम्यक बुद्धि या हृदय के आदेश के विरुद्ध है तो मैं उसे अस्वीकार कर दूँगा | शास्त्र-प्रमाण जब बुद्धि द्वारा समर्थन प्राप्त करता है, तब वह दुर्बलों का सहारा और उत्थानकर्ता होता है | परन्तु जब वह अन्त:करण की आवाज़ से समर्थित बुद्धि का स्थान ले लेता है तब उनका पतन करता है |

यंग इंडिया, ८-१२-१९२०

मैं लकीर का फकीर नहीं हूँ| इसीलिए संसार के विभिन्न धर्मग्रंथों के शब्दों के पीछे रहे आशय को समझने की कोशिश करता हूँ | अर्थ करने में मैं उन्हीं ग्रंथों की बताई हुई सत्य और अहिंसा की कसौटी से काम लेता हूँ| जो चीज़ इस कसौटी पर ठीक नहीं उतरती उसे अस्वीकार कर देता हूँ और जो ठीक उतरती है उसे अपना लेता हूँ | रामचन्द्र ने एक शूद्र को वेद पढ़ने पर दण्ड दिया, इस कहानी को मैं क्षेपक मानकर अस्वीकार करता हूँ| कुछ भी हो, मैं राम की पूजा अपनी कल्पना के पूर्ण पुरुष के रूप में करता हूँ, न कि उनको ऐतिहासिक व्यक्ति मानकर; क्योंकि नई-नई ऐतिहासिक खोज़ और अनुसंधानों की प्रगति के साथ साथ उनके जीवन-संबन्धी तथ्य बदलते रह सकते हैं | ऐतिहासिक राम से तुलसीदास का कोई वास्ता नहीं था | ऐतिहासिक कसौटी पर कसकर देखें तो उनकी रामायण रद्दी की टोकरी में फेंकने लायक होगी | आध्यात्मिक अनुभव के रूप में उनकी पुस्तक कम से कम मेरे नजदीक तो लगभग अद्वितीय है | और फिर तुलसीकृत रामायण के इतने जो संस्करण प्रकाशित हुए हैं, उनका अक्षर-अक्षर सत्य है यह भी मैं नहीं मानता | इस ग्रंथ में शुरू से आखिर तक जो भावना है वह मुझे मंत्रमुग्ध कर देती है |

यंग इंडिया, २७-८-१९२५

महाभारत के कृष्ण सचमुच कभी हुए थे, इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं है | मेरे कृष्ण का किसी ऐतिहासिक व्यक्ति से कोई वास्ता नहीं | मैं ऐसे कृष्ण के सामने अपना सिर नहीं झुकाऊँगा, जो अपने अहंकार को चोट पहुँचने पर किसी को मार डाले या जिसे गैर-हिन्दू लोग दुराचारी युवक बताते हैं | मैं अपनी कल्पना के उस कृष्ण को मानता हूँ, जो पूर्ण अवतार है, प्रत्येक अर्थ में निष्कलंक है, गीता का प्रेरक है और लाखों मानव-प्राणियों के जीवन को प्रेरणा देता है | परन्तु यदि मुझे यह साबित कर दिया जाये कि महाभारत उसी अर्थ में इतिहास है जिसमें आजकल की इतिहास की पुस्तकें हैं, महाभारत का प्रत्येक शब्द सही है और महाभारत के कृष्ण के साथ जिन कृत्यों का सम्बन्ध बताया जाता है उनमें से कुछ तो उसने सचमुच किये थे, तो हिन्दू धर्म से निकाल दिये जाने का खतरा उठाकर भी मैं उस कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानने से इनकार करने में संकोच नहीं करूँगा | परन्तु मेरे लिए महाभारत एक गहन धार्मिक ग्रंथ है, जो बहुत कुछ रूपक के प्रकार का है और ऐतिहासिक लेख की तरह नहीं लिखा गया था | वह हमारे भीतर सतत चलनेवाले द्वंद्व का वर्णन है और वह इतने सजीव ढंग से किया गया है कि हम थोड़ी देर के लिए यह समझने लगते हैं कि उसमें जिन कार्यों का वर्णन किया गया है, वे सचमुच मानव-प्राणियों द्वारा किये गये हैं | मैं यह भी नहीं समझता कि जो महाभारत आजकल हमें मिलता है वह मूल पुस्तक की निर्दोष प्रतिलिपि है | इसके विपरीत मेरा खयाल है कि उसमें अनेक परिवर्तन हुए हैं |

यंग इंडिया, १-१०-१९२५

धर्मग्रंथों का सही अर्थ समझने के लिए भक्तिपूर्ण अध्ययन और अनुभव अत्यन्त आवश्यक है | यह आदेश कि शूद्र धर्मशास्त्रों का अध्ययन न करे बिलकुल निरर्थक नहीं है | शूद्र का अर्थ आध्यात्मिक दृष्टी से असंस्कृत और अज्ञानी मनुष्य है | बहुत संभव है कि वह वेदों और दूसरे धर्मशास्त्रों का ग़लत अर्थ लगाये | हरएक आदमी बीजगणित के सवाल नहीं कर सकता | पहले कुछ अध्ययन करना अनिवार्य है | पाप में डूबे हुए मनुष्य के मुख से 'अहं ब्रह्मास्मि' का महान सत्य कितना बुरा लगेगा ! वह उसका उपयोग कितने नीच कार्यों के लिए करेगा ! उसके हाथों इसकी कैसी विकृति होगी !

इसीलिए जो आदमी धर्मशास्त्रों का अर्थ करे, उसमें आध्यात्मिक अनुशासन होना ही चाहिए | उसे यम-नियम आदि आचरण के शाश्वत सिद्धान्तों का पालन अवश्य करना चाहिए | इन नियमों का ऊपरी अभ्यास बिलकुल व्यर्थ होता है | शास्त्रों ने गुरू की आवश्यकता पर जोर दिया है | परंतु चूँकि आजकल गुरू दुर्लभ होते हैं इसीलिए ऋषियों ने भक्ति सिखाने वाली आधुनिक पुस्तकों का अध्ययन सुझाया है | जिनमें भक्ति नहीं है, श्रद्धा का अभाव है, वे धर्मशास्त्रों का अर्थ करने के अयोग्य हैं | पंडित लोग उनमें से लम्बे-चौड़े विद्वत्तापूर्ण अर्थ निकाल सकते हैं | परंतु वह सच्चा अर्थ नहीं होगा | धर्मशास्त्रों का सच्चा अर्थ अनुभवी लोग ही कर सकेंगे |

परंतु अनुभवहीन लोगों के लिए भी कुछ नियम हैं | जो अर्थ सत्य के विपरीत हो, वह सही नहीं होता | जो सत्य पर भी शंका करता है, उसके लिए धर्मशास्त्रों का कोई अर्थ नहीं है | उससे कोई बहस नहीं कर सकता |

यंग इंडिया, १२-११-१९२५

२९

गीता का संदेश

१. सन् १८८८-८९ में भी जब मेरा गीता से प्रथम परिचय हुआ, मुझे लगा कि यह कोई ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है, परंतु भौतिक युद्ध के बहाने उसमें उस द्वंद्व का वर्णन किया गया है जो मानव जाति के हृदय में सतत होता रहता है | और भौतिक युद्ध केवल इसीलिए खड़ा किया गया है कि भीतरी द्वंद्व का वर्णन अधिक आकर्षक हो जाये | यह आरंभिक स्फुरणा धर्म और गीता के अधिक गहरे अध्ययन से और भी पक्की हो गई | महाभारत के अध्ययन से उसकी और अधिक पुष्टि हुई | महाभारत को माने हुए अर्थ में मैं कोई ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं मानता | आदिपर्व में मेरे मत के समर्थन में सबल प्रमाण मिल जाता है | प्रधान पात्रों की अमानुषी और अतिमानुषी उत्पत्ति बताकर व्यास भगवान ने राजा-प्रजा के इतिहास का काम खत्म कर दिया है | उसमें वर्णित व्यक्ति ऐतिहासिक हो सकते हैं, परन्तु महाभारतकार ने उनका उपयोग अपने धार्मिक विषय को समझाने के लिए ही किया है |

२. महाभारतकार ने भौतिक युद्ध की आवश्यकता को सिद्ध नहीं किया है; इसके विपरीत उसने उसकी व्यर्थता को प्रमाणित किया है | उसने विजेताओं को शोक और पश्चात्ताप से रुलाया है और उनके लिए दुखों के सिवा और कुछ नहीं छोड़ा है |

३. इस महान रचना में गीता मुकुट के समान है | उसके दूसरे अध्याय में भौतिक युद्ध के नियम सिखाने के बजाय स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताये गये हैं | गीता के स्थितप्रज्ञ के लक्षणों में मुझे तो भौतिक युद्ध से मेल खानेवाली कोई बात दिखाई नहीं देती | सारी रचना ऐसी है कि युद्ध करनेवाले दलों के लिए लागू होनेवाले आचरण के नियमों का उससे कोई मेल नहीं बैठता |

४. गीता के कृष्ण पूर्णता और सम्यक् ज्ञान की मूर्ति हैं, परंतु यह चित्र काल्पनिक है | इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रजा का प्यारा कृष्ण कभी हुआ ही नहीं | परंतु उसकी पूर्णता काल्पनिक है | संपूर्ण अवतार का विचार बाद में बना है |

५. हिन्दू धर्म में अवतार उस आदमी को माना गया है, जिसने मानव-जाति की कोई असाधारण सेवा की हो | वास्तव में सभी शरीरधारी प्राणी ईश्वर के अवतार हैं | परंतु प्रत्येक प्राणी को आम तौर पर अवतार नहीं माना जाता | जिसने अपने समय में अपने आचरण द्वारा असाधारण धार्मिकता दिखाई हो, उसे आगे आनेवाली पीढ़ियाँ अवतार मानकर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करती हैं | इसमें मुझे कोई बुराई नजर नहीं आती; इसमें ईश्वर की महानता कम नहीं होती और सत्य की भी कोई हानि नहीं होती | उर्दू में एक कहावत है – 'आदम खुदा नहीं, लेकिन खुदा के नूर से आदम जुदा नहीं' | और इसीलिए

जिसका आचरण सबसे अधिक धार्मिक रहा हो, उसमें वह नूर सबसे अधिक होता है | इसी विचारधारा के अनुसार कृष्ण को हिन्दू धर्म में संपूर्ण अवतार का पद प्राप्त है |

६. अवतारों में यह विश्वास मनुष्य की ऊँची आध्यात्मिक महत्त्वाकांक्षा का प्रमाण है | मनुष्य जब तक ईश्वर के समान नहीं बन जाता, तब तक उसे भीतरी शांति नहीं मिलती | इस स्थिति को पहुँचने का प्रयत्न ही सर्वोपरि और एकमात्र इष्ट महत्त्वाकांक्षा है | और यही आत्म-साक्षात्कार है | तमाम धर्मग्रंथों की तरह गीता का विषय भी यही आत्म-साक्षात्कार है | परंतु गीताकार ने इस सिद्धान्त की स्थापना के लिए उसे नहीं लिखा है | गीता का उद्देश्य मुझे आत्मार्थी को आत्म-साक्षात्कार करने का श्रेष्ठ मार्ग बताना मालूम होता है | जो वस्तु थोड़ी या बहुत स्पष्टता के साथ हिन्दू धर्मग्रंथों में इधर-उधर बिखरी हुई पाई जाती है, उसे गीता ने पुनरुक्ति का खतरा उठाकर भी अधिक से अधिक साफ भाषा में स्थापित किया है |

७. वह अद्वितीय उपाय कर्म के फल का त्याग है |

८. इसी मध्यबिन्दु के चारों ओर गीता की रचना हुई है | यह त्याग केन्द्रीय सूर्य है और उसके चारों ओर भक्ति, ज्ञान आदि ग्रहों की तरह घूमते हैं | इस शरीर को कारागार की उपमा दी गई है | जहाँ शरीर है वहाँ कर्म अवश्य है | किसी भी शरीरधारी को कर्म से मुक्त नहीं किया गया है | फिर भी सारे धर्म यह घोषणा करते हैं कि मनुष्य अपने शरीर को देव-मंदिर समझे और तद्नुसार आचरण करे तो मुक्ति प्राप्त कर सकता है | प्रत्येक कर्म, चाहे कितना ही तुच्छ हो, दूषित होता है | तब शरीर को देव-मंदिर कैसे बनाया जा सकता है, दूसरे शब्दों में मनुष्य कर्म के बंधन से अर्थात् पाप के दोष से मुक्त कैसे हो सकता है ? गीता ने इस प्रश्न का उत्तर निश्चित भाषा में दिया है : "निष्काम कर्म से; कर्मफल का त्याग करके; सब कर्मों को ईश्वरार्पण करने से अर्थात् अपने आपको शरीर और आत्मा के साथ ईश्वर को अर्पण कर देने से |"

९. परंतु निष्कामता या त्याग सिर्फ उसकी बात करने से नहीं आता | वह बुद्धिबल से प्राप्त नहीं होता | वह सतत हृदय-मंथन से ही सिद्ध हो सकता है | त्याग की प्राप्ति के लिए सम्यक् ज्ञान ज़रूरी है | विद्वान लोगों के पास एक तरह का ज्ञान होता है | उन्हें वेद कंठस्थ हो सकते हैं, फिर भी वे भोगविलास में डूबे रह सकते हैं | ज्ञान शुष्क पांडित्य का रूप न ले ले, इसके लिए गीताकार ने आग्रह किया है कि ज्ञान के साथ भक्ति होनी चाहिए और उसे प्रथम स्थान दिया है | भक्ति के बिना ज्ञान व्यर्थ है | इसीलिए गीता कहती है : 'भक्ति होगी तो ज्ञान अपने आप आ जायेगा |' यह भक्ति शाब्दिक पूजामात्र नहीं है, यह तो 'सिर का सौदा' है | इसीलिए गीताकार ने भक्त के लक्षण स्थितप्रज्ञ जैसे ही बताये हैं |

१०. इस प्रकार गीता में जिस भक्ति की अपेक्षा रखी गई है, वह कोई कोमल हृदय का उच्छ्वास नहीं है | अन्धश्रद्धा तो वह है ही नहीं | गीता की भक्ति का बाह्याचार से कम से कम सम्बन्ध है | भक्त चाहे

तो माला, तिलक और अर्ध्यादि का उपयोग कर सकता है, परंतु ये वस्तुएँ उसकी भक्ति की कसौटी नहीं हैं | भक्त वह है जो किसी से ईर्ष्या नहीं रखता, जो दया का भंडार है, जो अहंकार से रहित है, जो नि:स्वार्थ है, जो गर्मी-सर्दी और सुख- दुख को समान समझता है, जो सदा क्षमाशील है, जो सदा संतुष्ट रहता है, जिसके निश्चय दृढ़ होते हैं, जिसने मन और आत्मा को ईश्वर के अर्पण कर दिया है, जो न दूसरों को डराता है, न दूसरों से डरता है, जो हर्ष, शोक और भय से मुक्त है, जो शुद्ध है, जो कर्म में कुशल है फिर भी उससे प्रभावित नहीं होता, जो शुभाशुभ सभी कर्मफलों का त्याग करता है, जो शत्रु-मित्र सबको समान समझता है, जो मान-अपमान से अछूता है, जो प्रशंसा से फूल नहीं जाता और निन्दा से जिसे ग्लानि नहीं होती, जिसे मौन और एकान्त से प्रेम है और जिसकी बुद्धि स्थिर है | इस प्रकार की भक्ति का प्रबल आसक्तियों से मेल नहीं बैठ सकता |

११. इस प्रकार हम देखते हैं कि सच्चा भक्त होना आत्म-साक्षात्कार करना है | आत्म-साक्षात्कार कोई अलग वस्तु नहीं है | एक रुपये से हम विष भी खरीद सकते हैं और अमृत भी, परंतु ज्ञान या भक्ति से न मुक्ति खरीदी जा सकती है, न बंधन | वे विनिमय के साधन नहीं हैं | वे स्वयं इष्ट वस्तुएँ हैं | दूसरे शब्दों में यदि साधन और साध्य एक नहीं हैं, तो लगभग एक अवश्य हैं | साधन की पराकाष्ठा ही मुक्ति है | गीता की मुक्ति परम शांति है |

१२. परंतु इस ज्ञान और भक्ति को कर्मफल-त्याग की कसौटी पर खरा उतरना पड़ता है | भले-बुरे के ज्ञान से ही कोई मोक्ष का अधिकारी नहीं बनता | सामान्य कल्पना में कोरा पंडित भी ज्ञानी मान लिया जाता है | उसे कोई काम करने की ज़रूरत नहीं होती | छोटे से लोटे को उठाना भी वह बंधन समझेगा | जहाँ ज्ञान की एक कसौटी यह हो कि सेवा न करनी पड़े, वहाँ लोटा उठाने जैसी लौकिक क्रिया की गुंजाइश कैसे हो सकती है ?

१३. या भक्ति को लीजिये | भक्ति की आम कल्पना यह है कि भक्त का हृदय कोमल होना चाहिए, उसे माला जपते रहना चाहिए, आदि | प्रेमपूर्ण सेवाकर्म करने से भी उसकी माला में विक्षेप आता है | इसीलिए यह भक्त खाने-पीने आदि के लिए ही माला छोड़ता है, आटा पीसने या बीमारों की सेवा के लिए कभी नहीं छोड़ता |

१४. परंतु गीता कहती है: 'कर्म के बिना किसी को सिद्धि प्राप्त नहीं हुई है | जनक जैसे पुरुषों को भी कर्म से ही मोक्ष प्राप्त हुआ था | अगर मैं आलस्यवश काम करना छोड़ दूँ तो संसार का नाश हो जावे |' तब फिर साधारण लोगों के लिए कर्म में लगे रहना कितना ज्यादा ज़रूरी है ?

१५. जहाँ एक ओर यह निर्विवाद है कि सभी कर्म बंधनकारी होते हैं, वहाँ दूसरी ओर यह भी उतना ही सही है कि वे चाहें या न चाहें सभी प्राणियों को कुछ न कुछ कर्म करना पड़ता है | यहाँ मानसिक हों या शारीरिक, सभी प्रवृत्तियाँ कर्म शब्द में शामिल हैं | तब फिर कर्म करते हुए भी मनुष्य कर्म के बंधन

से कैसे मुक्त हो सकता है ? गीता ने इस समस्या को जिस ढंग से हल किया है वह मेरी जानकारी में अनोखा है | गीता कहती है: 'नियत कर्म करो, परंतु उसके फल का त्याग करो – अनासक्त होकर कर्म करो – फल की इच्छा छोड़कर कर्म करो |'

यह है गीता का असंदिग्ध उपदेश | जो कर्म छोड़ता है उसका पतन होता है | जो केवल फल को छोड़ता है उसका उत्कर्ष होता है | परंतु फल के त्याग का मतलब ऐसा हरगिज नहीं कि हम परिणाम के प्रति उदासीन हो जाएँ | प्रत्येक कर्म के बारे में मनुष्य को यह मालूम होना चाहिए कि वह उससे किस परिणाम की आशा रखता है, उसका साधन क्या है और उसके लिए कैसी क्षमता चाहिए | जिसकी इतनी तैयारी होगी परन्तु फल की इच्छा नहीं होगी और फिर भी जो अपने नियत कर्म को अच्छी तरह पूरा करने में पूरी तरह संलग्न होगा, उसके लिए यह कहा जायेगा कि उसने कर्मफल का त्याग कर दिया है |

१६. साथ ही कोई त्याग का यह अर्थ न समझे कि त्यागी को फल नहीं मिलता | गीता के वचनों से ऐसा अर्थ नहीं निकलता | त्याग का अर्थ है फल की लालसा न रखना | सच तो यह है कि जो छोड़ता है उसे सहस्र गुना मिलता है | गीता का त्याग श्रद्धा की चरम परीक्षा है | जो सदा फल की चिन्ता करता रहता है, वह कई बार कर्तव्य-भ्रष्ट होता है | वह अधीर हो जाता है और फिर क्रोध प्रगट करने और अयोग्य कार्य करने लगता है; वह एक से दूसरे में और दूसरे से तीसरे कर्म में पड़ता है और किसी एक कर्म के प्रति वफादार नहीं रहता | जो फल की चिन्ता करता है उसकी स्थिति विषयों में आसक्त मनुष्य जैसी हो जाती है; वह सदा उद्विग्न रहता है, सब सिद्धान्तों को तिलांजलि दे डालता है | उसे नीति-अनीति का विवेक नहीं रहता और इसीलिए वह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अच्छे-बुरे सभी साधनों का आश्रय लेता है |

१७. फलेच्छा के ऐसे कटु परिणामों से गीताकारने फलत्याग का मार्ग खोज़ निकाला और उसे अतिशय आकर्षक भाषा में संसार के सामने रखा है | सामान्य मान्यता यह है कि धर्म और अर्थ एक-दूसरे के विरोधी हैं | हम अनेक दुनियादार लोगों को यह कहते सुनते हैं कि "मनुष्य व्यापार आदि लौकिक व्यवहार में धर्माचरण नहीं कर सकता | ऐसे कामों में धर्म का स्थान नहीं होता; धर्म तो केवल मोक्ष की प्राप्ति के लिए है |" मेरी राय में गीताकार ने इस भ्रम को मिटा दिया है | उसने मोक्ष में और सांसारिक कर्मों में कोई भेद नहीं रखा है | इसके विपरीत उसने सिद्ध किया है कि हमारे सांसारिक कर्मों में भी धर्म की प्रधानता रहनी चाहिए | मैं तो इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि गीता हमें यह सिखाती है कि जो वस्तु व्यवहार में नहीं उतारी जा सकती उसे धर्म नहीं कहा जा सकता | इस प्रकार गीता के अनुसार ऐसे सब कर्म, जो आसक्ति के बिना नहीं किये जा सकते, निषिद्ध हैं | यह स्वर्ण-नियम मनुष्य-जाति को अनेक प्रकार के पतन से बचाता है | इस अर्थ के अनुसार हत्या, झूठ, व्यभिचार आदि कर्म सहज ही

त्याज्य और इसीलिए निषिद्ध हो जाते हैं | फिर मनुष्य का जीवन सरल बन जाता है और उस सरलता में से शान्ति उत्पन्न होती है |

१८. इस विचारश्रेणी का अनुसरण करते हुए मुझे महसूस हुआ है कि गीता के केन्द्रीय उपदेश को अपने जीवन में कार्यान्वित करने का प्रयत्न करते हुए हमें सत्य और अहिंसा का पालन करना ही होगा | जब फल की कोई इच्छा नहीं है, तब असत्य या हिंसा का कोई प्रलोभन नहीं हो सकता | असत्य या हिंसा का कोई भी उदाहरण लीजिये तो पता चलेगा कि उसके पीछे वांछित फल प्राप्त करने की इच्छा रही है | परंतु यह मुक्तकंठ से स्वीकार किया जा सकता है कि गीता अहिंसा की स्थापना के लिए नहीं लिखी गई | गीता-काल के पहले ही अहिंसा परमधर्म की तरह स्वीकार कर ली गयी थी | गीता को तो अनासक्ति का सिद्धान्त बताना था | यह बात दूसरे अध्याय में ही स्पष्ट हो जाती है |

१९. परंतु यदि गीता को अहिंसा मान्य थी अथवा अनासक्ति में अहिंसा सहज ही आ जाती है, तो फिर गीताकार ने भौतिक युद्ध का उदाहरण क्यों लिया ? जब गीता लिखी गई थी, उस समय अहिंसा धर्म तो मानी जाती थी, परंतु युद्धों का निषेध नहीं था | इतना ही नहीं, किसी को युद्धों और अहिंसा में विरोध दिखाई भी नहीं देता था |

२०. फलत्याग के महत्त्व का हिसाब लगाते समय हमें गीताकार के मन की खोज़ करके यह जानने की ज़रूरत नहीं कि उसकी अहिंसा आदि के विषय में क्या मर्यादाएँ थीं | कवि संसार के सामने अमुक सत्य पेश करता है, इससे यह निष्कर्ष निकालना ज़रूरी नहीं कि वह उसके महत्त्व को संपूर्ण रूप से पहचानता ही है, या पहचानता हो तो उसे भाषा में हमेशा पूरी तरह अभिव्यक्त कर सकता है | शायद इसी में उस काव्य की और कवि की महिमा है | कवि के अर्थ का कोई पार ही नहीं है | मनुष्य की भांति महान रचनाओं के अर्थ का भी विकास होता है | भाषाओं के इतिहास की पड़ताल करने पर हम देखते हैं कि महत्त्वपूर्ण शब्दों के अर्थ नित्य नये होते रहते हैं या उनका विस्तार होता जाता है | यही बात गीता की है | स्वयं ग्रंथकार ने कुछ प्रचलित शब्दों के अर्थों का विस्तार कर दिया है | ऊपर ऊपर से देखने पर भी हमें इस बात का पता चल जाता है | यह संभव है कि गीता से पहले के युग में पशुबलि विहित थी | परंतु गीता के यज्ञ के अर्थ में इसका चिह्न भी नहीं है | गीता में जपयज्ञ यज्ञों का राजा कहा गया है | तीसरे अध्याय से सूचित होता है कि यज्ञ का अर्थ मुख्यत: सेवा के लिए शरीर-श्रम है | तीसरे और चौथे अध्याय को एकसाथ पढ़ने से हमें यज्ञ के और अर्थ तो मिलेंगे, परंतु पशुबलि का अर्थ हरगिज नहीं मिलेगा | इसी प्रकार गीता में संन्यास शब्द की भी कायापलट हो गई है | गीता का संन्यास सभी कर्मों का सर्वथा त्याग सहन नहीं करता | गीता का संन्यास तो कर्ममय है और फिर भी अकर्म है | इस प्रकार गीताकार ने शब्दों के अर्थ का विस्तार करके हमें सिखाया है कि गीता की भाषा का भी व्यापक अर्थ किया जाय | मान लीजिये कि गीता के शब्दार्थ के अनुसार यह कहा जा सके कि

युद्ध का फलत्याग से मेल खाता है | परंतु ४० वर्ष तक गीता के उपदेश पर अपने जीवन में अमल करने के लगातार प्रयत्न के बाद मुझे पूर्ण नम्रता से अनुभव हुआ है कि सत्य और अहिंसा के पूर्ण पालन के बिना पूर्ण कर्मफल-त्याग मनुष्य के लिए असंभव है | गीता सूत्रग्रंथ नहीं है; वह एक महान धर्मकाव्य है | उसमें जितनी गहरी डुबकी लगाइये उतने ही नये और सुन्दर अर्थ मिलेंगे | सर्वसाधारण के लिए होने के कारण उसमें सुखद पुनरुक्ति है | इसीलिए गीता में आये हुए महाशब्दों मे अर्थ युग-युग में बदलते और विस्तृत होते रहेंगे | परंतु उसके केन्द्रीय अर्थ में कभी फर्क नहीं पड़ेगा | शोधक को स्वतंत्रता है कि इस भंडार में से वह जैसा चाहे अर्थ निकाल ले, ताकि वह अपने जीवन में इस केन्द्रीय उपदेश पर अमल कर सके |

२१. गीता कोई विधि-निषेधों का संग्रह भी नहीं है | जो वस्तु एक आदमी के लिए विहित है, वह दूसरे के लिए निषिद्ध हो सकती है | जो चीज़ एक समय या एक स्थान के लिए मान्य हो, वह दूसरे समय और दूसरे स्थान के लिए मान्य न भी हो | लेकिन फलासक्ति का सर्वत्र निषेध है | अनासक्ति सर्वत्र अनिवार्य है |

२२. गीता ने ज्ञान का गुणगान किया है, परंतु वह निरी बुद्धि से परे है | वह हृदय को लक्ष्य में रखकर कही गयी है और हृदयगम्य ही है | इसीलिए गीता उनके लिए नहीं है जिनमें श्रद्धा नहीं है | स्वयं ग्रंथकार ने कृष्ण से कहलवाया है :

> "जो तपस्वी नहीं है, जो सुनने की इच्छा नहीं रखता और जो मेरा द्वेष करता है, उससे तू यह ज्ञान कभी न कहना | परंतु जो यह परम गुह्य ज्ञान मेरे भक्तों को प्रदान करेंगे, वे अवश्य ही इस सेवा द्वारा मुझे प्राप्त करेंगे | और जो द्वेषमुक्त होकर श्रद्धापूर्वक इस उपदेश को मात्र सुनेंगे, वे भी मोक्ष प्राप्त करके वहाँ रहेंगे जहाँ सच्चे पुण्यवान लोग मृत्यु के बाद रहते हैं |"

यंग इंडिया,६-८-१९३१

३०

सत्य में सौन्दर्य

वस्तुओं के दो पक्ष होते हैं – बाहरी और भीतरी | सवाल यह है कि हम ज्यादा जोर किस पक्ष पर देते हैं | मेरे लिए बाह्य पक्ष का उतना ही महत्त्व हैं, जितना वह आन्तरिक के लिए सहायक होता है | इस प्रकार प्रत्येक सच्ची कला में आत्मा की अभिव्यक्ति होनी चाहिए | मनुष्य की आत्मा की जितनी अभिव्यक्ति बाह्य रूप में हो, उतनी ही उसकी कीमत है | इस प्रकार की कला मुझे बहुत प्रभावित करती है | परंतु मैं जानता हूँ कि बहुत लोग अपने को कलाकार कहते हैं और माने भी जाते हैं, फिर भी उनकी कृतियों में आत्मा की उन्नति की आकांक्षा और व्याकुलता का जरा भी चिह्न नहीं होता |

प्रत्येक सच्ची कला को अपना भीतरी रूप पहचानने में आत्मा की सहायक होना ही चाहिए | मेरी ही बात लीजिए | मैं देखता हूँ कि मैं अपनी आत्मा को पहचानने के काम में बाह्य रूपों के बिना पूरी तरह काम चला सकता हूँ | इसीलिए मैं दावा कर सकता हूँ कि मेरे जीवन में सचमुच सफल कला है, भले आप जिन्हें कला की कृतियाँ कहते हैं वे मेरे आसपास न हों | मेरे कमरे की दीवारें कोरी हों और सिर पर छप्पर भी न हो, तो मैं कला का ज्यादा उपभोग कर सकता हूँ | मैं उस तारोंभरे आकाश को निहार सकता हूँ, जिसका सौंदर्य अनन्त तक फैला हुआ है | मानव की कौन-सी कलाकृति मेरे लिए वे रमणीय दृश्य उपस्थित कर सकती है, जो उस समय मेरे सामने आते हैं जब मैं चमकते हुए तारोंवाले आकाश को देखता हूँ ? परंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं जिन्हें सामान्य तौर पर कला की कृतियाँ कहा जाता है उनके महत्त्व को स्वीकार नहीं करता | मेरा मतलब इतना ही है कि मैं खुद यह महसूस करता हूँ कि प्रकृति में सौन्दर्य के जो शाश्वत प्रतीक हैं उनकी तुलना में ये कृतियाँ बहुत अल्प हैं | मानव की इन कलाकृतियों का मूल्य उतना ही है, जितनी वे आत्म-साक्षात्कार में सहायक होती हैं |

मैं सत्य में या सत्य के द्वारा सौन्दर्य को देखता और पाता हूँ | सभी सत्य, अर्थात् न केवल सत्य विचार, किन्तु जिनमें सत्य प्रतिबिम्बित होता हो ऐसी मुखाकृतियाँ, चित्र या गीत अति सुन्दर होते हैं | लोगों को आम तौर पर सत्य में सौन्दर्य नहीं दिखाई देता | साधारण मनुष्य उसके सौन्दर्य से दूर भागता है, वह उसे देख ही नहीं सकता | जब मनुष्य को सत्य में सौन्दर्य दिखाई देने लगेगा तब सच्ची कला जन्म लेगी |

सच्चे कलाकार के लिए वही मुख सुन्दर है, जिसमें उसका बाहरी रूप कैसा भी हो, आत्मा के भीतर का सत्य प्रकाशित होता है | सत्य से अलग सौन्दर्य है ही नहीं | इसके विपरीत, सत्य ऐसे रूप में प्रगट हो सकता है जो बाहर से बिलकुल सुन्दर न हो | हमें बताया गया है कि सुकरात अपने जमाने का

सबसे सच्चा आदमी था, पर उसका चेहरा यूनान में सबसे कुरूप था | मेरे खयाल से वह सुन्दर था, क्योंकि उसका सारा जीवन सत्य का एक प्रयत्न था | और आपको याद होगा कि उसके इस बाहरी रूप से फीडियस को उसके भीतरी सत्य के सौन्दर्य की कद्र करने में बाधा नहीं हुई, यद्यपि एक कलाकार की तरह उसे बाह्य रूप में भी सौन्दर्य देखने का अभ्यास था |

सत्य और असत्य अकसर साथ साथ रहते हैं; भलाई और बुराई बहुधा एकसाथ पाई जाती हैं | कलाकार में भी अकसर वस्तुओं की सही और ग़लत कल्पनाएं एकसाथ रहती हैं | सच्ची सौन्दर्यपूर्ण कृतियाँ तब जन्म लेती हैं जब सही कल्पना काम करती है | अगर ये अवसर जीवन में दुर्लभ होते हैं तो कला में भी दुर्लभ होते हैं |

ये सौन्दर्य ('सूर्यास्त अथवा दूज का चाँद जो रात को तारों के बीच चमकता है') सत्यपूर्ण हैं, क्योंकि उनसे मुझे उनके पीछे जो स्रष्टा है उसका खयाल होता है | सृष्टि के केन्द्र में सत्य न होता तो ये वस्तुएँ सुन्दर कैसे होती ? जब मैं सूर्यास्त की विलक्षणता अथवा चन्द्रमा की सुन्दरता की प्रशंसा करता हूँ, तब मेरा हृदय प्रभु की पूजा में लीन हो जाता है | मैं इस सारी सृष्टि में उसे और उसकी करुणा को देखने की कोशिश करता हूँ | परंतु सूर्यास्त और सूर्योदय भी मेरे बाधक बन जायेंगे, अगर मुझे उनसे प्रभु का ध्यान करने में मदद न मिले | कोई भी चीज़, जो आत्मा की उड़ान में बाधक होती है, माया है, जाल है; शरीर की भी यही बात है, क्योंकि वह कई बार मोक्ष के मार्ग में सचमुच रुकावट पैदा करता है |

यंग इंडिया, १३-११-१९२४

सत्य ही मूल वस्तु है; पहले सत्य को पाना चाहिए | लेकिन सत्य 'शिव' और 'सुन्दर' होता है, अत: सत्य को प्राप्त कर लेने पर कल्याण और सौंदर्य तुम्हें मिल ही जायेंगे | ईसा ने अपने गिरि-प्रवचन में यही सिखाया है | ईसा को मैं महान कलाकार मानता हूँ, क्योंकि उन्होंने सत्य की उपासना की, उसे ढूँढ़ा और अपने जीवन में प्रगट किया | इसी तरह मुहम्मद भी एक बड़े कलाकार थे - कुरान अरबी साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचना है; पण्डितजन ऐसा ही कहते हैं | दोनों ने पहले सत्य की प्राप्ति का प्रयत्न किया; यही कारण है कि उनकी वाणियों में अभिव्यक्ति का सौंदर्य अपने-आप आ गया | लेकिन ईसा या मुहम्मद, किसी ने भी कला पर कुछ लिखा नहीं | ऐसे ही सत्य और सौंदर्य की आकांक्षा मैं करता हूँ; मैं उसी के लिए जी रहा हूँ और ज़रूरत हो तो अपने प्राण भी उसके लिए दे दूँगा |

यंग इंडिया, २०-११-१९२४

दूसरी वस्तुओं की तरह यहाँ भी मैं तो करोड़ों की ही दृष्टि से सोचता हूँ | करोड़ों को हम सौंदर्य का दर्शन इस तरह करने की तालीम नहीं दे सकते कि वे उसमें सत्य को देख सकें | इसीलिए पहले उन्हें सत्य का दर्शन करना सिखाओ, सौंदर्य का दर्शन वे बाद में कर लेंगे | भूखे मर रहे करोड़ों के लिए जो

चीज़ उपयोगी हो सकती हो, वह मुझे सुन्दर ही दिखाई देती है | उन्हें पहले हम प्राणपोषक वस्तुएँ तो दें, जीवन को शोभा और सुन्दरता प्रदान करनेवाली वस्तुएँ बाद में आ जायेंगी |

यंग इंडिया, २०-११-१९२४

सच्ची कला केवल रूप और आकृति का ही नहीं, रूप और आकृति के पीछे अन्तर्हित सत्य का भी विचार करती है | एक कला ऐसी है जो मारती है, एक कला ऐसी भी है जो जिलाती है | सच्ची कला में कलाकार की आन्तरिक पवित्रता, संतोष और आनन्द का परिचय मिलना चाहिए |

यंग इंडिया, ११-८-१९२१

हम किसी न किसी तरह इस विश्वास के आदी हो गये हैं कि कलाकार का शुद्ध जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं | मैं अपने सारे अनुभव के बल पर कह सकता हूँ कि इससे अधिक असत्य कुछ नहीं हो सकता | जब मैं अपने पार्थिव जीवन के अन्त के निकट पहुँच रहा हूँ, तब मैं कह सकता हूँ कि जीवन की पवित्रता सबसे ऊँची और सबसे अच्छी कला है | सधे हुए स्वर से अच्छा संगीत पैदा करने की कला बहुतों को प्राप्त हो सकती है, परंतु शुद्ध जीवन की संवादिता से उस संगीत को पैदा करने की कला बहुत कम लोगों को प्राप्त होती है |

हरिजन, १९-२-१९३८

३१

रामनाम

यद्यपि मेरी बुद्धि और मेरे हृदय ने बहुत समय पहले यह अनुभव कर लिया था कि ईश्वर का सर्वोच्च गुण और नाम सत्य है, फिर भी मैं सत्य को राम के नाम से स्वीकार करता हूँ| मेरी परीक्षा की अत्यन्त अंधेरी घड़ियों में इसी एक नाम ने मुझे बचाया है और अब भी वह मुझे बचा रहा है | संभव है इसका कारण मेरे बचपन के संस्कार हों या मुझ पर तुलसीदास का जादू हो गया हो | कारण जो भी हो, यह मेरे जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण हक़ीकत है | और जिस समय मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ तब मुझे मेरे बचपन के दृश्य याद आते हैं | उस समय मैं अपने पैतृक घर से लगे हुए रामजी के मंदिर में रोज़ जाया करता था | उस समय मेरा राम वहाँ रहता था | उसने अनेक खतरों और पापों से मेरी रक्षा की थी | मेरे लिए वह कोई अन्धविश्वास नहीं था | हो सकता है मूर्ति का पुजारी बुरा आदमी रहा हो | मैं उसके विरुद्ध कुछ नहीं जानता | मंदिर में दुष्कर्म हुए होंगे, उनकी भी मुझे कोई जानकारी नहीं है | इसीलिए उनका मुझ पर कोई असर नहीं होता | जो बात मुझ पर लागू थी और है, वही लाखों हिन्दुओं पर लागू होती है |

हरिजन, १८-३-१९३३

जब कोई यह आपत्ति करता है कि राम या राम का नाम लेना तो हिन्दुओं के ही लिए है, मुसलमान उसमें कैसे भाग ले सकते हैं, तब मुझे अपने मन में हँसी आती है | क्या मुसलमानों के लिए एक ईश्वर है और हिन्दुओं, पारसियों और ईसाइयों के लिए दूसरा है ? नहीं, सर्व-शक्तिमान और सर्वव्यापी ईश्वर तो एक ही है, उसके नाम अलग-अलग हैं; और जो नाम हमारे लिए सबसे सुपरिचित है, उसी से हम उसे याद करते हैं |

मेरा राम, हमारी प्रार्थना का राम, ऐतिहासिक राम नहीं है, जो दशरथ का पुत्र और अयोध्या का राजा था | वह तो नित्य, अजन्मा और अद्वितीय परमेश्वर है | मैं उसी की पूजा करता हूँ | मैं उसी की सहायता चाहता हूँ और आप भी ऐसा ही कीजिए | वह समान रूप से सबका है | इसीलिए मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि किसी मुसलमान को या और किसी को भी उसका नाम लेने में एतराज़ क्यों हो | लेकिन रामनाम के रूप में ईश्वर को पहचानने के लिए वह बंधा हुआ नहीं है | वह अपने मन में इस तरह से खुदा या अल्लाह का नाम ले सकता है, जिससे स्वरों का सामंजस्य भंग न हो |

हरिजन, २८-४-१९४६

मैं स्वयं तो बचपन से ही तुलसीदास का भक्त रहा हूँ और इसीलिए मैंने ईश्वर की पूजा सदा राम के रूप में की है | परंतु मैं जानता हूँ कि ओंकार से लेकर सब देशों में और सब भाषाओं में प्रचलित ईश्वर के समस्त नामों को देखा जायें तो भी परिणाम एक ही निकलेगा | ईश्वर और उसका नियम एक ही वस्तु है | इसीलिए उसके नियम का पालन करना पूजा का सबसे अच्छा रूप है | जो उस नियम के साथ एक हो जाता है, उसे जबान से उसका नाम लेने की ज़रूरत नहीं रहती | दूसरे शब्दों में, जिस व्यक्ति के लिए ईश्वर का ध्यान सांस लेने जैसा स्वाभाविक बन जाता है, उसमें ईश्वर की भावना इतनी भर जाती है कि उसके नियम का ज्ञान या पालन भी एक प्रकार से उसके लिए स्वाभाविक हो जाता है | ऐसे मनुष्य के लिए और किसी इलाज की ज़रूरत नहीं है |

तब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि हमारे हाथ में यह श्रेष्ठ उपाय होते हुए भी हमें इसका इतना थोड़ा ज्ञान क्यों है और जिन्हें ज्ञान है वे भी ईश्वर को याद क्यों नहीं रखते या हृदय के बजाय केवल वाणी से क्यों याद करते हैं ? तोते की तरह ईश्वर का नाम रट लेने का अर्थ है कि हम उसे सब रोगों की एक रामबाण औषध के रूप में नहीं पहचान सके हैं |

हरिजन, २४-३-१९४६

यह कहा जा सकता है कि राम का भक्त और गीता का स्थितप्रज्ञ एक ही हैं | अगर हम थोड़ी गहराई में जायें तो पता लगेगा कि ईश्वर का सच्चा भक्त प्रकृति के पंचतत्त्वों का ईमानदारी से आज्ञा-पालन करता है | अगर वह उनका आज्ञा-पालन करता है तो बीमार नहीं पड़ेगा | यदि संयोगवश बीमार पड़ गया, तो उन तत्त्वों की सहायता से अपना इलाज खुद कर लेगा | जो शरीर को अपना वस्त्र या आवरण मानता है, वह शरीर का चाहे जिस तरह से इलाज नहीं करना चाहेगा – हाँ, जो यह मानता है कि वह शरीर के सिवा कुछ नहीं है, उसके लिए शरीर के रोगों का इलाज करने के लिए दुनिया-भर में भटकना स्वाभाविक होगा | परंतु जो अच्छी तरह समझता है कि शरीर में रहते हुए भी आत्मा उससे कोई भिन्न वस्तु है और नाशवान शरीर के मुकाबले में अविनाशी है, उसे पंचतत्त्वों के काम न आने पर कोई उद्वेग या शोक नहीं होगा | इसके विपरीत वह मृत्यु को मित्र समझकर उसका स्वागत करेगा | वह डॉक्टरों की खोज़ न करके अपना इलाज स्वयं ही कर लेगा | वह आत्मा का भान रखकर जियेगा और आरंभ से अन्त तक अन्तर्वासी आत्मा के ही कल्याण की चिन्ता करेगा |

ऐसा आदमी हर साँस के साथ ईश्वर का नाम लेगा | जब शरीर सोता होगा तब भी उसका राम जागता रहेगा | वह जो कुछ करेगा उसमें राम सदा उसके साथ होगा | ऐसा भक्त मनुष्य तो इस पवित्र साथ के छूट जाने को ही मृत्यु मानेगा |

अपने राम को अपने साथ रखने के लिए वह पंचतत्त्वों से जो सहायता मिल सकती है वही लेगा | अर्थात् पृथ्वी, वायु, जल, तेज और आकाश से जो भी लाभ उठाया जा सकता है, उसके लिए सबसे

सादा और सरल उपाय काम में लेगा | यह सहायता रामनाम की पूर्ति करनेवाली नहीं है | यह तो उसके साक्षात्कार का एक साधन-मात्र है | वास्तव में रामनाम को किसी सहायक की ज़रूरत नहीं होती | परंतु रामनाम के विश्वास का दावा करना और साथ ही डॉक्टरों के पास दौड़ना ये दोनों साथ साथ नहीं चल सकते |

जैसे शरीर रक्त के बिना नहीं रह सकता, ठीक उसी तरह आत्मा को श्रद्धा की अद्वितीय और शुद्ध शक्ति की ज़रूरत है | यह शक्ति मनुष्य के शारीरिक अंगों की दुर्बलता में फिर से बल का संचार कर सकती है | इसीलिए यह कहा गया है कि जब रामनाम हृदय में अंकित हो जाता है तो मनुष्य का पुनर्जन्म हो जाता है | यह नियम युवा और वृद्ध, स्त्री और पुरुष सब पर समान रूप से लागू होता है |

हरिजन, २९-६-१९४७

३२

प्राकृतिक चिकित्सा

प्राकृतिक चिकित्सा काअर्थ वह इलाज है जो मनुष्य के अनुकूल है – उसकी मनुष्यता के अनुरूप है | मनुष्य से अभिप्राय उस नाम से परिचित केवल शरीरधारी से नहीं, परंतु ऐसे प्राणी से है जिसके पास मन और आत्मा भी हैं | ऐसे प्राणी के लिए रामनाम सबसे सच्चा कुदरती इलाज है | यह अचूक उपाय है | इसीलिए तो अचूक औषधि को रामबाण कहते हैं | प्रकृति भी बताती है कि मनुष्य के लिए यही योग्य इलाज है | मनुष्य किसी भी रोग से पीड़ित हो, अगर वह हृदय से रामनाम ले तो रोग अवश्य नष्ट होगा | ईश्वर के अनेक नाम हैं | प्रत्येक व्यक्ति वह नाम चुन सकता है जो उसे ठीक लगे | ईश्वर, अल्लाह, खुदा और गॉड सबका एक ही अर्थ है | परंतु नाम-स्मरण तोते की भांति नहीं होना चाहिए | वह श्रद्धा से पैदा होना चाहिए और हमारे प्रयत्न में उस श्रद्धा का परिचय मिलना चाहिए | तब इस प्रयत्न का रूप क्या होगा ? मनुष्य को जिन पाँच तत्त्वों से उसका शरीर बना है – अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु – उनमें ही अपने इलाज की खोज़ करनी चाहिए और उन्हीं तक सीमित रहकर संतोष करना चाहिए | अवश्य रामनाम तो सदा साथ रहना ही चाहिए | इतना होने पर भी मौत आ ही जाय तो हमें परवाह नहीं होनी चाहिए, बल्कि उसका स्वागत करना चाहिए | विज्ञान अभी शरीर को अमर करने का कोई नुस्ख़ा नहीं निकाल सका है | अमरत्व तो आत्मा का गुण है | उसके लिए सब शुद्ध शरीर पैदा करने का प्रयत्न करें |

हरिजन, ३-३-१९४६

अगर हमें ऊपर का तर्क मंजूर हो तो प्राकृतिक चिकित्सा के साधन अपने आप मर्यादित हो जायेंगे | और इससे मनुष्य बड़े-बड़े अस्पतालों और मशहूर डॉक्टरों वगैरह के लवाजमे से बच जायेगा | संसार के अधिकांश मनुष्य कभी इतना खर्च बर्दाश्त नहीं कर सकते | तब फिर जो बात बहुतों को नहीं मिल सकती उसे थोड़े लोग क्यों चाहें ?

हरिजन, ३-३-१९४६

परंतु रामनाम की शक्ति की अपनी कुछ मर्यादाएँ हैं और उसके कारगर होने के लिए कुछ शर्तों का पूरा होना ज़रूरी है | रामनाम जादू-टोने की तरह नहीं है | अगर कोई आदमी अति भोजन के रोग से पीड़ित है और उसके परिणामों से इसीलिए बचना चाहता है कि वह फिर बदपरहेजी करे तो उसके लिए रामनाम नहीं है | रामनाम किसी अच्छे उद्देश्य के लिए ही काम में लिया जा सकता है, न कि बुरे के लिए | अन्यथा चोर-डाकू सबसे बड़े भक्त हो जायेंगे | रामनाम शुद्ध हृदयवालों के लिए है और उन

लोगों के लिए है, जो शुद्धता प्राप्त करना और शुद्ध रहना चाहते हैं | वह कभी भोग का साधन नहीं बन सकता | अधिक खाने का इलाज उपवास है, न कि प्रार्थना | प्रार्थना तभी आ सकती है जब उपवास अपना काम कर चुका हो | वह उपवास को आसान और सही बना सकती है | इसी तरह रामनाम लेने के साथ आप अपने शरीर में दवाइयाँ ठूँसते रहें, तो रामनाम एक व्यर्थ का ढकोसला हो जायेगा | जो डॉक्टर अपने मरीज की बुराइयों को संतुष्ट करने के लिए अपनी बुद्धि का उपयोग करता है, वह अपना और अपने बीमार का पतन करता है | मनुष्य के लिए इससे बुरा पतन और क्या हो सकता है कि अपने शरीर को प्रभु की पूजा का साधन समझने के बजाय वह उसी को पूजा की वस्तु बना ले और उसे टिकाये रखने के लिए पानी की तरह रुपया बहाये ? इसके विपरीत रामनाम रोग मिटाने के साथ साथ आदमी को शुद्ध बनाता है और इसीलिए ऊँचा उठाता है | यही रामनाम का उपयोग है और यही उसकी मर्यादा |

हरिजन, ७-४-१९४६

यह एक योग्य प्रश्न है कि जो आदमी नियमित रूप से रामनाम लेता है और शुद्ध जीवन बिताता है, उसे कभी बीमार क्यों पड़ना चाहिए | प्रकृति से मनुष्य अपूर्ण है | विचारशील मनुष्य पूर्णता का प्रयत्न करता है; परंतु उसे कभी प्राप्त नहीं करता | अनजाने ही सही, वह रास्ते में ठोकरें खाता है | ईश्वर का सारा कानून शुद्ध सदाचारी जीवन में मूर्तिमान होता है | पहली चीज़ अपनी मर्यादाएँ अच्छी तरह समझ लेना है | यह तो स्पष्ट जान पड़ता है कि ज्यों ही मनुष्य उन मर्यादाओं का उल्लंघन करता है त्यों ही बीमार पड़ता है | ज़रूरत के अनुसार संतुलित भोजन करने से हमें बीमारी से छुटकारा मिलता है | लेकिन यह कैसे जानें कि हमारे लिए ठीक खुराक क्या है ? ऐसी कई गूढ़ समस्याओं की कल्पना की जा सकती है | इन सारी बातों का मतलब यह है कि हरएक को खुद अपना डॉक्टर बन जाना चाहिए और अपनी मर्यादाओं का पता लगा लेना चाहिए | जो मनुष्य ऐसा करेगा वह अवश्य १२५ वर्ष जियेगा |

हरिजन, १९-५-१९४६

प्राकृतिक चिकित्सा और इलाज की देशी पद्धतियों के लिए मुझे प्रेम है | लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि पश्चिम के देशों ने डॉक्टरी विद्या में जो तरक्की की है, उसे मैं देख नहीं सकता, यद्यपि मैंने कड़े शब्दों में उसकी टीका की है और उनकी पद्धति को 'जादू-टोने' का नाम दिया है | मैंने यह कठोर शब्द काम में लिया है और मैं उसे वापस नहीं लेता, क्योंकि एक तो उन्होंने अपने इलाज में जीवित प्राणियों की चीर-फाड़ और उसके साथ लगी हुई सारी क्रूरताओं को जगह दी है | दूसरे वे इन्सान की ज़िन्दगी को बढ़ाने के लिए सब तरह के काम, फिर वे कितने ही बुरे क्यों न हों, करने के लिए तैयार रहते हैं और शरीर के अन्दर रहनेवाली आत्मा को बिलकुल भूल गये हैं | प्राकृतिक चिकित्सा की बड़ी

मर्यादाओं और प्राकृतिक चिकित्सा के निकम्मे दावों के बावजूद मैं उसे कभी छोड़ नहीं सकता | सबसे बड़ी बात यह है कि प्राकृतिक चिकित्सा में हरएक आदमी स्वयं अपना डॉक्टर बन सकता है | दूसरी चिकित्सा-प्रणालियों में यह बात नहीं है |

हरिजन, ११-८-१९४६

मनुष्य के पास दूसरी शक्तियों की भांति आध्यात्मिक बल भी है, जिसका उपयोग वह अपने लाभ के लिए कर सकता है | युगों से उसका उपयोग शारीरिक व्याधियों के इलाज के लिए किया जाता रहा है और उसमें थोड़ी या बहुत सफलता भी मिली है इस बात को छोड़ दें तो भी अगर उसे शारीरिक व्याधियों को अच्छा करने के लिए सफलतापूर्वक काम में लिया जा सकता हो तो काम में न लेना बुनियादी ग़लती होगी | कारण, मनुष्य जड़ और चेतन दोनों है और एक का दूसरे पर असर होता है | अगर आप जिन लाखों लोगों को कुनैन नहीं मिलती उनका विचार किये बिना कुनैन लेकर मलेरिया से छुटकारा पा लेते हैं, तो महज इसीलिए कि लाखों लोग अपने अज्ञानवश उसे काम में नहीं लेंगे; आप उस इलाज का इस्तेमाल करने से क्यों इनकार करते हैं जो आपके भीतर मौजूद है ? दूसरे लाखों लोग अज्ञान या आलस्यवश साफ और स्वस्थ न रहें, तो क्या आपको भी साफ और स्वस्थ नहीं रहना चाहिए ? अगर परोपकार की झूठी धारणाओं के कारण आप स्वच्छ न रहेंगे, तो आप मैले और बीमार रहकर उन्हीं लाखों लोगों की सेवा के कर्तव्य से वंचित रहेंगे | बेशक, आध्यात्मिक दृष्टि से स्वस्थ या स्वच्छ न रहना शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ और स्वच्छ न रहने से ज्यादा बुरा है |

हरिजन, १-९-१९४६

मोक्ष का अर्थ हर प्रकार से स्वस्थ होना ही है | आप अपने को इससे वंचित क्यों करें, अगर इससे आप दूसरों का मार्गदर्शन कर सकते हों और मार्गदर्शन के अलावा अपनी तन्दुरुस्ती के कारण उनकी सेवा भी कर सकते हों ?

हरिजन, १-९-१९४६

३३

प्राणीमात्र की एकता

मेरा नीतिशास्त्र न सिर्फ मुझे यह दावा करने की इजाजत देता है, बल्कि चाहता भी है कि मैं केवल बन्दर को ही नहीं, परंतु घोड़े और भेड़ को, शेर और चीते को, साँप और बिच्छु तक को अपना कुटुम्बी समझूं | यह ज़रूरी नहीं कि ये प्राणी भी अपने को ऐसा ही समझें | मेरे जीवन पर जिस कठोर नीतिशास्त्र का नियंत्रण है और मेरी राय में प्रत्येक स्त्री-पुरुष के जीवन पर भी होना चाहिए, उससे हम पर यह इकतरफा जिम्मेदारी आती है | और वह इसीलिए आती है कि केवल मनुष्य ही ईश्वर के स्वरूप के अनुसार बनाया गया है | अगर हममें से कुछ लोग अपनी यह स्थिति नहीं पहचानते तो इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता | सिर्फ इतना ही होता है कि उस स्थिति का लाभ हमें नहीं मिलता, जैसे किसी सिंह का भेड़ों के साथ-साथ लालन-पालन हुआ हो और वह अपनी खुद की स्थिति को न जानता हो तो उसे सिंह होने का लाभ नहीं मिलता | परन्तु वह सिंह तो रहता ही है | और ज्यों ही वह अपने सिंहत्व को पहचान लेता है, त्यों ही भेड़ों पर शासन करने लगता है | परंतु शेर की खाल पहन कर कोई भेड़ शेर की स्थिति को कभी प्राप्त नहीं कर सकता | और इस बात को सिद्ध करने के लिए कि मनुष्य ईश्वर के स्वरूप के अनुसार बनाया गया है, यह ज़रूरी नहीं है कि हम सब मनुष्यों में उस स्वरूप का प्रगट होना दिखायें | अगर हम किसी एक मनुष्य में भी उस स्वरूप की अभिव्यक्ति दिखा दें तो हमारी बात सिद्ध हो जाती है | क्या इस बात से कोई इनकार करेगा कि मानव-जाति के महान धर्मगुरुओं ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया है कि वे परमात्मा के स्वरूप के अनुसार बने हुए थे ?

यंग इंडिया, ८-७-१९२६

मैं एक साँप की भी जीवन-हानि करके जिन्दा नहीं रहना चाहता | मुझे उसके काटने से मर जाना मंजूर है, मगर उसे मारना मंजूर नहीं | परन्तु संभव है कि ईश्वर मेरी ऐसी निर्दय परीक्षा ले और साँप को मुझ पर हमला करने दे तब मुझमें मरने का साहस प्रगट न हो, बल्कि मेरे भीतर का पशुत्व जोर करे और मैं इस नाशवान शरीर की रक्षा करने में साँप को मारने का प्रयत्न करूँ | मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरा विश्वास अभी तक इतना पूर्ण नहीं बना है कि मैं जोर के साथ यह कह सकूँ कि मैंने साँपों का सब डर छोड़ दिया है और मैं, जैसा कि मैं चाहता हूँ, उनसे मित्रता का व्यवहार कर सकता हूँ | यह मेरा असंदिग्ध विश्वास है कि साँप, चीते वगैरह हमारे विषैले, दुष्ट और बुरे विचारों के जवाब हैं |... मैं मानता हूँ कि प्राणीमात्र एक हैं | विचार निश्चित रूप ग्रहण करते हैं | शेरों और साँपों का हमारे साथ पारिवारिक सम्बन्ध है | वे हमारे लिए इस बात की चेतावनी है कि हम बुरे, दुष्टतापूर्ण और वासनायुक्त

विचार न रखें | अगर मैं जहरीले पशुओं और रेंगनेवाले कीड़े-मकोड़ों से छुटकारा पाना चाहता हूँ, तो मुझे सभी विषैले विचारों से मुक्त हो जाना चाहिए | मैं ऐसा नहीं कर सकूँगा, यदि अपने अधीरतापूर्ण अज्ञान से और शरीर की आयु बढ़ाने की इच्छा से मैं कथित जहरीले पशुओं और कीड़े-मकोड़ों को मारने की कोशिश करूँगा | यदि ऐसे हानिकारक जानवरों से अपनी रक्षा करने की कोशिश न करके मैं मर जाता हूँ, तो मैं अधिक अच्छा और पूर्ण मनुष्य बनकर फिर जन्म लूँगा | अपने भीतर ऐसी श्रद्धा रखकर मैं साँपरूपी साथी प्राणी को मारने की इच्छा कैसे कर सकता हूँ?

यंग इंडिया, १४-४-१९२७

हम मृत्यु के बीच में रहते हुए टटोल-टटोल कर सत्य का मार्ग खोज़ने की कोशिश कर रहे हैं | शायद यह अच्छा भी है कि हम अपने जीवन में हर कदम पर खतरे से घिरे हुए हैं, क्योंकि खतरे की जानकारी और जीवन की अरक्षित हालत का ज्ञान होते हुए भी प्राणीमात्र के मूल स्रोत के प्रति हमारी जितनी उदासीनता है उतना ही हमारा अहंकार आश्चर्यकारक है |

यंग इंडिया, ७-७-१९२७

प्राणीमात्र का शरीर किसी न किसी हिंसा से कायम रहता है | इसीलिए सर्वोच्च धर्म की व्याख्या अहिंसा जैसे निषेधात्मक शब्द द्वारा की गई है | संसार विनाश की जंजीर में बंधा हुआ है | दूसरे शब्दों में, शरीर में प्राण रहने के लिए हिंसा स्वाभाविक रूप में आवश्यक है | इसी कारण अहिंसा का पुजारी सदा शरीर के बंधन से मुक्त होने की प्रार्थना करता है |

यंग इंडिया, ४-१०-१९२८

मुझे इस हक़ीकत का दुखपूर्ण भान है कि शरीर में प्राण बनाये रखने की मेरी इच्छा मुझसे सतत हिंसा कराती है | यही कारण है कि मैं अपने इस भौतिक शरीर के प्रति दिन-दिन उदासीन होता जा रहा हूँ | उदाहरण के लिए, मैं जानता हूँ कि साँस लेने और निकालने की क्रिया में मैं हवा में उड़नेवाले असंख्य अदृश्य कीटाणुओं को नष्ट करता हूँ | परन्तु मैं श्वासोच्छ्वास नहीं छोड़ता | साग-सब्जियों को काम में लेने से हिंसा होती है, परन्तु मैं देखता हूँ कि मैं उन्हें नहीं छोड़ सकता | इसी तरह कृमिनाशक औषधियों के उपयोग में हिंसा है, फिर भी मैं मच्छरों वगैरह से छुटकारा पाने के लिए मिट्टी के तेल आदि रोग का संक्रमण रोकनेवाले पदार्थों का उपयोग छोड़ने के लिए अपने को तैयार नहीं कर पा रहा हूँ | जब आश्रम में साँपों को पकड़कर निरापद स्थानों पर छोड़ना संभव नहीं होता, तो मैं उनका मारा जाना सहन कर लेता हूँ | मैं आश्रम में बैलों को हाँकने के लिए लकड़ी का प्रयोग भी बर्दाश्त कर लेता हूँ | इस प्रकार जो हिंसा मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में करता हूँ उसका कोई अन्त नहीं | अगर मेरी इस नम्र स्वीकारोक्ति के कारण मित्र लोग मुझे गया-बीता समझकर छोड़ देंगे तो मुझे दुख होगा, परन्तु इससे मैं अहिंसा के पालन में अपनी अपूर्णताओं को छिपाने की कोशिश नहीं करूँगा | अपने लिए

मेरा दावा इतना ही है कि मैं अहिंसा आदि महान आदर्शों के गूढ़ार्थ समझने और उनका मन, कर्म तथा वचन से पालन करने का सतत प्रयत्न कर रहा हूँ | और उसमें मुझे अपनी समझ के अनुसार कुछ सफलता भी मिल रही है | परन्तु मुझे मालूम है कि अभी इस दिशा में मुझे लंबा सफर तय करना है |

यंग इंडिया, १-११-१९२८

मैं मानता हूँ कि मैं अहिंसा से ओतप्रोत हूँ | अहिंसा और सत्य मेरे दो फेफड़े हैं | मैं उनके बिना जी नहीं सकता | परन्तु मैं हर क्षण अधिकाधिक स्पष्ट रूप में अहिंसा की जबरदस्त ताकत और इन्सान की क्षुद्रता देख रहा हूँ | वनवासी भी, उसमें असीम दया हो तब भी, हिंसा से सर्वथा मुक्त नहीं हो सकता | हर साँस के साथ वह कुछ न कुछ हिंसा करता ही है | शरीर स्वयं एक कसाई-घर है | और इसीलिए मोक्ष और चिर आनन्द शरीर से पूरी तरह मुक्त होने में है और इसीलिए मोक्ष के आनन्द के सिवा और सब सुख क्षणभंगुर हैं, अपूर्ण हैं | ऐसी हालत में हमें दैनिक जीवन में हिंसा की अनेक कड़वी घूँटें पीनी पड़ती हैं |

यंग इंडिया, २१-१०-१९२६

मैं सचमुच मानता हूँ कि जरा-जरा से बहाने पर मनुष्य की मनुष्य को मारने की आदत ने उसकी बुद्धि को धुंधला कर दिया है | मनुष्य दूसरों के प्राण लेने में जितनी उच्छृंखलता से काम लेता है उससे वह काँप उठता, यदि वास्तव में उसका यह विश्वास होता कि ईश्वर प्रेम और दया की मूर्ति है | कुछ भी हो, मौत के डर से मैं शेरों, साँपों, पिस्सुओं और मच्छरों आदि को मार भी डालूँ तो भी मैं सदा उस ज्ञान के लिए प्रार्थना करता हूँ, जो मृत्यु का सारा भय मिटा दे और जिसे पाकर मैं किसी भी प्राणी की हिंसा करने से इनकार कर दूँ |

हरिजन, ९-१-१९३७

गाय

पशु-जगत में गाय शुद्धतम प्राणी है | वह हमारे सामने सारी पशु-जाति के लिए मनुष्य के हाथों न्याय प्राप्त करने की वकालत करती है, क्योंकि मनुष्य सृष्टि का श्रेष्ठ प्राणी है | वह अपनी आँखों के द्वारा हमें यह कहती दिखाई देती है: 'हमें मारने और हमारा माँस खाने या अन्य दुर्व्यवहार करने के लिए तुम्हें हमारे ऊपर नहीं रखा गया है, परन्तु हमारा मित्र और संरक्षक बनने के लिए |'

यंग इंडिया, २६-६-१९२४

गाय मेरे लिए करुणा का काव्य है | मैं उसकी पूजा करता हूँ और सारी दुनिया का मुकाबला करके भी मैं उसकी पूजा की रक्षा करूँगा |

यंग इंडिया, १-१-१९२५

३४

ब्रह्मचर्य क्या है ?

एक भाई पूछते हैं: 'ब्रह्मचर्य क्या है ? क्या उसका पूर्ण पालन संभव है ? है तो क्या आप करते हैं ?'

ब्रह्मचर्य का पूरा और ठीक अर्थ तो ब्रह्म की खोज़ है | ब्रह्म सर्वव्यापी है और इसीलिए अपनी आत्मा में डुबकी लगाने और उसे पहचानने से उसकी खोज़ हो सकती है | यह साक्षात्कार इंद्रियों के संपूर्ण संयम के बिना असंभव है | इस प्रकार ब्रह्मचर्य का अर्थ है सब इंद्रियों का हर समय और हर जगह मन, वचन और कर्म से संयम |

जो व्यक्ति – पुरुष या स्त्री – पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह सर्वथा विकार-रहित होता है | इसीलिए ऐसा व्यक्ति ईश्वर के निकट रहता है, ईश्वर जैसा होता है |

मुझे जरा भी शंका नहीं कि इस प्रकार के ब्रह्मचर्य का मन, वचन और कर्म से पूरी तरह पालन करना संभव है |

यंग इंडिया, ५-६-१९२४

जिस मनुष्य का सत्य के साथ अटूट नाता है और जो केवल सत्य की ही पूजा करता है, वह अगर अपनी बुद्धि और किसी काम में लगाता है तो सत्य के प्रति बेवफा साबित होता है | तब फिर वह इंद्रियों का पोषण कैसे कर सकता है ? जिस मनुष्य की प्रवृत्तियाँ पूरी तरह सत्य के साक्षात्कार के लिए ही अर्पित हैं, वह प्रजोत्पत्ति के कार्य में या गृहस्थी चलाने में कैसे पड़ सकता है ? भोग-विलास द्वारा आज तक किसी को सत्य का साक्षात्कार हुआ हो, ऐसा एक भी उदाहरण हमारे पास नहीं है | भोग-विलास और सत्य का साक्षात्कार तो परस्पर-विरोधी वस्तुएं हैं |

अगर हम इसको अहिंसा की दृष्टि से देखें तो हमें पता चलता है कि ब्रह्मचर्य के बिना अहिंसा का पालन असंभव है | अहिंसा का अर्थ है विश्वप्रेम | अगर कोई पुरुष एक स्त्री को या कोई स्त्री एक पुरुष को अपना प्रेम प्रदान कर देती है, तो फिर बाकी सारी दुनिया के लिए रह ही क्या जाता है ? इसका अर्थ तो यह हुआ कि 'हम दोनों पहले और बाकी सब जायें जहन्नुम में |' चूँकि पतिव्रता स्त्री को अपने पति के खातिर और एक वफादार पति को अपनी पत्नी के खातिर सब कुछ कुर्बान करने के लिए तैयार रहना पड़ता है, इसीलिए स्पष्ट है कि ऐसे व्यक्ति न विश्वप्रेम की ऊँचाई तक पहुँच सकते हैं और न तमाम मानव-जाति को अपना परिवार समझ सकते हैं | कारण, वे अपने प्रेम के चारों ओर एक दीवार खड़ी कर देते हैं | उनका परिवार जितना बड़ा होगा उतने ही वे विश्वप्रेम से दूर होंगे | इसीलिए

जो अहिंसा-धर्म का पालन करना चाहते हैं वे विवाह नहीं कर सकते; विवाह-बंधन के बाहर वासना-तृप्ति की तो बात ही क्या ?

तब फिर उन लोगों का क्या हो जो पहले ही विवाह कर चुके हैं ? क्या वे कभी सत्य का साक्षात्कार नहीं कर सकेंगे ? क्या वे मानवता की वेदी पर कभी अपना सर्वस्व बलिदान नहीं कर सकते ? उनके लिए भी एक रास्ता है | वे ऐसा आचरण कर सकते हैं, मानो उनका विवाह ही न हुआ हो | जिन लोगों ने इस सुखद स्थिति का उपभोग किया है, वे मेरी बात का समर्थन कर सकते हैं | जहाँ तक मैं जानता हूँ, कइयों ने इस प्रयोग को सफलतापूर्वक किया है | यदि विवाहित दांपत्य एक-दूसरे को मित्र समझ कर उसके साथ निर्मल संबंध रखे तो वे विश्व की सेवा के लिए स्वतंत्र हो जायें | इस विचार-मात्र से कि संसार की सब स्त्रियाँ हमारी बहनें, माताएँ या पुत्रियाँ हैं, मनुष्य तुरन्त ऊँचा उठ जायेगा और उसके बंधन टूट जायेंगे | यहाँ पति और पत्नी कुछ खो नहीं देते, परन्तु अपने साधनों और अपने परिवार में भी वृद्धि ही करते हैं | उनका प्रेम वासना की मलिनता से मुक्त होकर पहले से प्रबल हो जाता है | इस मलिनता के दूर हो जाने से वे एक-दूसरे की अधिक सेवा कर सकते हैं और झगड़े के अवसर कम हो जाते हैं | जहाँ प्रेम में स्वार्थ और बंधन होता है, वहाँ झगड़े के लिए अवसर अधिक होते हैं |

अगर ये दलीलें मान ली जाती हैं, तो ब्रह्मचर्य के शारीरिक लाभों के विचार का महत्त्व गौण हो जाता है | इन्द्रियों के भोग में जानबूझ कर वीर्यहानि करना कितनी बेवकूफी है ! जो चीज़ हमें अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास करने के लिए दी गई है, उसे शारीरिक सुखभोग के लिए व्यय करना उसका घोर दुरुपयोग है | और यह दुरुपयोग कई रोगों का मूल कारण होता है |

अन्य व्रतों की भांति ब्रह्मचर्य का पालन भी मन, कर्म और वचन से होना चाहिए | गीता में हमें बताया गया है और अनुभव से इसका समर्थन होता है कि जो मूर्ख आदमी अपने शरीर को तो काबू में रखता दिखाई देता है, मगर मन में बुरे विचारों का पोषण करता रहता है, वह मिथ्याचारी है, उसका प्रयत्न व्यर्थ है | अगर शरीर का दमन करते हुए साथ साथ मन को भटकने दिया जायेगा तो उससे हानि ही होगी | जहाँ मन भटकता है वहाँ शरीर भी आगे-पीछे जायेगा ही |

यह एक भेद समझ लेने की ज़रूरत है | मन को अपवित्र विचारों का सेवन करने देना एक बात है; और हमारे प्रयत्नों के होते हुए भी वह उनमें भटकता रहे, यह बिलकुल दूसरी बात है | अगर बुरे विचारों में भटकने में हम अपने मन का साथ न दें तो अन्त में जीत हमारी ही होगी |

हम अपने जीवन के हर क्षण में अनुभव करते हैं कि अकसर हमारा शरीर तो हमारे नियंत्रण में रहता है, परन्तु मन नहीं रहता | इस शारीरिक नियंत्रण को हरगिज ढीला नहीं करना चाहिए और साथ ही मन को काबू में लाने का सतत प्रयत्न करना चाहिए | हम इससे न ज़्यादा कर सकते हैं, न कम | अगर हम मन का नियंत्रण नहीं करेंगे, तो शरीर और मन भिन्न-भिन्न दिशाओं में खींचतान करेंगे और मिथ्याचार

का आरम्भ होगा | जब तक हम प्रत्येक बुरे विचार को पास फटकने से रोकते रहेंगे, तब तक यह कहा जा सकता है कि शरीर और मन साथ-साथ चल रहे हैं |

ब्रह्मचर्य का पालन अति कठिन, लगभग असंभव, माना गया है | जिस मान्यता का कारण ढूँढ़ने पर हम देखते हैं कि ब्रह्मचर्य शब्द का संकीर्ण अर्थ किया गया है | केवल काम-विकार को वश में रखना ही ब्रह्मचर्य-पालन के बराबर मान लिया गया है | मैं महसूस करता हूँ कि यह कल्पना अपूर्ण और ग़लत है | ब्रह्मचर्य का अर्थ है सभी इन्द्रियों को वश में रखना | जो केवल एक इन्द्रिय को ही काबू में रखने की कोशिश करता है और दूसरी सब इन्द्रियों को खुला छोड़ देता है, उसका प्रयत्न निष्फल होगा ही | कानों से उत्तेजक बातें सुनना, आँखों से उत्तेजक दृश्य देखना, जबान से उत्तेजक भोजन चखना, हाथों से उत्तेजक पदार्थ छूना और साथ ही यह आशा रखना कि जो एकमात्र इन्द्रिय बच गई वह वश में रहेगी, ऐसा ही है जैसे आग में हाथ डालकर जलने से बचने की आशा रखना | इसीलिए जिसने एक इन्द्रिय को वश में रखने का निश्चय किया है, उसे शेष इन्द्रियों को काबू में रखने का भी वैसा ही व्रत लेना चाहिए | मेरा हमेशा यह खयाल रहा है कि ब्रह्मचर्य की संकीर्ण व्याख्या से बहुत हानि हुई है | अगर हम सभी दिशाओं में एकसाथ संयम का पालन करें तो वह वैज्ञानिक होगा और संभव है उसमें हमें सफलता भी मिले | ब्रह्मचर्य के पालन की कठिनाई में शायद मुख्य कारण स्वादेन्द्रिय का असंयम है | इसीलिए आश्रम में हमने अपने व्रतों में स्वाद के संयम को अलग स्थान दिया है |

हमें ब्रह्मचर्य का मूल अर्थ याद रखना चाहिए | चर्या का अर्थ है आचरण; ब्रह्मचर्य का अर्थ है ब्रह्म अर्थात् सत्य की खोज़ के अनुकूल आचरण | इस शब्दार्थ से सब इन्द्रियों के नियंत्रण का विशेष अर्थ उत्पन्न होता है | हमें उस अपूर्ण व्याख्या को बिलकुल भूल जाना पड़ेगा, जिसमें ब्रह्मचर्य का अर्थ केवल जननेंद्रिय का संयम किया जाता है |

मंगल-प्रभात, अध्याय ३

३५

ब्रह्मचर्य के उपाय

पहला उपाय उसकी आवश्यकता को अच्छी तरह समझ लेना है |

दूसरा उपाय है धीरे धीरे इन्द्रियों को वश में करना | ब्रह्मचारी को अपनी जीभ ज़रूर काबू में कर लेनी चाहिए | उसे जीने के लिए, न कि भोग के लिए, खाना चाहिए | उसे केवल पवित्र वस्तुएँ ही देखनी चाहिए और हरएक गंदी चीज़ के सामने आँखें बन्द रखनी चाहिए | यह कुलीनता का चिह्न है कि हम अपनी आँखें नीची रखकर चलें और इधर-उधर न देखें | इसी तरह एक ब्रह्मचारी कोई अशल या अपवित्र बात नहीं सुनेगा और न कोई तेज और उत्तेजक पदार्थ सूँघेगा | साफ मिट्टी की सुगन्ध बनावटी इत्र-फुलेल की सुगन्ध से कहीं मीठी होती है | ब्रह्मचर्यार्थी को सारे समय अपने हाथ-पैरों को भी उपयोगी कामों में लगाये रखना चाहिए | वह कभी-कभी उपवास भी करे |

तीसरा उपाय है शुद्ध साथी - शुद्ध मित्र और शुद्ध पुस्तकें रखना |

अन्तिम परन्तु महत्त्व की दृष्टि से अत्यन्त श्रेष्ठ उपाय प्रार्थना है | ब्रह्मचर्यार्थी को नित्य नियम से पूरे दिल के साथ रामनाम लेना चाहिए और ईश्वर की कृपा की याचना करनी चाहिए |

साधारण पुरुष या स्त्री के लिए इनमें से कोई भी बात कठिन नहीं है | वे बिलकुल सीधी-सादी हैं, परन्तु उनकी सादगी ही परेशान करनेवाली है | जहाँ इरादा होता है वहाँ रास्ता बहुत सरल हो जाता है | लोगों में इरादा नहीं होता इसीलिए वे व्यर्थ भटकते हैं | यह हक़ीकत है कि संसार का आधार थोड़े या बहुत ब्रह्मचर्य या संयम के पालन पर है | इसी से जाहिर है कि वह आवश्यक और व्यावहारिक है |

यंग इंडिया, २९-४-१९२६

ब्रह्मचर्य के अनेक साधक इसीलिए असफल होते हैं कि अपनी अन्य इन्द्रियों का उपयोग करते समय वे उन लोगों का-सा आचरण करते रहना चाहते हैं जो ब्रह्मचारी नहीं हैं | इसीलिए उनका प्रयत्न ठीक ऐसा ही है जैसा झुलसानेवाली गर्मी के दिनों में कड़ाके का जाड़ा अनुभव करने का प्रयत्न करना | ब्रह्मचारी और अब्रह्मचारी के जीवन में स्पष्ट भेद होना चाहिए | दोनों के बीच जो सादृश्य है वह केवल ऊपरी है | भेद सूर्यप्रकाश की भांति स्पष्ट होना चाहिए | आँख का उपयोग दोनों करते हैं | पर ब्रह्मचारी देवदर्शन करता है, भोगी खेल-तमाशे में ही लीन रहता है | दोनों अपने कानों का उपयोग करते हैं | परन्तु जहाँ एक केवल ईश्वर के गुणगान सुनता है, वहाँ दूसरा श्रृंगारिक गीतों का अनुरागी होता है | जागरण दोनों करते हैं | परन्तु जहाँ एक अपना समय प्रार्थना में बिताता है, वहाँ दूसरा उसे विनाशकारी

नाच-रंग में बरबाद करता है | भोजन दोनों करते हैं | परन्तु एक देहरूपी देवमंदिर को अच्छी हालत में रखने के लिए खाता है, तो दूसरा ठूँस ठूँसकर खाता है और इस पवित्र मन्दिर को गंदा बनाता है | इस प्रकार दोनों के आचार-विचार में जमीन-आसमान का फ़र्क होता है और यह फ़र्क समय के साथ घटने के बजाय बढ़ता जाता है |

ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और कर्म से सब इन्द्रियों का संयम | मैंने जिस प्रकार के संयम का ऊपर वर्णन किया है उसकी आवश्यकता मैं अधिकाधिक अनुभव कर रहा हूँ | जैसे ब्रह्मचर्य की संभावनाओं की कोई सीमा नहीं है, वैसे ही त्याग की संभावनाओं की भी कोई सीमा नहीं है | अल्प प्रयत्न के द्वारा ऐसा ब्रह्मचर्य सिद्ध करना असंभव है | बहुतों के लिए वह केवल आदर्श ही रहेगा | ब्रह्मचर्य के साधक को सदा अपनी त्रुटियों का भान होता है | वह अपने हृदय के भीतरी कोनों में छिपे हुए विकारों को ढूँढ़ निकालेगा और उनसे मुक्त होने का सतत प्रयत्न करेगा | जब तक विचार पर हमारा इतना काबू नहीं हो जाता कि इच्छा के बिना एक भी विचार मन में न उठे, तब तक ब्रह्मचर्य पूर्ण नहीं होगा | विचारमात्र विकार है | उसका नियंत्रण करना हो तो मन का नियंत्रण करना होगा | और मन का नियंत्रण वायु के नियंत्रण से भी अधिक कठिन है | फिर भी अन्तर्यामी ईश्वर के होने से मन का नियंत्रण भी संभव हो जाता है | कोई यह न सोचे चूँकि कि यह मुश्किल है इसीलिए नामुमकिन है | वह सर्वोच्च लक्ष्य है; और कोई आश्चर्य की बात नहीं, यदि उसकी प्राप्ति के लिए सर्वोच्च प्रयत्न आवश्यक हो |

परन्तु यह बात भारत में आने के बाद ही मेरी समझ में अच्छी तरह आई कि इस प्रकार का ब्रह्मचर्य केवल मानव-प्रयत्न से ही सिद्ध नहीं हो सकता | उस समय तक मुझे यह भ्रम था कि फलाहार से ही सब विकार नष्ट हो जाते हैं और मैं अभिमानपूर्वक यह मान बैठा था कि मुझे इसके लिए और कुछ नहीं करना है |

परन्तु अपने इस संघर्ष का वर्णन मैं यथास्थान आगे करूँगा | इस बीच मैं यह स्पष्ट कर दूं कि जो लोग ईश्वर-साक्षात्कार की दृष्टि से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हैं, उन्हें निराश होने की ज़रूरत नहीं, बशर्ते कि उन्हें ईश्वर पर उतनी ही श्रद्धा हो जितनी अपने प्रयत्न पर:

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन: |

रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ||

(निराहारी मनुष्य के विषय तो शान्त हो जाते हैं, मगर उनका स्वाद बाकी रह जाता है | परमेश्वर का साक्षात्कार हो जाने पर वह स्वाद भी बाकी नहीं रहता |)

इसीलिए मोक्षार्थी के लिए उसका नाम और उसका अनुग्रह ही अंतिम साधन हैं | यह सत्य मेरे भारत लौटने के बाद ही मुझ पर प्रगट हुआ |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० २५८-२६०

मेरे लिए शारीरिक ब्रह्मचर्य का पालन भी कठिनाइयों से भरा रहा है | आज मैं कह सकता हूँ कि मैं अपने को काफी सुरक्षित महसूस करता हूँ | परन्तु मुझे अभी तक अपने विचारों पर पूरा प्रभुत्व प्राप्त करना बाकी है, और वह बहुत ज़रूरी है | यह बात नहीं है कि इसमें इच्छा या कोशिश की कमी है | परन्तु मेरे लिए अभी तक यह एक समस्या ही है कि अवांछनीय विचारों के बुरे हमले हम पर कहाँ से होते हैं | मुझे इसमें शंका नहीं कि अवांछनीय विचारों को दूर रखने की भी कोई कुंजी है | परन्तु वह हरएक को अपने-अपने लिए खुद ही ढूँढ़ लेनी होती है | संत और ऋषि हमारे लिए अपने अनुभव छोड़ गये हैं, मगर उन्होंने हमें कोई अचूक और सार्वत्रिक नुस्ख़ा नहीं दिया है | पूर्णता या दोषमुक्ति भगवान की कृपा से ही आती है | और ईश्वर की खोज़ करनेवाले हमारे लिए रामनाम जैसे मंत्र छोड़ गये हैं, जो उनकी तपस्या से पुनीत और उनकी पवित्रता से परिपूर्ण हैं | संपूर्ण ईश्वरार्पण के बिना विचारों पर पूरा प्रभुत्व होना असंभव है | प्रत्येक महान धर्मग्रंथ की यही शिक्षा है और संपूर्ण ब्रह्मचर्य के अपने प्रयत्न के हर क्षण में मुझे इस सत्य का अनुभव हो रहा है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ३८८

मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि ब्रह्मचर्य के नियम का पालन ईश्वर में सजीव श्रद्धा के बिना असंभव है और ईश्वर सजीव सत्य है | आजकल तो ईश्वर को जीवन में कोई स्थान न देने का और यह आग्रह रखने का कि ईश्वर में सजीव श्रद्धा रखे बिना ही सर्वोच्च प्रकार का जीवन प्राप्त किया जा सकता है, फैशन चल पड़ा है | मुझे स्वीकार करना होगा कि जो लोग अपने से अनन्तगुनी किसी उच्च सत्ता में विश्वास नहीं रखते और उसकी ज़रूरत नहीं समझते, उन्हें मैं यह बात नहीं समझा सकता | मेरा अपना अनुभव तो मुझे इसी ज्ञान पर ले जाता है कि किसी ऐसे सजीव नियम में, जिसके आदेश पर सारा विश्व चलता है, अटल विश्वास हुए बिना संपूर्ण जीवन असंभव है | इस श्रद्धा के बिना मनुष्य ऐसा ही है जैसी कि महासागर से निकालकर बाहर फेंक दी गयी एक बूंद, जो नष्ट होकर ही रहती है | लेकिन महासागर में रहनेवाली प्रत्येक बूंद उसकी महानता की हिस्सेदार होती है और हमें प्राणवायु देने का गौरव प्राप्त करती है |

हरिजन, २५-४-१९३६

३६

विवाह एक धार्मिक संस्कार है

बेशक मनुष्य एक कलाकार और स्रष्टा है | बेशक उसे सौन्दर्य और इसीलिए रंग अवश्य चाहिए | उसकी उत्तम कोटि की कलात्मक और सृजनकारी प्रकृति ने उसे यह विवेक करना और जानना सिखाया कि रंगों का कैसा भी मेल सौन्दर्य का चिह्न नहीं है | और न हर तरह का आनन्द ही अपने-आप में अच्छा है | कला की उसकी दृष्टि ने मनुष्य को उपयोगिता में आनन्द लेना सिखाया | इस प्रकार उसने अपने विकास की प्रारम्भिक स्थिति में यह सीखा कि उसे खाने के लिए ही नहीं खाना है, जैसे हममें से कुछ लोग अब तक करते हैं, परन्तु उसे जी सकने के लिए खाना चाहिए | आगे चलकर उसने यह भी सीखा कि जीने के लिए ही जीने में न सौन्दर्य है और न आनन्द है | परन्तु उसे अपने भाइयों की और उनके द्वारा अपने प्रभु की सेवा के लिए जीना चाहिए | इसी प्रकार जब उसने संभोग की क्रिया से होनेवाले आनन्द पर विचार किया तो उसे मालूम हुआ कि अन्य इन्द्रियों की भांति जननेन्द्रिय का भी उपयोग और दुरुपयोग हो सकता है | और उसने देख लिया कि उसका सच्चा उपयोग उसे प्रजनन तक ही सीमित रखना है | उसने समझ लिया कि उस इन्द्रिय का इसके सिवा और कोई उपयोग असुन्दर है और उसने यह भी समझ लिया कि इसके व्यक्ति और मानव-जाति दोनों के लिए बहुत गंभीर परिणाम हो सकते हैं |

हरिजन, ४-४-१९३६

आध्यात्मिकता के अर्थ में मानव-समाज का सतत विकास होता रहता है | अगर ऐसी बात है तो उसका आधार यह होना चाहिए कि इन्द्रियों की इच्छाओं पर अधिकाधिक संयम रखा जाय | इस दृष्टि से विवाह को एक ऐसा धार्मिक संस्कार समझना चाहिए, जो पति और पत्नी दोनों पर अमुक अनुशासन डालता है; इस अनुशासन के अनुसार वे शारीरिक संभोग अपने ही बीच कर सकते हैं, सो भी केवल सन्तानोत्पादन की गरज से और उसी हालत में जब वे दोनों उस काम के लिए तैयार और इच्छुक हों |

यंग इंडिया, १६-९-१९२६

संतति-निरोध की आवश्यकता के बारे में दो रायें नहीं हो सकतीं | परन्तु उसके लिए प्राचीन काल से ब्रह्मचर्य या संयम ही एकमात्र उपाय चला आया है | यह एक अचूक और श्रेष्ठ उपाय है, जो उस पर अमल करनेवालों को फायदा पहुँचाता है | और अगर डॉक्टर लोग संतति-निरोध के कृत्रिम साधन खोज़ने के बजाय संयम के साधनों का पता लगायेंगे तो मानव-जाति उनकी आभारी होगी |

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

कृत्रिम उपाय बुराई को प्रतिष्ठा प्रदान करने के बराबर हैं | उनसे पुरुष और स्त्री लापरवाह हो जाते हैं | और इन उपायों को जो प्रतिष्ठा प्रदान की जा रही है, उससे वे पाबन्दियाँ जल्दी ही मिट जायेंगी जो लोकमत ने हम पर लगा रखी हैं | कृत्रिम उपायों को अपनाने का नतीजा नपुंसकता और निर्वीर्यता ही होगा | यह इलाज रोग से भी बुरा साबित होगा |

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

अपने कृत्यों के परिणामों से बचने की कोशिश करना ग़लत और अनैतिक है | जो आदमी ज़्यादा खा ले उसके लिए यही अच्छा है कि उसके पेट में दर्द हो और फिर वह उपवास करके उस दर्द से मुक्त हो | वह स्वाद के लोभ में खूब डटकर खाये और फिर पौष्टिक अथवा अन्य औषधियाँ लेकर परिणाम से बच निकले, यह उसके लिए अच्छा नहीं है | यह तो और भी बुरा है कि वह अपने काम-विकारों का पोषण और भोग करे और फिर अपने कृत्यों के फल से बच जाय | प्रकृति क्षमाशील नहीं है | वह अपने नियमों के उल्लंघन का पूरा बदला लेती है | नैतिक परिणाम नैतिक प्रतिबंधों से ही आ सकते हैं | अन्य सब प्रतिबंधों से वह उद्देश्य ही विफल हो जाता है, जिसके लिए वे प्रतिबन्ध लगाये जाते हैं |

यंग इंडिया, १२-३-१९२५

संसार के अस्तित्व का आधार प्रजनन-क्रिया पर है और चूँकि संसार ईश्वर की लीला-भूमि और उसके गौरव का प्रतिबिम्ब है, इसीलिए संसार के व्यवस्थित विकास के लिए प्रजनन-क्रिया पर नियंत्रण होना चाहिए |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० २५१

कामेच्छा एक बढ़िया और उदात्त वस्तु है | इसमें शर्मिन्दा होने की कोई बात नहीं | परन्तु वह सृजन-कार्य के लिए ही बनाई गई है | उसका और कोई उपयोग करना ईश्वर और मानवता के प्रति पाप है |

हरिजन, २८-३-१९४६

अवांछित सन्तान पैदा करना पाप है, परन्तु मेरे खयाल से अपने काम के नतीजे से बचना और भी बड़ा पाप है | वह मानव को अमानव बनाता है |

हरिजन, ७-९-१९३५

मनुष्य को दो में से एक रास्ता चुनना होगा: नीचे का या ऊपर का; परन्तु चूँकि उसमें पशुत्व है वह ऊर्ध्वगति के बजाय अधोगति को अधिक आसानी से पसन्द करेगा, खास तौर पर जब अधोगति का मार्ग उसके सामने किसी सुन्दर वेश में पेश किया जाय | जब पाप मनुष्य के आगे धर्म के रूप में रखा जाता है, तो वह उसके सामने आसानी से घुटने टेक देता है; और मेरी स्टोप्स तथा अन्य लोग यही कर रहे हैं |

हरिजन, ३१-१-१९३५

३७

अपरिग्रह का धर्म

कोई सत्य का साधक, प्रेम-धर्म का उपासक कल के लिए कुछ भी बचाकर नहीं रख सकता | ईश्वर अगले दिन के लिए कभी व्यवस्था नहीं करता | जितनी चीज़ की रोज़ ज़रूरत होती है उससे जरा भी ज़्यादा वह पैदा नहीं करता | इसीलिए यदि हमें उसकी दया में विश्वास है तो हमें भरोसा रखना चाहिए कि वह हमें हमारी रोटी रोज़ देता रहेगा |... रोज़ के लिए जितना चाहिए उतना रोज़ पैदा करने के ईश्वरीय नियम को हम जानते नहीं हैं, या जानते हुए भी पालते नहीं हैं, इसीलिए दुनिया में विषमता और उससे उत्पन्न होनेवाले तमाम दुख हम भोगते हैं | धनवानों के पास जिन चीज़ों की उन्हें ज़रूरत नहीं होती वह बेकार की सामग्री जमा हो जाती हैं, जिनकी उपेक्षा होती है और दुर्व्यय होता है; उधर लाखों लोग इन वस्तुओं के अभाव में भूख और ठंड से मर जाते हैं | अगर प्रत्येक के पास उतना ही हो जितनी उसकी आवश्यकता है, तो किसी को अभाव नहीं रहेगा और सब संतोषपूर्वक रहेंगे | आज जो स्थिति है उसमें जितने असंतुष्ट ग़रीब हैं उतने ही अमीर भी हैं | ग़रीब आदमी लखपति होना चाहता है और लखपति करोड़पति बनना चाहता है | ग़रीबों को जब केवल पेट-भर खाने को मिलता है तो वे अकसर असंतुष्ट रहते हैं, परन्तु इसे पाने का उन्हें स्पष्ट अधिकार है और समाज को यह देखना ही चाहिए कि उन्हें पेट-भर खाना ज़रूर मिल जाय | अमीरों को इस मामले में पहल करनी पड़ेगी, ताकि संतोष की भावना सब जगह फैल जाय | अगर वे अपनी संपत्ति सौम्य मर्यादा में ही रखने लगें तो भी ग़रीबों को आसानी से खाने को मिल जाय और ग़रीब तथा अमीर दोनों संतोष का पाठ सीखें | अपरिग्रह के आदर्श की पूर्ण प्राप्ति के लिए मनुष्य के पास पक्षियों की तरह न कोई मकान होना चाहिए, न कपड़ा और न आगे के लिए खाद्यभंडार | अवश्य ही उसे अपनी रोज़ की रोटी की ज़रूरत होगी, परन्तु उसका बन्दोबस्त करना उसका नहीं, ईश्वर का काम है | परन्तु इस आदर्श को बिरली ही आत्माएँ सिद्ध कर सकती हैं | हम साधारण साधक तो इसे सतत दृष्टि में ही रख सकते हैं और उसके प्रकाश में अपनी संपत्ति की कड़ी जाँच-पड़ताल करके उसे रोज़ घटाने की कोशिश कर सकते हैं | सच्चे अर्थ में सभ्यता ज़रूरतें बढ़ाने में नहीं, उन्हें जानबूझ कर और स्वेच्छापूर्वक घटाने में है | इससे सच्चा सुख और संतोष उत्पन्न होता है और सेवा की शक्ति बढ़ती है | मनुष्य अपनी ज़रूरतें दीर्घ प्रयत्न से कम कर सकता है और ज़रूरतें घटाने से सुख की – स्वस्थ शरीर और शांत मन की प्राप्ति होती है | शुद्ध सत्य की दृष्टि से शरीर भी आत्मा द्वारा अर्जित संपत्ति है | भोग की लालसा से हमने यह शरीररूपी परिग्रह पैदा किया है और उसे कायम रखे हुए हैं | जब वह लालसा नहीं रहेगी, तब इस शरीर की भी आवश्यकता नहीं रहेगी और मनुष्य जन्म-मरण के कुचक्र से छूट जायेगा | आत्मा

सर्वव्यापी है; वह इस शरीररूपी पिंजड़े में बन्द रहना या बुराई करना और इस पिंजड़े के खातिर हत्या तक करना क्यों पसन्द करेगी ? इस प्रकार हम पूर्ण त्याग के आदर्श पर पहुँचकर जब तक शरीर है तब तक शरीर का सेवा के लिए उपयोगकरना सीखते हैं, यहाँ तक कि रोटी के बजाय सेवा ही हमारे जीवन का सहारा बन जाती है | तब हमारा खाना, पीना, सोना जागना – सब सेवा के लिए हो जाता है | इससे हमें वास्तविक सुख और समय पाकर सत्य का दर्शन प्राप्त होता है | हम सबको अपने परिग्रह का इस दृष्टि से विचार कर लेना चाहिए |

हमें याद रखना चाहिए कि अपरिग्रह ऐसा सिद्धान्त है जो वस्तुओं और विचारों, दोनों पर लागू हो सकता है | जो अपने मस्तिष्क को निरर्थक जानकारी से भरता है, वह इस अमूल्य सिद्धान्त का भंग करता है | जो विचार हमें ईश्वर से विमुख करते हैं या उसकी ओर प्रवृत्त नहीं करते, वे ऐसी रुकावटें हैं जिन्हें हमें जल्दी ही दूर कर देना चाहिए | इस सम्बन्ध में हम ज्ञान की उस व्याख्या का विचार कर सकते हैं जो गीता के १३वें अध्याय में दी गई है | वहाँ हमें बताया गया है कि 'अमानित्व' आदि ज्ञान है और बाकी सब कुछ अज्ञान है | यदि यह सत्य है – और इसमें सन्देह नहीं कि सत्य है – तो जिसे हम आज ज्ञान समझ बैठे हैं वह अधिकतर निरा अज्ञान है और इसीलिए कोई लाभ पहुँचाने के बजाय हानि ही करता है | उससे मन इधर-उधर भटकता है और अन्त में खाली तक हो जाता है; असंतोष फैलता है और अनर्थ बढ़ता है | कहने की आवश्यकता नहीं कि यह कोई जड़ता का समर्थन नहीं है | हमारे जीवन का हर क्षण प्रवृत्तिमय होना चाहिए, परन्तु वह प्रवृत्ति सात्विक और सत्योन्मुख हो | जिसने अपना जीवन सेवा के लिए अर्पण कर दिया है, वह क्षण-भर भी निष्क्रिय नहीं रह सकता | परन्तु हमें सत्कर्म और दुष्कर्म में भेद करना सीखना चाहिए | सेवा की एकनिष्ठ भावना के साथ यह विवेक अपने-आप आ जाता है |

मंगल-प्रभात, अध्याय ६

इसीलिए सब कुछ छोड़कर उसे ईश्वरार्पण कर दो और फिर जीवन जिओ | इस प्रकार जीने का अधिकार त्याग से आता है | वह यह नहीं कहता: 'जब सब अपने-अपने हिस्से का काम करेंगे तब मैं भी करूँगा |' वह कहता है, 'दूसरों की चिन्ता न करो, अपना काम पहले करो और बाकी ईश्वर पर छोड़ दो |'

हरिजन, ६-३-१९३७

ईसा, मुहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चैतन्य, शंकर, दयानंद, राम-कृष्ण सब ऐसे पुरुष थे, जिनका हजारों आदमियों पर जबरदस्त प्रभाव था; उन्होंने उनके चरित्र का निर्माण किया | उनके होने से संसार समृद्ध हुआ है | और वे सब ऐसे पुरुष थे जिन्होंने ग़रीबी को जानबूझ कर अपनाया था |

'स्पीचेज़ एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी' (१९३३); पृ० ३५३

सुवर्ण नियम... यह है कि जो चीज़ लाखों को नहीं मिल सकती उसे लेने से हम दृढ़तापूर्वक इनकार कर दें | यह इनकार करने की शक्ति हम पर अचानक आकाश से नहीं उतर आयेगी | पहली बात यह है कि ऐसी मनोवृत्ति पैदा की जाय जो उन वस्तुओं अथवा सुविधाओं को स्वीकार न करे जिनसे लाखों लोग वंचित हैं; और दूसरी तात्कालिक बात यह है कि हम अपने जीवन को जल्दी से जल्दी उस मनोवृत्ति के सांचे में ढालें |

यंग इंडिया, २४-६-१९२६

अगर हम आज की चिन्ता कर लेंगे तो कल की चिन्ता भगवान कर लेगा |

यंग इंडिया, १३-१०-१९२१

३८

काम ही पूजा है

"ब्रह्मा ने अपनी प्रजा को यज्ञ के साथ – उन पर यज्ञ का धर्म लागू करके – पैदा किया और कहा: इससे तुम सुरखी और समृद्ध बनो | इससे तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हों |'' "जो यज्ञ किये बिना खाता है वह चोरी की रोटी खाता है |" यह गीता का वचन है | बाइबल कहती है: "अपने पसीने की कमाई खाओ |" यज्ञ कई प्रकार के हो सकते हैं | उनमें से एक रोटी के लिए परिश्रम भी है | अगर सब लोग केवल अपनी रोटी के लिए मेहनत करने लगें, तो सबके लिए काफी अन्न और काफी अवकाश होगा | तब यह पुकार नहीं होगी कि आबादी उचित से अधिक बढ़ रही है, न रोग होंगे और न आज की भांति दुख होगा | इस प्रकार का श्रम ऊँचे से ऊँचे दर्जे का यज्ञ होगा | अवश्य ही मनुष्य अपने शरीर द्वारा अथवा अपने मस्तिष्क द्वारा और बहुत सी बातें करेंगे, परन्तु वह सब प्रेमपूर्ण, सबकी भलाई के लिए किया गया श्रम होगा | फिर कोई ग़रीब, कोई अमीर, कोई नीचा, कोई ऊँचा, कोई छूत और कोई अछूत न होगा।

हरिजन, २९-६-१९३५

यह अप्राप्य आदर्श हो सकता है | परन्तु इसका यह मतलब न होना चाहिए कि हम उसके लिए कोशिश करना बन्द कर दें | अगर हम यज्ञ का संपूर्ण धर्म, जो हमारा जीवनधर्म है, पालन किये बिना अपनी रोटी के लिए भी काफी शरीर-श्रम कर लें तो हम लक्ष्य की ओर काफी आगे बढ़ेंगे |

हरिजन, २९-६-१९३५

अगर हमने ऐसा किया तो हमारी आवश्यकताएँ कम से कम हो जायेंगी, हमारा भोजन सादा हो जायेगा | तब हम खाने के लिए न जीकर जीने के लिए खायेंगे | जिसे इस वचन के ठीक होने में शंका हो वह अपनी रोटी के लिए पसीना बहाकर देख ले | उसे अपनी मेहनत के फल में अत्यंत स्वाद आयेगा, उसकी तन्दुरुस्ती सुधर जायेगी और उसे पता चलेगा कि बहुत सी चीज़ें जो वह लेता है फालतू हैं |

हरिजन, २९-६-१९३५

क्या लोग बौद्धिक श्रम से अपनी रोजी न कमायें ? नहीं, शरीर की ज़रूरतें शरीर से ही पूरी होनी चाहिए | 'राजा का हक़ राजा को ही मिलना चाहिए' यह कहावत यहाँ भी लागू होती है | केवल मानसिक अर्थात् बौद्धिक श्रम आत्मा के लिए है और वह खुद ही अपना पुरस्कार है | उसका मुआवजा कभी

नहीं मांगना चाहिए | आदर्श राज्य में डॉक्टर, वकील आदि अपने लिए काम न करके केवल समाज के लिए करेंगे |

रोटी के लिए श्रम के नियम का पालन समाज की रचना में शांत क्रान्ति कर देगा | मनुष्य की विजय तब हुई मानी जायेगी जब हमारे जीवन का नियामक उसूल जीवन-संग्राम के बजाय पारस्परिक सेवा की प्रतियोगिता हो जाए | तब पशु-धर्म का स्थान मानव-धर्म ले लेगा |

हरिजन, २९-६-१९३५

देहात में लौट चलने का अर्थ है रोटी के लिए श्रम के धर्म और उसके सारे फलितार्थों को साफ तौर पर और स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करना |

हरिजन, २९-६-१९३५

जो मनुष्य अपने मानव-बन्धुओं की सेवा करता है, उसके हृदय में ईश्वर स्वयं अपना निवास-स्थान बनाना चाहता है | अबू-बेन-आदम ऐसा ही आदमी था | उसने अपने मानव-बन्धुओं की सेवा की और इसीलिए उसका नाम खुदा की बन्दगी करनेवालों की सूची में सबसे ऊपर था |

यंग इंडिया, २४-९-१९२५

परन्तु दुखी और पीड़ित कौन हैं ? दलित और ग़रीबी के मारे लोग | इसीलिए जो भक्त बनना चाहता है, उसे इन लोगों की तन-मन और आत्मा से सेवा करनी पड़ेगी | जो ग़रीबों के खातिर कातने तक का श्रम करने को तैयार नहीं है और झूठे बहाने बनाता है, वह सेवा का अर्थ नहीं जानता | जो ग़रीबों के आगे कातता है और उन्हें भी कातने को कहता है वह ईश्वर की जो सेवा करता है वैसी और कोई नहीं करता | भगवद्गीता में भगवान कहते हैं, "जो मुझे फल-फूल या पत्ती की तुच्छ भेंट भी भक्तिभाव से देता है वह मेरा भक्त है |" और ईश्वर के चरण वहाँ हैं जहाँ 'ग़रीब, नीचे से नीचे और निराश्रित लोग' रहते हैं | इसीलिए ऐसे लोगों के लिए कताई करना सबसे बड़ी प्रार्थना, सबसे बड़ी पूजा, सबसे बड़ा यज्ञ हैं |

यंग इंडिया, २४-९-१९२५

प्रश्न: क्या मनुष्य के लिए यह बेहतर नहीं होगा कि जो समय वह ईश्वर की पूजा में खर्च करता है उसे ग़रीबों की सेवा में लगाये ? और क्या ऐसे आदमी के लिए सच्ची सेवा के कारण पूजा-पाठ अनावश्यक नहीं हो जाता ?

उत्तर: मुझे इस प्रश्न में मानसिक आलस्य और नास्तिकता दोनों की गंध आती है | बड़े से बड़े कर्मयोगी भी भजन-कीर्तन या पूजा नहीं छोड़ते | आदर्श की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि दूसरों

की सच्ची सेवा स्वयं पूजा है और ऐसे भक्तों को भजन आदि में समय खर्च करने की ज़रूरत नहीं | लेकिन असल बात यह है कि भजन आदि सच्ची सेवा में सहायक होते हैं और भक्त के हृदय में ईश्वर की याद ताजा बनाये रखती है |

हरिजन, १३-१०-१९४६

कोई भी काम, जो ईश्वर के नाम पर और उसे समर्पित करके किया जाता है, छोटा नहीं होता | इस प्रकार किये हुए सभी कार्यों का पुण्य समान होता है | एक भंगी, जो ईश्वर की सेवा के लिए काम करता है, और एक राजा, जो उसकी दी हुई वस्तुओं को उसके नाम पर और केवल संरक्षक बनकर काम में लेता है, दोनों का दर्जा बराबर है |

यंग इंडिया, २५-११-१९२६

इससे अधिक उदात्त या अधिक राष्ट्रीय किसी वस्तु की मैं कल्पना नहीं कर सकता कि हम सब रोज़ घंटे भर वही परिश्रम करें जो ग़रीबों को करना होता है और इस प्रकार उनके साथ और उनके द्वारा सारी मानव-जाति के साथ तादात्म्य स्थापित करें | मैं इससे अच्छी ईश्वर-पूजा के बारे में सोच नहीं सकता कि जैसे ग़रीब मेहनत करते हैं वैसे ही मैं भी ईश्वर के नाम पर ग़रीबों के लिए मेहनत करूं |

यंग इंडिया, २०-१०-१९२१

काम पर जितना जोर दिया जाय उतना हमेशा अच्छा है | मैं केवल गीता का सिखाया हुआ धर्म ही दोहरा रहा हूँ | भगवान कहते हैं, 'अगर मैं सतत जागरूक रहकर सदा काम न करता रहूँ, तो मैं मानव-जाति के लिए ग़लत उदाहरण स्थापित करूँगा |'

हरिजन, २-११-१९३५

जब तक एक भी सशक्त स्त्री या पुरुष बेकार या भूखा रहे, तब तक हमें आराम लेने या भरपेट भोजन करने में शर्म आनी चाहिए |

यंग इंडिया, ६-१०-१९२१

सेवा तब तक संभव नहीं, जब तक उसका मूल प्रेम या अहिंसा न हो | सच्चा प्रेम महासागर की तरह असीम होता है और अपने भीतर उठता और बढ़ता हुआ बाहर फैल जाता है तथा सब सीमाओं और सरहदों को पार करके सारे जगत पर छा जाता है | साथ ही यह सेवा रोटी के लिए श्रम के बिना भी संभव नहीं | गीता में इसी को यज्ञ का नाम दिया गया है | जब कोई पुरुष या स्त्री सेवा के खातिर शरीर-श्रम करे तभी उसे जीने का हक़ हासिल होता है |

यंग इंडिया, २०-९-१९२८

३९

सर्वोदय

यह शरीर... हमें इसीलिए दिया गया है कि उससे हम सारी सृष्टि की सेवा कर सकें | और इसीलिए गीता कहती है कि जो यज्ञ किये बिना खाता है वह चोरी करता है | जो शुद्धता का जीवन बिताना चाहता है, उसका हरएक काम यज्ञरूप[१] होना चाहिए | यज्ञ हमें जन्म से ही प्राप्त होता है, इसीलिए हम जीवनभर ऋणी रहते हैं और इस प्रकार विश्व की सेवा करना सदा ही हमारा कर्तव्य है | जिस प्रकार दास को अपने स्वामी से, जिसकी वह सेवा करता है, अन्न-वस्त्रादि प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार हमें भी जगन्नियंता से जो भी दान मिल जाय उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए | जो कुछ हमें मिले उसे भगवान का दान मानकर ही हमें लेना चाहिए, क्योंकि कर्जदार होने के कारण हमें अपने कर्तव्य-पालन का कोई मुआवजा पाने का हक नहीं है | इसीलिए अगर हमें वह न मिले तो हम मालिक को दोष न दें | हमारा शरीर उसका है, वह चाहे तो इसे रखे और न चाहे तो फेंक दे | यह कोई शिकायत या दया की भी बात नहीं; बल्कि अगर हम ईश्वर की योजना में हमारा उचित स्थान क्या है, इस बात को ठीक से समझ लें तो यह एक स्वाभाविक और सुखद एवं वांछनीय स्थिति है | यदि हम इस परम आनन्द का अनुभव करना चाहते हैं, तो हमें वास्तव में प्रबल श्रद्धा की ज़रूरत होगी | "अपने बारे में जरा भी चिन्ता न करो, सब चिन्ता ईश्वर पर छोड़ दो |" ... सब धर्मों का यही आदेश मालूम होता है |

इससे किसी को डर जाने की ज़रूरत नहीं | जो शुद्ध अन्त:करण से सेवा में लगता है, वह दिन-ब-दिन इसकी अधिकाधिक ज़रूरत समझेगा और उसकी श्रद्धा में सतत वृद्धि होती रहेगी | जो स्वार्थ को छोड़ने और मनुष्य-जन्म की शर्त – यज्ञ की आवश्यकता को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है, उसके लिए सेवा का मार्ग दुर्गम है | जाने-अनजाने हम सब कोई न कोई सेवा अवश्य करते हैं | अगर हम जानबूझ कर सेवा करने की आदत डालें, तो सेवा की हमारी इच्छा बराबर प्रबल होती जायेगी और उससे हमारा अपना ही नहीं, सारे संसार का सुख भी बढ़ेगा |

मंगल-प्रभात, अध्याय १४

अहिंसा का पुजारी अधिक से अधिक लोगों की अधिक से अधिक भलाई के उपयोगितावादी सूत्र को स्वीकार नहीं कर सकता | वह सबकी अधिक से अधिक भलाई का प्रयत्न करेगा और इस आदर्श की सिद्धि के प्रयत्न में प्राण भी दे देगा | इसीलिए वह दूसरों को जिन्दा रखने के लिए खुद मरने को तैयार रहेगा | वह खुद मरकर दूसरों के साथ साथ अपनी भी सेवा करेगा | अन्त में तो सबकी अधिक से अधिक भलाई में अधिक से अधिक लोगों की भलाई शामिल ही है और इसीलिए बहुत सी बातों में उसका और उपयोगितावादी का मेल ही रहेगा | परन्तु ऐसा समय आ जाता है जब दोनों को जुदा होना

पड़ता है; और विरोधी दिशाओं में भी काम करना पड़ता है | उपयोगितावादी अगर अपने तर्क का अनुगमन करेगा तो कभी अपने को कुर्बान नहीं करेगा |

यंग इंडिया, ९-१२-१९२६

मैं नहीं मानता... कि कोई व्यक्ति तो आध्यात्मिक प्रगति करता रहेगा और उसके पड़ोसी कष्ट भोगते रहेंगे | मेरा अद्वैत में विश्वास है | मैं मनुष्य-जाति की ही नहीं प्राणीमात्र की एकता को मानता हूँ | इसीलिए यदि एक आदमी को आध्यात्मिक लाभ होता है तो उसके साथ-साथ सारी दुनिया को भी होता है; और अगर एक मनुष्य गिरता है तो उस हद तक समस्त जगत का भी पतन होता है |

यंग इंडिया, ४-१२-१९२४

कोई भी गुण ऐसा नहीं है, जिसका लक्ष्य एक ही व्यक्ति की भलाई हो या जिसे एक ही व्यक्ति की भलाई से संतोष हो जाय | इसी प्रकार एक भी अपराध ऐसा नहीं है, जिसका वास्तविक अपराधी के अलावा दूसरे अनेक लोगों पर असर न पड़ता हो | इसीलिए कोई व्यक्ति अच्छा है या बुरा, यह सिर्फ उसके विचार का ही विषय नहीं है, बल्कि सारे समाज की – नहीं, सारी दुनिया की चिन्ता का विषय है|

'एथिकल रिलीजन' (१९२७); पृ० ५५

सेवामय जीवन में नम्रता होनी ही चाहिए | जो दूसरों के लिए अपना जीवन कुर्बान कर देना चाहता है, उसके पास यह सोचने का समय ही नहीं होगा कि उसके लिए कोई उच्च स्थान सुरक्षित रहे | लेकिन जैसा कि हिन्दू धर्म में भूल से मान लिया गया है, जड़ता को नम्रता नहीं समझ बैठना चाहिए | सच्ची नम्रता का अर्थ यह है कि एकमात्र मानव-सेवा के उद्देश्य से सतत और अत्यंत परिश्रमपूर्ण प्रयत्न जारी रहे | ईश्वर क्षणभर भी आराम लिये बिना कर्म करता रहता है | अगर हम उसकी सेवा करना चाहते हैं या उसके साथ एकरूप होना चाहते हैं तो हमारा कर्म उसी की तरह अविश्रान्त होना चाहिए |

मंगल-प्रभात, अध्याय १२

समुद्र से अलग हुई बूंद के लिए क्षणभर का आराम हो सकता है, परन्तु जो बूंद समुद्र में है उसके लिए कोई विश्राम नहीं होता | हमारी अपनी भी यही बात है | ज्यों ही हम ईश्वररूपी समुद्र के साथ एक हो जाते हैं, त्यों ही हमारे लिए कोई आराम नहीं रह जाता | असल में फिर हमें आराम की ज़रूरत ही नहीं रहती | हमारी निद्रा भी कर्म है, क्योंकि हम हृदय में ईश्वर का ध्यान करते हुए सोते हैं | यह अविश्राम ही सच्चा विश्राम है | इस अविश्रान्त बेचैनी में ही अमिट शांति की कुंजी है | संपूर्ण समर्पण की इस परम अवस्था का वर्णन करना कठिन है, परन्तु वह मानव-अनुभव की परिधि के बाहर नहीं है | अनेक समर्पित आत्माओं ने इससे प्राप्त किया है और हम भी प्राप्त कर सकते हैं |

मंगल-प्रभात, अध्याय १२

१. ‘यज्ञ का क्या अर्थ है’, यह गांधीजी पिछले एक अध्याय में समझा चुके हैं | वे कहते हैं: “यज्ञ वह कर्म है जो दूसरों की भलाई के लिए किया जाय और जिसमें सांसारिक या आध्यात्मिक किसी भी प्रकार के बदले की इच्छा न हो | ‘कर्म’ का यहाँ अत्यंत व्यापक अर्थ करना चाहिए और उसमें शारीरिक कर्म की तरह ही मानसिक और वाचिक को भी सम्मिलित मानना चाहिए | ‘दूसरों’ में न सिर्फ मानव-जाति को, बल्कि प्राणीमात्र को समझना चाहिए | इसीलिए और अहिंसा की दृष्टि से मानव-जाति की सेवा के खयाल से भी नीची श्रेणी के प्राणियों का बलिदान करना यज्ञ नहीं है |”

४०

अणु-बम और अहिंसा

अमरीकी मित्रों का कहना है कि अणु-बम से अहिंसा जितनी जल्दी आयेगी उतनी और किसी तरह नहीं आ सकती | यह बात सही मानी जा सकती है, अगर इसका मतलब यह हो कि अणु-बम की विनाशक शक्ति से संसार को इतनी घृणा हो जायेगी कि वह फिलहाल हिंसा से मुँह मोड़ लेगा | लेकिन यह तो वैसा ही है जैसे कोई आदमी पहले तो अपना पेट मिठाइयों से इतना ठूँस-ठूँस कर भर ले कि उसे मतली होने लगे और उनसे विमुख हो जाय, मगर ज्यों ही मतली का असर मिट जाय त्यों ही फिर दुगुने जोश के साथ मिठाइयाँ खाने बैठ जाय | ठीक इसी प्रकार जब घृणा का असर मिट जायेगा, तब संसार फिर नये उत्साह से हिंसा की तरफ दौड़ेगा |

कई बार बुराई से भलाई निकल आती है | परन्तु यह ईश्वर की योजना है, मनुष्य की नहीं | मनुष्य तो यही जानता है कि जैसे भलाई से भलाई पैदा होती है, वैसे बुराई से बुराई ही उत्पन्न हो सकती है |

बेशक यह संभव है कि यद्यपि अमरीकी वैज्ञानिकों और सेना के लोगों ने अणु-शक्ति का उपयोग विनाश के लिए किया है, तो भी दूसरे वैज्ञानिक उसका उपयोग मानव-सेवा के कामों में कर लें | परन्तु अमरीकी भाइयों के ऊपरोक्त कथन का यह मतलब नहीं था | वे इतने भोले नहीं थे कि कोई ऐसा सवाल पूछते जिसका उत्तर स्पष्ट हो | आग लगानेवाला आग का उपयोग विनाशक और घृणित हेतु से करता है, जबकि गृहस्वामिनी उसका उपयोग रोज़ मानव-जाति के लिए पौष्टिक भोजन तैयार करने में करती है |

जहाँ तक मुझे दिखाई देता है, अणु-बम ने उस श्रेष्ठ भावना की हत्या कर दी है जो युगों से मानव-जाति का आधार रही है | लड़ाई के कुछ नियम हुआ करते थे, जिनसे वह सह्य बनी हुई थी | अब हम नग्न सत्य जान गये हैं | अब ताकत के सिवा युद्ध का कोई कानून नहीं रहा | अणु-बम से मित्रराष्ट्रों की थोथी जीत तो हो गई, पर साथ ही उसने थोड़े वक्त के लिए तो जापान की आत्मा का खून कर दिया है | विनाशक राष्ट्र की आत्मा का क्या हुआ, यह अभी नहीं देखा जा सकता | प्रकृति की शक्तियाँ रहस्यमय ढंग से काम करती हैं | हम तो इस रहस्य को इसी प्रकार की घटनाओं के ज्ञात परिणामों के सहारे ही समझ सकते हैं | अपने को या अपने प्रतिनिधि को गुलामी के पिंजड़े में रखे बिना कोई आदमी किसी को गुलाम नहीं रख सकता | कोई यह कल्पना न कर ले कि जापान ने अपनी अशोभनीय महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए जो कुकृत्य किये, उनकी मैं कोई सफाई देना चाहता हूँ | फर्क केवल मात्रा का था | मैं मान लेता हूँ कि जापान का लोभ अधिक अनुचित था | परन्तु इस

अधिक अनौचित्य के कारण कम अनौचित्य वाले पक्ष को यह हक हासिल नहीं हो जाता कि किसी विशेष इलाके में वह जापान के मर्दों, औरतों और बच्चों का नाश कर डाले |

बम की इस अत्यन्त करुण दुर्घटना से हमें सबक तो यह सीखना है कि जैसे प्रतिहिंसा से हिंसा नष्ट नहीं होती वैसे ही जवाबी बमों से अणु-बम नष्ट नहीं होगा | मानव-जाति को अहिंसा के द्वारा ही हिंसा से छुटकारा पाना होगा | घृणा को प्रेम से ही जीता जा सकता है | बदले में घृणा करने से घृणा का विस्तार और गहराई दोनों बढ़ते ही हैं | मुझे मालूम है कि मैंने पहले कई बार जो कहा है और जिसका अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार अमल किया है, उसी को मैं दोहरा रहा हूँ| मैंने जो कुछ पहले कहा था वह भी कोई नई बात नहीं थी | वह उतनी ही पुरानी थी जितनी यह सृष्टि पुरानी है | हाँ, मैंने किसी पुस्तकीय उपदेश को नहीं दोहराया था, परन्तु निश्चित रूप में उसी चीज़ की घोषणा की थी जो मैं मानता था कि मेरी रग-रग में समाई हुई है| जीवन के विविध क्षेत्रों में किये गये साठ साल के आचरण ने मेरा वह विश्वास दृढ़ ही किया है और मित्रों के अनुभव ने भी उसे बल पहुँचाया है | परन्तु यह एक ऐसा केन्द्रीय सत्य है, जिस पर आदमी अकेला भी अटल रह सकता है | मैक्समूलर ने वर्षों पहले कहा था: 'जब तक सत्य को न माननेवाले लोग मौजूद हैं, तब तक उसे बार-बार कहते रहने की ज़रूरत है |' मैं इस बात को मानता हूँ|

हरिजन, ७-७-१९४६

४१

संसार में शांति

यह मेरी पक्की राय है कि आज का यूरोप न तो ईश्वर की भावना का प्रतिनिधि है, न ईसाई धर्म की भावना का, बल्कि शैतान की भावना का प्रतीक है | और शैतान की सफलता तब सबसे अधिक होती है, जब वह अपनी जबान पर खुदा का नाम लेकर सामने आता है | यूरोप आज नाममात्र को ही ईसाई है | वह सचमुच धन की पूजा कर रहा है | 'ऊँट के लिए सुई की नोक में होकर निकलना आसान है, मगर किसी धनवान का स्वर्ग में जाना मुश्किल है |' ईसा मसीह ने यह बात ठीक ही कही थी | उनके कथित अनुयायी अपनी नैतिक प्रगति को अपनी धन-दौलत से ही नापते हैं |

यंग इंडिया, ८-९-१९२०

ईसा के पर्वतीय उपदेश में आपको जो अमृत दिया गया है उसे आप शौक से खूब पीजिये | परन्तु फिर तो आपको तपस्वी का जीवन अपनाना होगा | वह उपदेश हम सबके लिए था | आप ईश्वर और धन-दौलत दोनों की सेवा नहीं कर सकते | करुणासागर और दयालु ईश्वर सहिष्णुता की मूर्ति है | वह धन-दौलत को चार दिन की चाँदनी मनाने देता है | परन्तु मैं आपसे कहता हूँ ... कि शैतान की इस अपने-आप नष्ट होनेवाली, किन्तु विनाशक तड़क-भड़क से आप दूर भागिये |

यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

समय आ रहा है जब वे लोग, जो आज भ्रमवश यह समझ कर कि वे संसार के वास्तविक ज्ञान में वृद्धि कर रहे हैं, अपनी ज़रूरतें दुगुनी-चौगुनी बढ़ाने की दौड़ में पागल होकर लगे हुए हैं, वापिस लौटेंगे और कहेंगे: 'हा ! हमने यह क्या किया ?' सभ्यताएँ आईं और चली गईं | और हम अपनी प्रगति का कितना भी घमण्ड क्यों न करें, मुझे बार-बार यह पूछने का लोभ होता है: 'इससे लाभ क्या हुआ ?' डार्विन के एक समकालीन वालेस ने भी यही बात कही है | उसने कहा है कि पचास बरस के चमत्कारी आविष्कारों और अनुसंधानों ने मानव-जाति की नैतिक ऊंचाई में तिलभर भी वृद्धि नहीं की है | यही बात टोल्स्टोय ने कही, भले ही आप उसे स्वप्नदृष्टा और कल्पना के घोड़े दौड़ानेवाला समझ लीजिए | यही बात ईसा, बुद्ध और मुहम्मद ने कही है, जिनके धर्म पर आज मेरे अपने ही देश में कलंक लगाया जा रहा है |

यंग इंडिया, ८-१२-१९२७

स्थायी शांति की संभावना में विश्वास न रखना मानव-स्वभाव की ईश्वरोन्मुखता पर अविश्वास करना है | आज तक के उपाय इसीलिए बेकार साबित हुए हैं कि जिन लोगों ने कोशिश की है उनमें बुनियादी सच्चाई की कमी रही है | उन्होंने इस कमी को अनुभव कर लिया हो सो बात भी नहीं | जैसे किसी रासायनिक मेल का होना उसकी ज़रूरी शर्तों के संपूर्ण पालन के बिना असंभव है, उसी तरह शांति की शर्तों के अधूरे पालन से शांति नहीं हो सकती | मानव-जाति के जिन माने हुए नेताओं का विनाश के साधनों पर नियंत्रण है, वे उनका उपयोग करना पूरी तरह छोड़ दें और छोड़ने के गूढ़ार्थों को पूरी तरह जानकर छोड़ें, तो ही शांति स्थापित हो सकती है | यह साफ तौर पर तब तक नामुमकिन है जब तक कि संसार की महान सत्ताएँ अपने साम्राज्यवादी इरादों को तिलांजलि न दे दें | यह भी तब तक संभव नहीं होगा, जब तक बड़े-बड़े राष्ट्र आत्मनाशक स्पर्धा में विश्वास करना और ज़रूरतें बढ़ाकर अपनी भौतिक संपत्ति बढ़ाने की इच्छा रखना नहीं छोड़ देंगे | मेरा दृढ़ विश्वास है कि बुराई की जड़ चेतन ईश्वर में सजीव श्रद्धा का अभाव है | यह एक प्रथम श्रेणी की करुण घटना है कि संसार की वे जातियाँ, जो ईसा को शांति का राजा कहकर उनके संदेश में विश्वास रखने का दावा करती हैं, वास्तविक व्यवहार में उस विश्वास का परिचय नहीं देतीं | यह देखकर दुख होता है कि सच्चे ईसाई पादरी भी ईसा के सन्देश का क्षेत्र चुने हुए व्यक्तियों तक ही सीमित रखते हैं | मुझे बचपन से सिखाया गया है और इस सत्य की अनुभव से परीक्षा हो चुकी है कि छोटे से छोटे मानव-प्राणी भी मानव-जाति के प्राथमिक गुणों को अपने में पैदा कर सकते हैं | मनुष्यमात्र में निहित यह अचूक शक्ति ही मनुष्य को ईश्वर की शेष सृष्टि से अलग करती है | अगर कोई एक राष्ट्र भी बिलाशर्त यह परम त्याग का काम कर डाले, तो हममें से बहुतों को अपने जीवनकाल में इस पृथ्वी पर शांति स्थापित हुई देखने का सौभाग्य प्राप्त हो जायेगा |

हरिजन, १८-६-१९३८

अगर संसार के उत्तम व्यक्तियों ने अहिंसा की वृत्ति को ग्रहण नहीं किया, तो उन्हें गुंडागिरी का सामना पुरानी रीति से ही करना पड़ेगा | परन्तु इससे यही साबित होगा कि अभी तक हम जंगल के कानून से आगे नहीं बढ़े हैं, ईश्वर ने हमें जो देन दी है, उसकी कदर करना अभी तक हमने नहीं सीखा है और उन्नीस सौ वर्ष पुरानी ईसाई धर्म की और उससे भी पुरानी हिन्दू, बौद्ध धर्म और इस्लाम की भी शिक्षा के बावजूद मानव-प्राणियों की हैसियत से हमने बहुत प्रगति नहीं की है | परन्तु जहाँ मैं यह समझ सकता हूँ कि जिन लोगों में अहिंसा की वृत्ति नहीं है, वे बल का प्रयोग करें, वहाँ मैं चाहूँगा कि जो अहिंसा को जानते हैं वे अपना सारा जोर यह साबित करने में लगायें कि गुंडागिरी का मुकाबला भी अहिंसा से ही करना होगा |

हरिजन, १०-१२-१९३८

पशुबल का बोलबाला संसार में हजारों वर्ष से रहा है और इसका कड़वा फल मानव-जाति बराबर भुगत रही है | यह बात अंधे को भी दिखाई दे सकती है | इससे भविष्य में कुछ भी लाभ होने की आशा नहीं है | अगर अंधकार से प्रकाश पैदा हो सकता हो तो ही घृणा से प्रेम उत्पन्न हो सकता है |

दक्षिण अफ्रीका का सत्याग्रह (अंग्रेजी); पृ० २८९

४२

स्फुट विचार

मृत्यु

जब बच्चे, नौजवान या बूढ़े मरें तब हमें अशांत क्यों हो जाना चाहिए ? इस संसार में एक भी क्षण ऐसा नहीं गुजरता जब कोई न कोई जन्मता या मरता न हो | हमें समझ लेना चाहिए कि जन्म की खुशी मनाना और मौत का मातम करना बड़ी बेवकूफी है | जो आत्मा को मानते हैं – और कौन हिन्दू, मुसलमान या पारसी ऐसा होगा जो आत्मा को नहीं मानता – वे जानते हैं कि आत्मा कभी मरती नहीं है | जीवितों और मृतों दोनों की आत्माएँ एक ही हैं | उत्पत्ति और लय की शाश्वत क्रियाएँ बराबर जारी रहती हैं | इसमें ऐसी कोई बात नहीं जिसके लिए हम सुख या दुख के मारे बावले हो जाएँ | अगर हम अपनी कौटुम्बिकता का खयाल अपने देशवासियों तक भी बढ़ा लें और समझ लें कि देश में होनेवाले सारे जन्म हमारे परिवार में ही हो रहे हैं तो हम कितने जन्मोत्सव मनायेंगे ? अगर हम देश की सारी मृत्युओं पर रोयें तो हमारी आँखों के आँसू कभी नहीं सूखेंगे | इस विचारधारा से हमें मौत के सारे डर से छुटकारा पाने में मदद मिलनी चाहिए |

यंग इंडिया, १३-१०-१९२१

जन्म और मृत्यु दो भिन्न स्थितियाँ नहीं हैं, परन्तु एक ही स्थिति के दो अलग अलग पहलू हैं | एक पर दुखी होने और दूसरे पर खुशी मनाने का कोई कारण नहीं है |

यंग इंडिया, २०-११-१९२४

अमरता

मेरा आत्मा की अमरता में विश्वास है | मैं आपको महासागर की उपमा समझाऊँगा | महासागर पानी की बूंदों से बना है | प्रत्येक बूंद एक स्वतंत्र इकाई है और साथ ही सारे समुद्र का एक अंश भी है | इसी प्रकार जीवन के महासागर में हम सब छोटी-छोटी बूंदें हैं | मेरे सिद्धान्त का यह अर्थ है कि मुझे प्राणीमात्र के साथ एकता स्थापित करना चाहिए, मुझे ईश्वर की उपस्थिति में अखिल जीवन के गौरव का भागीदार बनना चाहिए | इन सब प्राणियों का समूचा योग ही तो ईश्वर है |

'इंडियाज़ केस फॉर स्वराज' (१९३२); पृ० २४५

बीमा

मेरा खयाल था कि जीवन का बीमा कराने में भय और श्रद्धा का अभाव प्रकट होता है | अपने जीवन का बीमा कराकर मैंने अपने स्त्री-बच्चों का स्वावलम्बन छीन लिया था | उनसे यह आशा क्यों न रखी जाय कि वे अपनी फिकर आप कर लेंगे ? संसार के असंख्य ग़रीबों के परिवारों का क्या हाल होता है ? मैं अपने आपको उन्हीं में से एक क्यों न समझूं ? मेरे पास यह मान लेने का क्या कारण था कि मौत मुझे औरों से पहले बुला लेगी ? आखिर तो सच्चा रक्षक न मैं हूँ, न मेरे भाई, परन्तु सर्वशक्तिमान ईश्वर है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ३२०-२१

साधन और साध्य

लोग कहते हैं, 'आखिर साधन तो साधन ही हैं |' मैं कहूँगा, 'आखिर तो साधन ही सब कुछ हैं |' जैसे साधन होंगे वैसा ही साध्य होगा | साधन और साध्य को अलग करनेवाली कोई दीवार नहीं है | वास्तव में सृष्टिकर्ता ने हमें साधनों पर नियंत्रण (और वह भी बहुत सीमित नियंत्रण) दिया है, साध्य पर तो कुछ भी नहीं दिया | लक्ष्य-सिद्धि ठीक उतनी ही शुद्ध होती है जितने हमारे साधन शुद्ध होते हैं | यह बात ऐसी है जिसमें किसी अपवाद की गुंजाइश नहीं |

यंग इंडिया, १७-७-१९२४

राजनीति

सार्वत्रिक और सर्वव्यापी सत्य की भावना का प्रत्यक्ष दर्शन करने के लिए हममें छोटे से छोटे जीव से अपनी ही तरह प्रेम करने का सामर्थ्य होना चाहिए | और जो मनुष्य यह आकांक्षा रखता है वह जीवन के किसी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता | यही कारण है कि मेरी सत्यनिष्ठा मुझे राजनीति के मैदान में खींच लाई है; और मैं जरा भी संकोच किये बिना और फिर भी पूरी नम्रता के साथ कह सकता हूँ कि जो लोग यह कहते हैं कि राजनीति से धर्म का कोई वास्ता नहीं वे नहीं जानते कि धर्म का अर्थ क्या है |

आत्मकथा (अंग्रेजी) १९४८; पृ० ६१५

मेरे लिए धर्मरहित राजनीति बिलकुल गन्दी चीज़ है, जिससे हमेशा दूर रहना चाहिए | राजनीति का राष्ट्रों के हित से सम्बन्ध है | और जिस चीज़ का सम्बन्ध राष्ट्रों के हित से है उसके साथ उस मनुष्य का सम्बन्ध होना ही चाहिए, जिसकी धार्मिक वृत्ति हो या दूसरे शब्दों में जो ईश्वर और सत्य का शोधक हो | मेरे लिए ईश्वर और सत्य समानार्थक शब्द हैं | और अगर कोई मुझे कहे कि ईश्वर असत्य

या अत्याचार का ईश्वर है, तो मैं उसकी पूजा करने से इनकार कर दूँगा | इसीलिए राजनीति में भी हमें स्वर्ग का राज्य स्थापित करना होगा |

यंग इंडिया, १८-६-१९२५

जब तक मैं सारी मानव-जाति के साथ एकता सिद्ध न कर लूँ, तब तक मैं धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता; और यह हो नहीं सकता यदि मैं राजनीति में भाग न लूँ| आज मनुष्य की सारी प्रवृत्तियाँ एक अविभाज्य वस्तु बन गई हैं | आप सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक कार्य को एक-दूसरे से असंबद्ध करके बिलकुल अलग-अलग विभागों में नहीं बाँट सकते | मैं मानवीय प्रवृत्ति से अलग किसी धर्म को नहीं जानता | उससे अन्य सब प्रवृत्तियों को नैतिक आधार मिलता है, जो और किसी तरह से नहीं मिलता और जिसके बिना जीवन 'निरर्थक शोरगुल' बन जाता है |

हरिजन, २४-१२-१९३८

प्रारब्ध

प्रश्न: क्या प्रत्येक व्यक्ति के लिए भगवान पहले से ही मृत्यु का समय, स्थान और ढंग मुकर्रर कर देता है ? ऐसी बात हो तो हम बीमार पड़ने पर भी चिन्ता क्यों करें ?

उत्तर: यह तो मैं नहीं जानता कि मृत्यु का समय, स्थान और ढंग पहले से निश्चित होता है | मैं इतना ही जानता हूँ कि 'भगवान की मर्जी के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता |' इसका भी मुझे धुंधला-सा ही ज्ञान है | जो चीज़ आज धुंधली है वह भक्तिपूर्ण प्रतीक्षा से कल या परसों साफ हो जायेंगी | लेकिन यह बिलकुल स्पष्ट हो जाना चाहिए कि सर्वशक्तिमान परमात्मा हमारे जैसा कोई व्यक्ति नहीं है | वह बड़ी से बड़ी चेतन-शक्ति या नियम है | इसीलिए वह न मनमानी करता है और न उस नियम में किसी संशोधन या सुधार की गुंजाइश है | उसकी इच्छा निश्चित और अपरिवर्तनीय है, बाकी सब चीज़ें हर वक्त बदलती रहती हैं | अवश्य ही प्रारब्ध के सिद्धान्त से यह नतीजा नहीं निकलता कि बीमारी में भी हम अपनी देखभाल की 'चिन्ता' न करें | बीमारी की लापरवाही बीमार पड़ने से भी बड़ा अपराध है | कल से आज और भी अच्छा करने की कोशिश का कोई अन्त नहीं है | हम बीमार क्यों हैं या क्यों हो गये, चिंता करके हमें इसका पता लगाना ही होगा | प्रकृति का नियम स्वास्थ्य है, बीमारी नहीं | हमें प्रकृति के नियमों की खोज़ करके उनका पालन करना चाहिए | तब हम बीमार नहीं पड़ेंगे या पड़ भी गये तो अच्छे हो जायेंगे |

हरिजन, २८-७-१९४६

प्रगति

विकास सदा प्रयोगात्मक होता है | ग़लतियाँ करने और उनको ठीक करने से ही सब प्रकार की प्रगति होती है | कोई भलाई ईश्वर के हाथों घड़ी-घड़ाई नहीं आती, परन्तु हमको ही बार-बार प्रयोग करके और बार-बार असफलताएँ सहकर पैदा करनी होती है | यह व्यक्तिगत विकास का नियम है | सामाजिक और राजनीतिक विकास भी इसी नियम के अधीन हैं | भूल करने का अधिकार, जिसका अर्थ प्रयोग करने की स्वतंत्रता है, सभी प्रकार की प्रगति की सार्वत्रिक शर्त है |

'स्पीचेज़ एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी' (१९३३); पृ॰ २४५

राष्ट्रों ने विकास और क्रांति दोनों तरीकों से तरक्की की है | एक की जितनी ज़रूरत है उतनी ही दूसरी की है | मृत्यु, जो एक शाश्वत सत्य है, क्रान्ति है और जन्म व उसके बाद की स्थिति धीमा और निश्चित विकास है | मनुष्य के विकास के लिए जीवन जितना ज़रूरी है उतनी ही मृत्यु ज़रूरी है | संसार में जितने क्रान्तिकारी हुए हैं या होंगे, उनमें ईश्वर सबसे बड़ा है | जहाँ क्षण भर पहले शांति होती है वहाँ वह तूफान भेज देता है | जिन पहाड़ों को वह अत्यंत सावधानी और अनन्त धैर्य से बनाता है, उन्हें वह ज़मीन से मिलाकर समतल कर देता है | मैं आकाश को निहारता हूँ तो वह मुझे भय और आश्चर्य से भर देता है | भारत और इंग्लैण्ड दोनों के शांत नीले आकाश में मैंने बादलों को इकट्ठा होते और इतनी भीषणता से गरजते और बरसते देखा है कि मैं दंग रह गया हूँ | इतिहास कथित क्रमबद्ध प्रगति की अपेक्षा अद्‌भुत क्रान्तियों का लेखा अधिक है |...

यंग इंडिया, २-२-१९२२

पुनर्जन्म

मैं पूर्वजन्म और पुनर्जन्म को माननेवाला हूँ | हमारे सारे सम्बन्ध पूर्वजन्म से प्राप्त संस्कारों के परिणाम हैं | ईश्वर के नियम दुर्बोध हैं और अनन्त खोज़ के विषय हैं | उनकी गहराई का कोई पता नहीं लगा सकेगा |

हरिजन, १८-८-१९४०

धार्मिक शिक्षा

मैं नहीं मानता कि धार्मिक शिक्षा की योजना करना राज्य का काम है या कि उसकी योजना वह सफलतापूर्वक कर सकता है | मैं मानता हूँ कि धार्मिक शिक्षा एकमात्र धार्मिक संस्थाओं का ही काम होना चाहिए | धर्म और नीतिशास्त्र को मिला न दीजिए | मैं मानता हूँ कि बुनियादी नीतिशास्त्र सब धर्मों में एक सा है | बुनियादी नीतिशास्त्र की शिक्षा देना बेशक राज्य का काम है | धर्म से मेरे दिमाग में बुनियादी नीतिशास्त्र नहीं आता, मगर वह चीज़ आती है जिसे पंथवाद कहा जाता है | हम राज्य द्वारा

सहायता-प्राप्त धर्म से और राज्य द्वारा समर्थित धर्म-संस्था से काफी कष्ट भोग चुके हैं | जो समाज या समूह अपने धर्म के अस्तित्व के लिए राज्य पर थोड़ा या पूरा आधार रखता है उसका कोई धर्म नहीं होता या यों कहें कि उसके धर्म को सच्चे अर्थ में धर्म नहीं कहा जा सकता |

यह सत्य इतना स्पष्ट है कि उसके समर्थन में मुझे कोई दृष्टांत देने की ज़रूरत नहीं मालूम होती |

हरिजन, ३१-८-१९४७

धार्मिक आदर्श

...किसी धार्मिक आदर्श की खूबी ही इस बात में है कि वह शरीर द्वारा पूरी तरह सिद्ध नहीं किया जा सकता | कारण, कोई भी धार्मिक आदर्श श्रद्धा द्वारा प्रमाणित होना चाहिए | और श्रद्धा कैसे काम कर सकती है, यदि आत्मा 'मिट्टी के नाशवान पुतले' से घिरी रहकर भी संपूर्णता को प्राप्त कर ले ? अनन्त विस्तार उसका विशिष्ट धर्म है | शरीरबद्ध होते हुए उसके लिए गुंजाइश ही कहाँ होगी ? यदि मर्त्यलोक के प्राणी शरीरस्थ होते हुए भी संपूर्णावस्था में पहुँच जाएँ तो फिर आदर्श के खातिर सतत प्रयत्न करने के लिए – निरन्तर खोज़ करने के लिए जगह ही कहाँ रहेगी ? अगर शरीर में रहकर इतनी आसानी से संपूर्णता संभव हो, तो हमें किसी घड़े-घड़ाये नमूने का अनुसरण करना ही रह जायेगा | इसी प्रकार यदि सबके लिए एक संपूर्ण आचारशास्त्र संभव हो, तो फिर भिन्न-भिन्न धर्मों और मत-पन्थों के लिए कोई गुंजाइश नहीं होगी, क्योंकि एक ही नपा-तुला धर्म होगा जिस पर सबको चलना पड़ेगा |

यंग इंडिया, २२-११-१९२८

आदर्श की खूबी यह होती है कि वह अनन्त होता है | परन्तु यद्यपि धार्मिक आदर्श होते ही ऐसे हैं कि अपूर्ण मानव-प्राणी उन्हें पूरी तरह नहीं पा सकते, यद्यपि अपनी अनन्ता के गुण के कारण जितने हम उनके नजदीक जायें, उतने ही वे हमसे सदा दूर जाते दिखाई देते हैं, फिर भी वे हमारे हाथ-पैरों से भी हमारे अधिक निकट हैं | क्योंकि हमें अपने भौतिक अस्तित्व से भी उनकी वास्तविकता और सत्यता का अधिक विश्वास होता है | अपने आदर्शों में यह श्रद्धा ही सच्चा जीवन है, असल में यही मनुष्य का सर्वस्व है |

यंग इंडिया, २२-११-१९२८

अधिकार

अधिकारों का सच्चा स्रोत कर्तव्य है | अगर हम सब अपने कर्तव्य पूरे करें तो अधिकारों को ढूँढ़ने कहीं दूर नहीं जाना पड़ेगा | अगर कर्तव्यों को अधूरा छोड़कर हम अधिकारों के पीछे दौड़ेंगे तो वे मृगजल की तरह कभी हमारी पकड़ में नहीं आयेंगे | हम जितना ही उनका पीछा करेंगे, उतने वे हमसे

दूर भागेंगे | यही उपदेश श्रीकृष्ण के इन अमर शब्दों में मूर्तिमान हुआ है : 'तुझे कर्म करने का ही अधिकार है | फल का तू विचार ही छोड़ दे |' कर्म कर्तव्य है; फल अधिकार है |

यंग इंडिया, ८-१-१९२५

गुप्तता

मैं गुप्तता को पाप समझने लगा हूँ | ...अगर हम अच्छी तरह समझ लें कि हम जो कुछ कहते और करते हैं उस सबका ईश्वर साक्षी होता है, तो हमारे लिए संसार में किसी से भी कोई चीज़ छिपाने को नहीं रहेगी | कारण हम अपने प्रभु के सामने अपवित्र विचार करेंगे ही नहीं, कहने की तो बात ही क्या ? अपवित्रता ही गुप्तता और अंधकार ढूँढ़ती है | मानव-स्वभाव की प्रवृत्ति गंदगी को छिपाने की होती है | हम गंदी चीज़ों को देखना या छूना नहीं चाहते | हम उन्हें अपनी आँखों से ओझल कर देना चाहते हैं | और यही बात हमारी वाणी की होनी चाहिए | मेरा कहना यह है कि हम जिन विचारों को संसार से छिपाना चाहें उन्हें सोचने से भी हमें परहेज करना चाहिए |

यंग इंडिया, २२-१२-१९२०

पाप

मैं अपने पापों के परिणाम से अपनी रक्षा नहीं चाहता; मैं तो स्वयं पाप से या यों कहिये कि पाप के विचार तक से अपना उद्धार चाहता हूँ| जब तक मैं उस लक्ष्य तक पहुँच नहीं जाता तब तक मैं बेचैनी से ही संतोष कर लूँगा |

'महात्मा गांधीज़ आइडीयाज़' (१९३०); पृ० ७०

ईश्वर की नज़र में पापी सन्त के ही बराबर है | दोनों को समान न्याय मिलेगा और दोनों को आगे बढ़ने या पीछे हटने का समान अवसर मिलेगा | दोनों उसकी सन्तान हैं, उसकी सृष्टि हैं | जो सन्त अपने को पापी से श्रेष्ठ समझता है, वह अपना सन्तपन खो देता है और पापी से भी बुरा बन जाता है; क्योंकि पापी को यह ज्ञान नहीं है कि वह क्या कर रहा है, जबकि संत को है या होना चाहिए |

हरिजन, १४-१०-१९३३

मैंने अपने अनेक पापों को बिलकुल खुले तौर पर मंजूर किया है | परन्तु मैं उनका भार अपने कंधों पर लिये नहीं फिरता | अगर मैं ईश्वर की ओर बढ़ रहा हूँ, जैसा कि मैं अनुभव करता हूँ, तो मैं सुरक्षित हूँ| कारण, मुझे उसकी मौजूदगी की गरमी महसूस हो रही है | मैं मानता हूँ कि मेरे संयम, उपवास और प्रार्थनाओं आदि का कोई मूल्य नहीं, अगर मैं अपने सुधार के लिए उन पर आधार रखूँ| परन्तु यदि,

जैसी मुझे आशा है, वे एक ऐसी आत्मा की तड़पन के प्रतीक हैं, जो अपने प्रभु की गोद में अपने थके-माँदे मस्तक को रखकर सो जाने की कोशिश कर रही है, तो उनका अकल्पनीय महत्त्व है |

हरिजन, १८-४-१९३६

मृतात्माओं से संपर्क

मुझे मृतात्माओं से कभी सन्देश नहीं मिलते | ऐसे संदेशों के मिलने की संभावना में अविश्वास करने के लिए मेरे पास कोई प्रमाण नहीं हैं | परन्तु इस प्रकार के संपर्क रखने या रखने के प्रयत्न को मैं जरा भी पसन्द नहीं करता | अकसर वे भ्रमपूर्ण और कल्पना की उपज होते हैं | यदि यह मान लिया जाय कि इस प्रकार के वार्तालाप हो सकते हैं, तो भी यह क्रिया माध्यम और आत्मा दोनों के लिए हानिकारक है | इससे बुलाई हुई आत्मा पृथ्वी की ओर आकर्षित होकर उसके बंधन में फँसती है, जबकि उसकी कोशिश संसार से अनासक्त रहने और ऊँचे उठने की होनी चाहिए | आत्मा शरीर छोड़ने से ही अधिक शुद्ध नहीं हो जाती | वह अपने साथ वे सब कमजोरियाँ ले जाती हैं जो पृथ्वी पर उसमें थीं | इसीलिए यह ज़रूरी नहीं कि उसकी दी हुई जानकारी या सलाह सही या ठीक ही हो | आत्मा को सांसारिक प्राणियों से संपर्क रखना पसन्द है, यह कोई खुशी की बात नहीं | इसके विपरीत, उसे ऐसी ग़लत आसक्ति से छुड़ाना चाहिए | यह तो हुई आत्माओं को होनेवाली हानि की बात |

यंग इंडिया, १२-९-१९२९

रही बात माध्यम की | मैं निश्चयपूर्वक जानता हूँ कि मेरे अनुभव में आये हुए ऐसे व्यक्ति जब तक मृतात्माओं से संपर्क साधने का यह काम सचमुच करते रहे या इस भ्रम में रहे, तब तक उनका दिमाग बिगड़ा हुआ या कमजोर रहा और वे व्यावहारिक कार्य के अयोग्य रहे | मुझे अपने किसी मित्र के बारे में यह याद नहीं कि उसे इस प्रकार के संपर्क से कुछ भी लाभ हुआ हो |

यंग इंडिया, १२-९-१९२९

अन्धविश्वास

ज्यों ही हम सच्चा और सरल जीवन व्यतीत करना शुरू कर देते हैं, त्यों ही अन्धविश्वास और अवांछनीय बातें चली जाती हैं | लोगों के विश्वास को सुधारना मेरा काम नहीं | मैं तो उन्हें सदाचारी बनने को कहता हूँ | ज्यों ही वे ऐसा करने लगते हैं, उनका विश्वास अपने आप ठीक हो जाता है |

यंग इंडिया, ११-८-१९२७

संग्रह में दिये गये उद्धरणों के मूल स्रोत

आत्मकथा (अंग्रेजी): ले. गांधीजी | नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – १४; आवृत्ति १९४८ |

इंडियाज केस फॉर स्वराज: आवृत्ति १९३२ |

एथिकल रिलीजन: ले० गांधीजी | एस० गांधीजी | एस० गणेशन्, मद्रास, १९२७ |

दक्षिण आफ्रिका का सत्याग्रह (सत्याग्रह इन साउथ आफ्रिका): ले० गांधीजी | नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – १४ |

दि बॉम्बे क्रोनिकल: बम्बई से निकलनेवाला अंग्रेजी दैनिक |

दि मॉडर्न रिव्यू: कलकत्ता से निकलनेवाला अंग्रेजी मासिक |

दि नेशन्स वाईस: नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – १४; आवृत्ति १९४७ |

मंगल-प्रभात (फ्रोम यरवडा मंदिर): ले० गांधीजी | नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – १४; आवृत्ति १९४५ |

महात्मा गांधी: गणेश एंड कम्पनी, मद्रास, १९१८

महात्मा गांधीजी आइडीयाज: ले० सी० एफ० एन्ड्रूज | एलेन एंड अनविन, लन्दन, १९३० |

यंग इंडिया: गांधीजी के संपादकत्व में अहमदाबाद से निकलनेवाला अंग्रेजी साप्ताहिक (१९१९-१९३२)

स्पीचेज़ एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी: जी० ए० नटेसन्, मद्रास (चौथी आवृत्ति), १९३३ |

हरिजन: अंग्रेजी साप्ताहिक | संस्थापक: महात्मा गांधी |

हिन्द स्वराज (अंग्रेजी): ले० गांधीजी | नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद – १४; आवृत्ति १९४६